[जैन रामायण का पांचवा भाग]

युद्ध और मुक्ति

श्री विश्वकल्याण प्रकाशन
जयपुर

द्वारा-योजित हिन्दी-साहित्य प्रकाशन
की पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत

१४वीं किताब

लेखक
मुनिश्री भद्रगुप्तविजयजी

प्रकाशक :

श्री [illegible] प्रकाशन

[illegible] जैन [illegible],

[illegible] जयपुर [illegible]

[illegible] :

[illegible] जैन

[illegible]

वि. सं. २०३८,

[illegible] मूल्य : [illegible]

[illegible]

[illegible]

मुद्रक :

अजन्ता प्रिन्टर्स

जौहरी बाजार,

जयपुर-३

प्रकाशकीय

"गति नहीं, प्रगति चाहिए !" पूज्य गुरुदेव श्री ने हमको यह मंत्र दिया था, हमें इतनी श्रद्धा नहीं थी कि हम इस साहित्य प्रकाशन योजना में इतनी सरलता से सफलता पायेंगे ! हम आज प्रसन्न हैं। चौथे वर्ष की दो किताब हम साथ-साथ प्रकाशित कर रहे हैं''''जैन रामनारायण का चौथा भाग वनवास, और पांचवां भाग युद्ध और मुक्ति।

"युद्ध और मुक्ति" का गुजराती से हिन्दी भाषा में रूपांतर किया है श्रीयुत जसराज सिंघी (प्रधान अध्यापक राजकीय माध्यमिक विद्यालय घाणेराव राजस्थान) ने ! आपका हार्दिक सहयोग श्री विश्व-कल्याण प्रकाशन को प्राप्त हो रहा है, हम आपको हार्दिक धन्यवाद देते हैं।

इस किताब के प्रकाशन के साथ पंचवर्षीय योजना की १४ किताबें प्रकाशित हो गईं ! अब मात्र छः किताबों का प्रकाशन शेष रहा है। हमें श्रद्धा है कि अब हमारा कार्य सम्पूर्ण होके रहेगा, परमात्मा जिनेश्वर देव की अचिन्त्य कृपा से कौनसा काम नहीं होता है ?

फाल्गुन सुदी-१३,
वि० सं० २०२८।

मानद मंत्री

अनुक्रमणिका

श्री विश्व कल्याण प्रकाशन का संचालक मंडल

प्रधान संचालक :

१.	श्री हीराचन्द वैद	जयपुर
२.	,, पारसमल कटारिया (शिवगंज)	,,

अन्य सदस्य :

३.	श्री किस्तूरमल जी शाह	जयपुर
४.	,, हीराचन्दजी एम. शाह भण्डार वाले	,,
५.	,, जतनमल जी लुणावत	,,
६.	,, रणजीतसिंह जी भण्डारी	,,
७.	,, शंकरलाल जी मुणोत	ब्यावर
८.	,, भँवरलाल जी राका	,,
९.	,, दिवानसिंह जी बाफना	उदयपुर
१०.	,, मुन्दफलाल जी दलाल	,,
११.	,, मदनलाल जी खींवसरा	गोविंदगढ़
१२.	,, लालचन्द जी छगनलाल जी पिडवाड़ा वाले	बम्बई
१३.	,, पी० सी० चौपड़ा	रतलाम
१४.	,, पारसमल जी सर्राफ	बिलाडा
१५.	,, तेजराज जी भंसाली	पिपाड़

श्री विश्व कल्याण प्रकाशन के प्रर्वतक



मुनिश्री भद्रगुप्त विजयजी महाराज साहेब

महान् तपस्वी

मुनिश्री जयकुञ्जर विजयजी महाराज साहेब



आपके सद् प्रयत्न से दक्षिण भारत में विश्व कल्याण प्रकाशन का संदेश गूँज रहा है।

१

विभीषण

रावण के अन्तःपुर में चन्द्रनखा के रुदन ने सब को गमगीन बना दिया था। पुत्र सुंद के साथ चन्द्रनखा पाताल लंका से लंका में भाग आई थी।

रावण को देखते ही चन्द्रनखा उसके गले चिपक गई और फूट २ कर रोने लगी।

'भाई! मैं मारी गई""दुष्ट दैव ने मेरा सर्वस्व लूट लिया। पुत्र मारा गया, पति की हत्या हुई, दो देवर भी यमदरबार में पहुंच गए—चौदह हजार वीर सिपाही भी रण में काम आ गए—'

रावण स्तब्ध होकर चन्द्रनखा की बात सुनता रहा।

'सहोदर! अभिमानी और विश्वविजेता जैसा तू जीवित है और तेरी यह वहिन दर २ भटकती भिखारिन हो गई"" पाताल लंका भी गई""एक पुत्र और दूसरा अपना प्राण लेकर, तेरी शरण में आई हूँ""मेरी रक्षा कर""मैं कहाँ रहूँ?'

'चन्द्रे! वास्तव में तुझ पर दुःख के पर्वत टूट पड़े""परन्तु वहिन! तू यहाँ सुख से रह, तेरे पति और पुत्रों के हत्यारे की मैं अल्प समय में ही हत्या कर डालूँगा।'

रावण ने अपने उत्तरीय वस्त्र से चन्द्रनखा के आँसू पोंछ डाले और उसे खूब आश्वासन दिया। चन्द्रनखा को रहने के लिए रावण ने एक महल दिया और रावण अपने आवास गृह में आया।

रावण के चित्त में बड़ी उथल पुथल मच रही थी। एक ओर सीता का मोह, सीता का रूप⋯सीता का सहवास, रावण को व्याकुल कर रहा था। सीता के मोह में वह मूढ़ बन गया था। सीता का रूप उसे रात-दिन सता रहा था, सीता का सहवास प्राप्त करने की उसकी तीव्र इच्छा ने रावण को हत-बुद्धि बना दिया था।

मंदोदरी ने आवासगृह में प्रवेश किया। उसने लंकापति की दीनहीन स्थिति देखी, कभी भी उसने अपने स्वामी को ऐसा अस्वस्थ नहीं देखा था। वह रावण के पास जाकर खड़ी हुई⋯ पति के निश्चेष्ट जैसे शरीर की पीठ पर हाथ फेरती मंदोदरी बोली :

'नाथ ! आज इतनी अधिक उदासीनता क्यों !'

रावण मौन रहा। आँखें बंद थी। दोनों हाथों के बीच मस्तक नवांकर शून्यता में प्रविष्ट हो रहा था। मंदोदरी ने उसे हिलाया।

'लंकापति को ऐसी कौनसी चिंता सता रही है ?'

रावण ने आँखें खोली⋯परन्तु ऊँची न कर सका। उसने कहा :—

'देवी, क्या कहूँ ? वैदेही का विरह असह्य बन गया है। मेरे अंग शिथिल हो रहे हैं⋯मैं बोल नहीं सकता, न तुझे आँखें

उठाकर देख सकता—मेरे मन में सीता""सीता""' रावण ने आँखें बंद कर दीं और वह पलंग में धँस गया। मंदोदरी रावण की व्यथा जानती थी, परन्तु काम की ऐसी विडम्बना में रावण फँसेगा, ऐसी कल्पना उसे न थी। वह चुपचाप वहाँ खड़ी रही।

रावण मंदोदरी का हाथ पकड़कर, पागल की भाँति बोल उठा :

'तू मुझे जीवित रखना चाहती है, मंदोदरी ? तो तू मान का त्यागकर वैदेही के पास जा उसे समझा—वह मुझे चाहने लगे""मुझे उसका चिर-सहवास प्राप्त हो—तू इतना भी मेरा काम न करेगी ? तू मेरे लिए इतना भी त्याग नहीं करेगी ?

मंदोदरी विचारमग्न हो गई।

'देवी ! तू जानती है कि मैंने गुरु-साक्षी में प्रतिज्ञा ली है कि परस्त्री-जो मुझे चाहती न हो, उस पर मैं कभी भी बलात्कार नहीं करूँगा""' बस, यह नियम ही मेरे लिए बाधक हो रहा है""परन्तु मैं भी इस नियम का तो पालन करूँगा ही। मैं वैदेही के साथ बलात्कार करना नहीं चाहता।

मंदोदरी कुलीन थी। पति की पीड़ा से वह पीड़ित हो रही थी। उसने पति के लिये वैदेही को समझाने का कार्य स्वीकार किया और वहाँ से सीधी ही देवरमण उद्यान में आई।

मंदोदरी ने जाने के बाद रावण को कुछ आशा दिखाई दी, परन्तु उसका अन्तःकरण साक्षी नहीं दे रहा था।

उसका अन्तःकरण तो कहता था कि 'वैदेही कदापि नहीं

मानेगी ।' खैर, मंदोदरी क्या समाचार लाती है, इसी प्रतीक्षा में वह अपने भवन में चक्कर काटने लगा ।

देवरमण उद्यान को रावण ने स्वर्ग का नंदनवन बना दिया था । अनेक स्त्री परिचारिकाएँ सीता की सेवा में रक्खी गई थीं । उद्यान के द्वारों पर सशस्त्र सिपाही तैनात किए गए थे । मंदोदरी का रथ उद्यान के द्वार पर पहुँचा, द्वाररक्षकों ने मस्तक झुकाकर सत्कार किया, परिचारिकाओं ने 'देवी मंदोदरी की जय हो' कहकर अभिवादन किया । मंदोदरी रथ से उतरी और अशोकवृक्ष के नीचे जहाँ सीताजी का निवास था, वहाँ आई । परिचारिकाओं ने मंदोदरी का परिचय दिया । मंदोदरी जमीन पर सीता के सामने बैठी, और क्षणभर विश्रामकर बोली :

'वैदेही ! मैं एक प्रार्थना करने आई हूँ ।'

सीता ने उत्तर में मात्र मंदोदरी की ओर देखा ।

'मैं तेरी दासी बनने के लिये तैयार हूँ, यदि तू मेरी एक बात मान ले तो....' सीता ने कोई प्रत्युत्तर नहीं दिया ।

'तू जानती है कि मैं दशानन की पटरानी हूँ....मैं अपना स्वमान छोड़कर तुझसे प्रार्थना करने आई हूँ....वैदेही, तू लंका-पति के हृदय में बस गई है....तेरे बिना दशानन दीन-हीन बन गए हैं....वे तेरे चरणों में सर्वस्व अर्पण करने के लिये तैयार हैं—तू उनकी बात मान ले । वास्तव में तू धन्य है—विश्वसेव्य मेरा स्वामी तेरे चरणों में लोटने के लिए अधीर बना है....और तू तपस्वी राम की आशा अब छोड़ दे....तपस्वी राम की अपेक्षा बहुत अधिक सुख तुझे दशानन देगा । जंगल में भटकते....'

'बस कर·····' सीताजी ने अपने दोनों हाथ कान पर दे दिये। उसका मुख क्रोध से तमतमा उठा, उसके साँस की गति तीव्र हो गई।

'कहाँ गीदड़ जैसा तेरा पति और कहाँ सिंह सदृश श्री राम! कहाँ कौए जैसा तेरा स्वामी और कहाँ हंस जैसे राम···तू बस कर। तुम दंपति-एक जैसी जोड़ी मिली है। परस्त्री के साथ क्रीडा करने में उत्सुक तेरे पति की तू दूती बन कर आई है? जा, चली जा यहाँ से। तेरा चेहरा देखने में भी पाप लगता है···तो फिर बोलने की तो बात ही कहाँ? तू मेरे दृष्टि पथ में से दूर हट जा·····'

सीता ने अपना मुख फेर लिया।

'मंदोदरी लौटी नहीं, क्या हुआ होगा' रावण अधीर हो गया। वह देवरमण उद्यान में आ पहुँचा। मंदोदरी और सीता का वार्तालाप सुनकर उसे आशाओं पर पानी फिरता दिखाई दिया।

उसने सीता से कहा:

'सीते! कोप न कर; मंदोदरी तेरी दासी है। लंका की और लंकापति दशानन के हृदय की सम्राज्ञी है। मैं भी तेरे चरणों का दास हूँ। देवी जानकी! मुझ पर दया करो····इस व्यक्ति को तू अपनी दृष्टि से देख तो सही····तेरे बिना मैं कितना दुःखी हूँ···तेरी प्रेम पूर्ण दृष्टि का मैं अभिलाषी हूँ····तेरे सुखद स्पर्श के लिये मैं अधीर हो रहा हूँ····।'

रावण घुटनों पर बैठ गया। महासती सीता ने अपना मुख फेरकर सिंहनी की भांति दहाड़कर कहा—

'अरे दुष्ट ! कृतांत काल की क्रूर दृष्टि तुझ पर पड़ी ही है''''जब से तूने राम पत्नी का अपहरण किया है तब से भीषण काल के ओले तेरे चारों ओर छा गए हैं''''धिक्कार हो तेरी आशा को''''कालसदृश श्रीराम और लक्ष्मण के सामने तू कितना टिकने वाला है ?'

'वैदेही''''प्रिये ! तू ऐसे वचन न बोला, मैं तुझे बहुत चाहता हूँ, और मुझे कोई परवाह नहीं, भय नहीं''''बस, तू मेरे अन्तःपुर में आजा''''मेरे हृदय पर तेरे एक छत्र साम्राज्य की स्थापना कर दे—मेरे लिये वह स्वर्ग होगा''''मेरे लिये वह नंदन वन होगा''''

सीताजी ने कठोर शब्दों में रावण को दुत्कार कर निकाला फिर भी रावण वासना के ववंडर में ऐसा उलझ गया था कि वह राग के प्रलाप करता ही रहा 'कामावस्था बलीयसी' कामपरवशता वास्तव में बलवान होती है।

सूर्य अस्त हुआ।

रावण राग और क्रोध में अँधा हो रहा था।

प्रार्थना, गिड़गिड़ाहट और दीनता करने पर भी सीता ने जब उसे अस्वीकार किया तब रावण क्रोध से तमतमा उठा। उसने सीता को भयभीत कर वश में करने का विचार किया। रावण अनेक विद्याओं को जानता था। घोर अँधकार छा गया।

निशा ने भयानक रूप धारण किया। कुछ ही क्षण पूर्व का नंदनवन जैसा देवरमण उद्यान भयंकर दानवों का क्रीडा-स्थल बन गया''''पिशाच नाचने लगे, प्रेत और वेताल अट्टहास्य

करने लगे। भूत दौड़ने लगे। काले सांप और भीमकाय सिंहों से उद्यान भरने लगा।

परन्तु महासती असहाय न थीं।

उन्होंने श्री 'नवकार-महामंत्र' का ध्यान लगाया।

कोई भय नहीं, कोई धड़कन नहीं, कोई दीनता नहीं, न कोई विवशता थी।

रावण ने सारी रात उपद्रव जारी रक्खे। सीताजी नें सारी रात धीरता तथा स्वस्थता से श्री नमस्कार महामंत्र का ध्यान जारी रक्खा। रावण का दाव निष्फल गया और उधर प्रभात हो गया।

रावण ने लीला समेट ली।

परन्तु दूसरी ओर रावण की इस लीला ने उद्यान की परिचारिकाओं को भयभीत कर दिया। बहुत सी परिचारिकाओं की सीताजी के प्रति सहानुभूति थी। रावण ने जब उपद्रवों से सीताजी को डराकर वश में करने का प्रयोग शुरू किया तब कई परिचारिकाएँ उद्यान में से भाग निकलीं। एक परिचारिका ने सोचा : "बिचारी असहाय सीता पर लंकापति कैसा भयंकर अत्याचार कर रहा है? इसके अन्तःपुर में स्त्रियों का कोई अभाव नहीं""फिर भी इस पवित्र महासती को कैसी फँसा रक्खी है? क्या महाराजा विभीषण इस बात से अनभिज्ञ होंगे? इस राक्षस कुल में एकमात्र विभीषण ही न्यायी और पवित्र पुरुष हैं। मुझे उन्हें सूचना देनी चाहिये।"

परिचारिका महाराजा विभीषण के राजमहल में पहुँची। विभीषण महल की अट्टालिका में खड़े-खड़े लंका की रात्रि शोभा

देख रहे थे। परिचारिका को घबराई हुई तथा दौड़ती आती देखकर विभीषण स्वयं नीचे उतर आए। परिचारिका ने प्रणाम किया।

"महाराजा!" परिचारिका ने आसपास देखा भयभीत दृष्टि से। विभीषण ने कहा—

'तू निर्भय है. तुझे जो कुछ कहना हो वह कह डाल।'

महाराजा! 'देवरमण उद्यान का कांड तो आप से परिचित होगा?'

'नहीं, मैं कुछ भी नहीं जानता।'

'महाराजा दशानन एक पवित्र स्त्री का अपहरण कर लाए हैं.....उसे वश में करने के लिये आज मंदोदरी भी अंतिम प्रहर में आई थीं। स्त्री बड़ी ही दृढ़ और निर्भय है। महाराजा की माँग को ऐसे कठोर शब्दों में दुतकार कि—

'तू क्या कहती है? विभीषण सीता-अपहरण से लगाकर आज दिन तक बिल्कुल ही अनभिज्ञ थे। रावण की व्यक्तिगत बातों में वे सिर पच्ची करते ही न थे।

'इस स्त्री का नाम?'

'वैदेही सीता.....'

पति का नाम?'

'यह स्त्री बस सारे दिन श्रीराम-श्रीराम करती रहती है.... इससे लगता है इसके पति का नाम 'श्रीराम' होना चाहिये। राजन्! आज सूर्यास्त होने के बाद तो देवरमण उद्यान भूत-प्रेत और पिशाचों की क्रीडभूमि बन गया है। इस सती स्त्री

को डराकर वश में करने के लिये महाराजा दशानन ने भारी जुल्म ढा रक्खा है।'

'ठीक ! तू जा। मैं अब इस सम्बन्ध में यथोचित कदम उठाऊँगा।'

परिचारिका वहाँ से तेजी से चली गई""क्षण भर विभीषण वहीं का वहीं खड़ा रह गया—

विभीषण का मन विह्वल बन गया। राक्षसकुल में ऐसा अपकृत्य अब से पूर्व किसी ने किया न था। ऐसे कृत्य से विभीषण को बड़ा खेद और उद्वेग हुआ। उसने प्रत्यक्ष में ही सीताजी से मिलने का निश्चय किया। उसे नींद न आई। सारी रात उसने विचारों में काटी।

प्रातः हुआ। विभीषण रथ में बैठकर देवरमण उद्यान में आ पहुँचा। दशमुख रावण वहीं बैठा था। विभीषण सीताजी के पास आया, और एक ओर बैठकर उसने सीताजी से पूछा :

'भद्रे ! मैं परस्त्रीसहोदर विभीषण हूँ। तू मुझे बता तू कौन है ? कहाँ से आई है ? किसकी पत्नी है ? अपना परिचय मुझे दे।

सीताजी ने विभीषण के स्नेहपूर्ण वचन सुने। उन्हें लगा कि 'यह मध्यस्थ पुरुष हैं। उन्होंने नीची दृष्टि से विभीषण से कहा :

'भाई ! मैं मिथिलापति राजा जनक की पुत्री हूँ, भामंडल की बहिन हूँ। श्रीराम मेरे पति हैं। महाराजा दशरथ की पुत्र-वधू हूँ। पति और देवर लक्ष्मण के साथ मैं दण्डकारण्य

आई थी। मेरे देवर लक्ष्मण एक दिन घूमते-घूमते दण्डकारण्य में एक वाँस के जाल के पास पहुँचे। उन्होंने वहाँ आकाश में लटकता खड्ग देखा। कुतुहलवश उन्होंने खड्ग अपने हाथ में लिया, खड्ग को घुमाकर उन्होंने वाँस के जाल पर प्रहार किया। उस वाँस के जाल में रहे हुए किसी साधक का सिर कट गया""मेरे देवर को पता चला""खड्ग खून में लिप्त हो गया था, उन्होंने सोचा–'किसी निरपराधी मनुष्य का मेरे हाथों खून हो गया""' उन्हें बड़ा दुःख हुआ। वे अपने अग्रज के पास आए और जो घटना घटी थी उसका वर्णन कह सुनाया। इतने में खड्ग साधक की कोई उत्तर-साधिका स्त्री मेरे देवर के पद चिह्नों पर क्रोध से धमधमाती हुई जहाँ हम थे वहाँ आ पहुँची।

परन्तु उस स्त्री ने ज्यों ही मेरे पति का अद्‌भुत रूप देखा, वह काम वश हो गई""उसका क्रोध गायब हो गया""उसने मेरे पति के पास भोग की प्रार्थना की। मेरे पति ने उसका अनादर किया। वह क्रुद्ध होकर चली गई""परन्तु थोड़े ही समय में तो दण्डकाण्य सिपाहियों से उभरने लगा। मेरे अद्वितीय पराक्रमी देवर उस राक्षस सिपाहियों के साथ युद्ध करने आगे बढ़े। इस ओर इस दुष्ट ने (रावण की ओर इशारा करके। छल किया और मेरे पास रहे हुए मेरे स्वामी को दूर किया और मुझे विमान में डालकर यह यहाँ ले आया""सचमुच, इसने अपने वध हेतु-विनाश हेतु ही यह कार्य किया है—'

विभीषण के सामने सारी वस्तु स्थिति सत्य रूप में आ गई। उसने तत्काल निर्णय किया कि 'यह कृत्य अच्छा नहीं

हुआ""इसमें रावण का ही दोष है। विभीषण ने रावण की ओर देखा। दोनों हाथ जोड़कर मस्तक नवांकर रावण को प्रमाण कर कहा :..

'स्वामिन् ! अपने कुल को कलंकित करने वाला यह कृत्य आपने किया है। मेरा आपसे विनम्र अनुरोध है कि अभी भी जहाँ तक हमारा विनाश करने हेतु श्रीराम लक्ष्मण के साथ यहाँ नहीं आए, वहाँ तक सीता को उनके पास पहुँचा आओ। यही अब बिगड़ी हुई बात को सुधारने का उपाय है।'

विभीषण के हितकारी वचन सुनने की रावण की तैयारी ही कहाँ थी ! क्रोध से वह लाल पीला हो गया।

'कायर क्या बोलता है तू ? मेरे पराक्रम को तू भूल गया ? मेरी प्रार्थना स्वीकार कर सीता मेरी पत्नी बनेगी। वे राम लक्ष्मण यदि आए तो उनका वध करूँगा। तुझ जैसे भीरु की सलाह मुझे नहीं चाहिये।'

'भाई ! उन ज्ञानी पुरुष का वचन याद आता है क्या ? जरा याद करें—होश न खोएँ""उन ज्ञानी भगवत् ने कहा था : 'राम पत्नी सीता के कारण राक्षसकुल का नाश होगा—विनाश होगा""ज्येष्ठ बन्धु ! मैं आपके प्रति अनन्य श्रद्धा और प्रेम रखने वाला बन्धु हूँ""आप मेरी बात मानें""मैंने दशरथ का वध किया था""वह जीवित कैसे रह गया ? ज्ञानी के वचन मिथ्या करने मैं अयोध्या गया था""याद है ? वहाँ शयन गृह में सोए हुए दशरथ का वध करके मैं लंका आया""मैं ऐसा मानकर निश्चिन्त था कि दशरथ का वध हो चुका""अब राम का जन्म ही नहीं होगा""परन्तु मेरी मान्यता गलत सिद्ध हुई।

दशरथ के स्थान पर किसी अन्य का ही वध हो गया। दशरथ जीवित रहा। महाराजा ! जो होना निश्चित् होता है वही होकर रहता है—उसके अलावा नहीं होता····फिर भी मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि अपने कुल का विनाश रोकने के लिये आप सीता को छोड़ दें।'

रावण ने विभीषण की बात सुनी अनसुनी कर उस पर ध्यान नहीं दिया। विभीषण देखता ही रहा और रावण ने सीताजी को उठाकर पुष्पक विमान में डाल दिया तथा पुष्पक विमान को विशाल लंका पर उड़ाना शुरू किया।

'सीते ! देख यह मेरी लंका।'

रावण ने पुष्पक विमान कुछ नीचे किया और सीताजी को लंका दर्शन करवाकर, अपने वैभव-विभूति से मुग्धकर वश करने का पासा डालना शुरू किया।

'प्रिये ! देख ये क्रीडा शैल हैं। यहाँ क्रीडा करने के लिये देवता भी लालायित होते हैं। मेरे साथ इन क्रीडा शैलों पर तू देव दुर्लभ सुख प्राप्त करेगी और इन पर्वतों में से बहते हुए झरने देखे····इनका मीठा पानी अमृत को भी भुला देता है···· यह उद्यानों की दुनिया देख। यहाँ लंका की प्रजा जीवन की सफलता समझती है। ये जो रत्नों से मढ़े हुए और रंग विरंगी वेलों से घिरे हुए मंडप दिखाई देते हैं—ये रति वेश्म हैं। यहाँ युवानों के हृदय जुड़ते हैं। हे हंस गामिनी ! तू मेरी प्रार्थना मान ले और रतिवेश्म के वैभव-विलास और मादकता का आस्वाद ले।'

कामावेश के इन प्रलापों का प्रभाव सीताजी पर जरा भी न हुआ। रावण उन्मत्त होकर, कामावेश की तीव्रता का अनुभव करता हुआ सीताजी को रिझाने के लाख २ उपाय करता है""सीताजी श्रीराम के चरणों का स्मरण करती— अपूर्व धैर्य को धारण करती जरा भी विचलित नहीं होती हैं।

लंका के सभी सुरम्य स्थान बताकर रावण ने पुष्पक विमान देवरमण उद्यान में उतारा। सीताजी को वहाँ छोड़कर रावण अपने महल में गया।

रावण का मन खिन्न हो गय""परन्तु वह मानता था कि सीता की हठ कहाँ तक टिकने वाली है? आज नहीं तो कल-दो-चार दिन या दो-चार महिनों के पश्चात् भी इसे मानना तो पड़ेगा ही। मैं उसे मना ही लूँगा। मैं इसके लिये अपना मान छोड़ने को तैयार हूँ""इसके लिये अपना सर्वस्व खोने के लिये तैयार हूँ।'

रावण को और कुछ सूझता नहीं। कहाँ से सूझे? प्रबल कामवासना से घिरे हुए पामर प्राणी को अन्य कुछ भी न सूझना स्वाभाविक है।

विभीषण रावण के दुष्टकृत्य से झुँझला उठा। उसके देखते २ ही सीताजी को पुष्पक विमान में डालकर उन्हें लंका-दर्शन के लिये ले गया। विभीषण को इससे भारी धक्का लगा। वह उद्यान में से अपने महल में आया। उसने मन ही मन निर्णय किया 'मुझे इस सती स्त्री को बचा लेनी चाहिये। इसके लिये मुझे तात्कालिक प्रयत्न शुरू कर देने चाहिये। ज्येष्ठ बंधु को सलाह देने का कोई अर्थ नहीं। यह ऐसी कामपरवशता में

फँसा है कि जिस स्थिति में हित-अनुचित का निर्णय कर ही नहीं सकता। अतः अमात्य-वर्ग को बुला कर उसे इस परिस्थिति से परिचित करवाना चाहिये और उसकी सलाह लेनी चाहिये। उसके बाद आगामी कार्यक्रम की योजना बनानी चाहिये।'

विभीषण के भव्य महालय में लंका का मंत्री मंडल एकत्रित हुआ। विभीषण इस प्रकार मंत्रीमंडल को एकत्रित करते नहीं थे। तथा इस मंत्रणा को गुप्त रखने का प्रबंध भी किया गया था। विभीषण के मुख पर छाई गई गंभीरता, उदासीनता और बारीक व्यथा मंत्रीगण समझ सकते थे।

विभीषण ने कहा :

हे राक्षसकुल का हित चाहने वाले मंत्रीश्वरो! आज आपको एक महत्त्वपूर्ण परिस्थिति से परिचित करवाने के लिये बुलाया है। आप राक्षसकुल के गौरव युक्त इतिहास को जानते हैं। घटित घटना का मैं बाद में वर्णन करूँगा। इसके पूर्व मैं आपसे पूछता हूँ कि काम, क्रोध, लोभ, मद, मत्सर आदि अंतरंग शत्रु भूत की भाँति भयंकर हैं। इन में से एक भी भूत किसी प्रमादी को लग जाए तो वह क्या करे?'

'विनाश!'

'अंतरंग शत्रुओं में एक कामवासना भी सर्वनाश करने में शक्तिमान् है। उसमें भी परनारी की अभिलाषा? आप लोग शायद जानते होंगे। मुझे तो कल ही पता चला कि महाराजा दशानन एक परस्त्री का अपहरण कर ले आए हैं....श्रीराम की वे धर्म पत्नी हैं। महान् सती हैं...।

इस स्त्री के कारण स्वर्ग तुल्य यह लंका संकट के सागर में डूब जाएगी—लंका का अधिपति पराक्रमी, होते हुए भी श्रीराम-लक्ष्मण से लंका वच सकेगी नहीं।

अमात्य विचारमग्न हो गए। महामात्य बोले :

स्वामिन्, इस विषय में हम क्या सलाह दें? आप दीर्घ दृष्टा, गंभीर और लंका का हित चाहने वाले हैं। हम तो नाम के ही मंत्री है। आप इस विकट परिस्थिति में से कोई मार्ग निकालें।'

क्या करना? लंकापति कामवश हैं, इन्हें कोई सलाह देना व्यर्थ है। मिथ्या दृष्टि को जिनेश्वर का धर्म नहीं समझाया जाता''''खैर, मुझे समाचार मिले हैं कि श्रीराम के पास सुग्रीव, हनुमान, विराध आदि राजा लोग इक्ट्ठे हुए हैं। सीता की खोज हो रही है। न्यायी महात्माओं का पक्ष कौन न ले? श्रीराम-लक्ष्मण सचमुच ही महान् हैं। अकेले लक्ष्मण ने दड-कारण्य में खट विद्याधर के चौदह हजार सुभटों का घात किया! वास्तव में, मुझे तो लगता है कि सीता के कारण राक्षस कुल का सर्वनाश हो जाएगा''''

नहीं, स्वामिन्! आप कोई उपाय करें और लंका की रक्षा का उचित प्रबंध करें।

आपकी वात ठीक है, परन्तु शस्त्र, अस्त्र, यंत्र या मंत्र द्वारा किया हुआ रक्षण पवित्रता और चारित्र्य के आगे टिक नहीं सकता। श्रीराम के पास पवित्रता है, न्याय है, चारित्र्य है। इनकी सती स्त्री का सतीत्व श्रीराम का अभेद्य कवच है। राक्षस सुभट इस दुर्भेद्य कवच को भेद नहीं सकेंगे।'

जो भावी होगा वह तो होगा ही भगवन्, परन्तु मनुष्य को अपने शक्य प्रयत्न तो करने ही चाहिये न ? लंकापति को समझाने के लिये कौन समर्थ है ? जहाँ आप जैसे महात्मा पुरुष की हितकारी बात भी उन्होंने उपेक्षापूर्वक ठुकरा दी, तो फिर उनकी इच्छा के विरुद्ध सलाह देने की नैतिक हिम्मत अन्य किस में है ?

परन्तु यदि लंकापति न समझें, अपनी हठ न छोड़ें, तो लंका श्मशान भूमि बनेगी । आज का नंदनवन कल गिद्धों से गिंजे जाते मुर्दों से दुर्गंधमय वन उठेगा....'

विभीषण ने एक बड़ा निःश्वास छोड़ा, मंत्री वर्ग को नगर की सुरक्षा का उचित आदेश देकर, विभीषण चिन्ता के सागर में डूब गये ।

२

सीता के समाचार मिले

दिन पर दिन बीते, सुग्रीव श्रीराम को दिये गए वचनों को भूलकर, तारा-रानी के साथ राग-रंग में डूबा""किष्किन्ध के उद्यान में श्रीराम और लक्ष्मण सीताजी के विरह में, सीताजी के कुशल संदेश की प्रतीक्षा में दुःख पूर्ण दिन काटते थे। सुग्रीव द्वारा सीता-परिशोध हेतु दिया हुआ आश्वासन अब असह्य बनता जाता था।

लक्ष्मणजी ने किष्किन्ध के राजमहल को कम्पायमान कर दिया। लक्ष्मणजी ने दहाड़ की और सुग्रीव के रंग-राग के रंग क्षणभर में उड़ गए। वह लक्ष्मणजी के चरणों में लुढ़क पड़ा। अपने दिये हुए वचन का, सीता-परिशोध का कार्य अविलंब शुरू कर देने का विश्वास दिया। शर्म और लज्जा से विनम्र बना हुआ सुग्रीव उद्यान में श्रीराम के पास गया और भक्ति से श्रीराम को वंदना की।

सुग्रीव ने सैन्य के नायकों को बुलाया। सेना नायकों ने प्रणाम कर सेवा कार्य पूछा।

'मेरे पराक्रमी सेनापतियों, एक महान् कार्य हमें शुरू करना है और यह कार्य पूर्ण करके ही विराम करना है""सर्वत्र""

किसी प्रकार की स्खलना के विना मैथिली के समाचार लाओ मैं भी मैथिली को ढूँढने के लिए आज ही प्रयाण करता हूँ।'

चारों दिशाओं में हजारों विद्याधर सुभट मैथिली की शोध में चल पड़े। द्वीपों, नदिओं, पहाड़ों और नगरों में प्रच्छन्न और प्रकट रूप से शोध शुरू हो गई।

सीताहरण के दुःखद समाचार कर्णोपकर्ण सुनकर, भामंडल भी श्रीराम को ढूँढता वानर द्वीप पर आ पहुँचा। श्रीराम को देखते ही भामंडल फूट २ कर रोने लगा। भामंडल के साथ आया हुआ सैन्य उदासीन हो गया। लक्ष्मणजी ने भामंडल को सान्त्वना दी और सीताजी को प्राप्त करके ही चैन लेने का दृढ़ संकल्प जाहिर किया। भामंडल अभी शांत हुआ ही था कि विराध भी पाताल लंका से हजारों शूरवीर सुभटों के साथ श्रीराम की सेवा में उपस्थित हो गया।

सुग्रीव ने आगंतुक राजाओं का सत्कार किया और उनकी सब प्रकार से आवभगत करने का कार्य वालिपुत्र चन्द्र रश्मि को सौंपकर सुग्रीव स्वयं ही सीता की शोध में निकल पड़ा।

जिस मार्ग से रावण सीता का अपहरण करके भागा था उसी मार्ग पर सुग्रीव अपने आकाश यान को चलाता हुआ बढ़ रहा था, इतने में कम्वुद्वीप आ गया। आकाश यान को द्वीप के एकान्त भाग में छोड़कर वानरेश्वर कम्वुद्वीप की धरा पर आगे वढ़ा।

दूर उसने एक पुरुष को वैठा हुआ देखा। वह अकेला था। सुग्रीव को आश्चर्य हुआ''''वह वेग से आगे वढ़ा। निकट पहुँचकर देखा''''ओ हो''''यह तो रत्नजटि विद्याधर!'

रत्नजटि को सुग्रीव पहचानता था। रत्नजटि के सत्कार्यों ने विद्याधर दुनिया में उसे 'उच्च आत्मा' के रूप में प्रसिद्ध कर रक्खा था। परोपकार का तो उसे व्यसन ही था। इस व्यसन में रत्नजटि आवश्यकता पड़ने पर अपने सर्वस्व की भी बाजी लगा देता था।

रत्नजटि महासती को रावण के क्रूर हाथों से मुक्त करवाने के प्रयत्न में रावण के हाथों पंगु-विद्या हीन बनकर इस कम्बु-द्वीप में पड़ा हुआ था। उसने सुग्रीव को अपनी ओर आता देखा। दु:ख आपत्ति और वेदनाओं में घिरे हुए मनुष्य को प्राय: जैसे विचार आते हैं, वैसे ही विचार रत्नजटि के मन में आने लगे। वह सोचता है :

'क्या दशानन ने मेरे वध हेतु इस वानरेश्वर को भेजा होगा? महान् ओजस्वी दशानन ने पहिले तो मेरी विद्याओं को छीन लिया। अब यह हरीश्वर सुग्रीव मेरे प्राणहर लेगा? क्या मुझे अपने प्राणों से भी हाथ धोने पड़ेंगे? कोई चिन्ता नहीं। एक सती की रक्षा में मृत्यु भी मेरे लिये महोत्सव रूप है.....।'

'अरे रत्नजटि! किस विचार-निद्रा में पड़ा है। तू अभ्युत्थान भी करता नहीं? आकाशयान में विहार भी करता नहीं? आलसी बनकर क्यों पड़ा है।' सुग्रीव ने आकर रत्नजटि को विचारतद्रा में से जगाया। रत्नजटि खड़ा हो गया और वानर द्वीप के अधिपति को दोनों हाथ जोड़कर प्रमाण किया। कम्बुद्वीप के इस रण प्रदेश में जहाँ रत्नजटि विद्याधर विद्याविहीन होकर टूट गिरा था, उस प्रदेश के एक विभाग में

सुग्रीव और रत्नजटि जाकर वैठे। दुखियारे रत्नजटि ने अपनी अवदशा का वर्णन करते हुए कहा :

पराक्रमी राजन्, मैं वर्तमान स्थिति का शिकार कैसे बना यह वास्तव में आप जैसे शक्तिशाली और पवित्र पुरुष के सुनने योग्य है। कुछ दिन पूर्व मैं आकाश मार्ग से जा रहा था; कहीं मेरे कान में किसी स्त्री के करुण रुदन की आवास आई''''मैंने चारों ओर देखा—तो लंकापति का पुष्पक विमान तीव्र गति से लंका की दिशा में उड़ रहा था''''उस समय विमान में से एक आवाज आ रही थी। मैं लंका के मार्ग पर बीच में जाकर रुका। आवाज स्पष्ट आने लगी''''''हे राम''''हे वत्स लक्ष्मण''''' हे भाई भामंडल'''''विमान आ पहुँचा। मैंने अपनी तलवार खींच निकाली और रावण को ललकारा''''देवी सीता को बचाने के लिये मैंने युद्ध के लिये दशानन को आह्वान किया—परन्तु विद्यापति दशमुख ने मेरी आकाशगामिनी विद्या ही छीन ली। मैं इस कम्बुद्वीप पर गिर पड़ा''''और लंकापति राम-पत्नी को लेकर लंका की ओर चल पड़ा। बस, तब से मैं इस कम्बुद्वीप पर पड़ा हूँ। अब आप ही मेरा उद्धार करें।'

सुग्रीव ने रत्नजटि को गले लगा लिया।

'रत्नजटि! मैं जिसकी शोध में आकाश पाताल एक कर रहा हूँ, उसका पता आपने मुझे दे दिया। मेरा काम सफल हो गया—चलो अब मेरे साथ, मैं आपको अब श्रीराम के चरणों में ले जाता हूँ। आपके समाचार से श्रीराम आनंद विभोर हो जाएँगे। चलो! अब अविलम्ब मेरे आकाशयान में बैठ जाओ।'

वानरेश्वर और रत्नजटि ने श्री राम के चरणों में वन्दना की।

'कृपानिधि ! आपके आशीर्वाद से देवी मैथिली के समाचार प्राप्त हो गए हैं—

हे ? श्रीराम पाषाण-आसन से खड़े हो गये और वानरेश्वर के दोनों हाथ पकड़कर पूछा—

'कहो ! कहो ! शीघ्र कहो ! मैथिली कहां है ? कौन नराधम देवी का अपहरण कर गया ?

कृपावंत ! यह सारा वृतान्त मित्र रत्नजटि आप श्री को निवेदन करेंगे—' रत्नजटि की ओर दृष्टि करके वानरेश्वर श्री राम के चरणों में बैठ गए। रत्नजटि ने श्रीराम का चरणस्पर्श करके सारा वृतान्त निवेदन किया। लक्ष्मणजी ने भी रत्नजटि की बात बड़ी एकाग्रता से सुनी।

'वीर पुरुष ! आपने लंकापति के साथ भिड़कर बड़ा साहस किया—हां, देवी बड़ा करुण क्रन्दन करती थी ?'

'महात्मा ! देवी का करुण क्रन्दन वन के पशु पक्षिओं को भी गमगीन बना रहा था·······मुझ से देवी का दुःख सहन न हुआ·······मैंने खड्ग लेकर लंकापति पर आक्रमण कर दिया····भले ही मेरे प्राण जाये·······'

धन्य·······रत्नजटि ! तू साहसी, दयार्द्र और परोपकारी पुरुष है····भले ही दुष्ट रावण ने तेरी विद्या छीन ली····मैं उसकी सभी विद्याएँ छीनकर उसे यमसदन में पहुंचाऊंगा····रत्नजटि····मैथिली वारंवार मेरा नाम लेकर पुकारती थी ?

क्या कहूं, कृपानाथ ? देवी की आंखों में से अविरल अश्रु-धारा वह रही थी। हे राम, हे वत्स लक्ष्मण, हे भ्राता भामंडल .....' बस, इसके सिवाय देवी को कुछ भी याद न था। नराधम रावण के पत्थर हृदय पर उसका कोई प्रभाव नहीं होता था।'

श्रीराम रत्नजटि से वृतान्त सुनकर शोक, उद्वेग, क्रोध और आनंद मिश्रित मनोभावों से भर गया। वार-वार सीता का वृतान्त पूछकर अपने हृदय को तृप्त करने का प्रयत्न करने लगे' सुर संगीत नगर के अधिपति रत्नजटि को अपने पास विठाकर वात्सल्य और स्नेह से प्यार करने लगे।

लक्ष्मणजी, सुग्रीव, भामंडल, विराध, नल नील आदि वीर पुरुष रत्नजटि से वृतान्त सुनकर, श्री राम के आदेश की प्रतीक्षा करने लगे।

'सुग्रीवराज !'

'आज्ञा प्रदान करें।' वानरेश्वर ने खड़े होकर मस्तक झुका कर अंजलि वांधी।

'यहां से लंका कितनी दूर है ?

'लंका दूर हो या निकट हों ! उससे क्या ? विश्वविजेता रावण के समक्ष हम सव तृण समान हैं।'

'पराक्रमी राजेश्वरो। जय-पराजय का विचार किये विना आप मात्र साक्षी रूप बनकर, हमें मात्र लंका वतायें, रावण वतायें, उसका पराक्रम, वीरता और विश्वविजेतापन का शीघ्र पता चल जायगा। सौमित्र के तीर उसकी परीक्षा कर लेंगे।'

श्रीराम ने स्वस्थतापूर्वक प्रत्युत्तर दिया। श्रीराम के वक्तव्य का अनुसंधान करते हुए लक्ष्मण जी बोले :

'कौन है यह रंकरावण ? श्वान की भांति छल करके जो मैथिली का अपहरण कर गया, उसके पराक्रम के आप गीत गा रहे हैं ? एक क्षत्रिय के आचार धर्म का पालन कर मैं उसका शिरच्छेद कर डालूंगा। आप सब दर्शक बनकर मेरा युद्ध नाटक देखो।

शांत चित्त से सारा वृतांत सुन रहे वयोवृद्ध जांबवान् बोले:
'पूज्य पुरुष ! आपकी बात यथार्थ है। इसमें जरा भी संदेह नहीं—परन्तु एक सत्य बात मुझे कहनी चाहिये। एक समय ज्ञानी पुरुष अनन्तवीर्य मुनि ने रावण का भविष्य प्रकाशित करते हुए कहा था : 'जो महापुरुष 'कोटिशिला' अपने बाहुबल से उठाएगा, वह रावण का वध करेगा।'

अतः मेरी इच्छा है कि आर्य पुत्र लक्ष्मण को वहां ले जायें और वे 'कोटिशिला उठाएं'।

'एवमस्तु,' लक्ष्मणजी ने जांबवान की बात स्वीकार कर ली।

आकाशयान तैयार किया गया। लक्ष्मणजी, भामंडल जांबवान, विराध नल-नील आदि आकाशयान में आरूढ हुए। यान उड़ा। अल्प समय में कोटिशिला के पास सब पहुंच गए।

जाम्बवान् ने कहा : 'यह 'कोटिशिला' है इसे लक्ष्मणजी उठाएं जिससे हमें रावण वध का विश्वास हो जाय।'

लक्ष्मणजी आगे बढ़े। दोनों भुजाएं लम्बी की और कोटि-शिला को उचक ली ! एक लता की भांति लक्ष्मणजी ने कोटि-शिला ऊंची करली""देवताओं ने दिव्यध्वनि की। जांबवान् आदि वीरों ने जयनाद किया। प्रतीति हो गई कि लक्ष्मणजी के हाथों रावण का वध निश्चित है।'

सभी आकाशयान में यथास्थान आसीन हुए। बड़ी आशा, श्रद्धा और उमंग के साथ किष्किन्धि नगर के उद्यान में आ पहुंचे। कार्य की सफलता का संदेश श्री राम को दिया गया। श्रीराम ने लक्ष्मण को गले लगा लिया।

"वत्स ! अब रावण का वध निश्चित् है। युद्ध बिना मुक्ति नहीं होगी।"

'कृपानाथ ! इस बात में अब जरा भी संदेह नहीं, परन्तु नीतिमान् पुरुषों के कर्तव्यानुसार पहिले हमें शत्रु के पास दूत भेजना चाहिये। दूत द्वारा अपना संदेश शत्रु को मिले। यदि वह समझ जाय और मैथिलि को सम्मानपूर्वक सौंप दे, तो युद्ध की भी आवश्यकता खड़ी न हो'। वानर द्वीप के वृद्ध कूटनीतिज्ञ ने प्रस्ताव रक्खा।

भामंडल ने कहा—'अभिमानी रावण दूत की बात सुनकर सन्मति प्राप्त करे—यह आशा व्यर्थ है।'

यह भी सत्य है, परन्तु नीति का पालन करना चाहिये। दूत द्वारा समस्या का निराकरण करवाने का अवसर देना चाहिये। दूत द्वारा रावण मानेगा ही नहीं यह बात मानकर ही दूत भेजना है।'

लंकाधिपति ने नीति का पालन किया होता तो हम पर नीति पालन का नैतिक बंधन आता, परन्तु जब उसने नीति का त्याग किया है तो फिर हम क्यों नीति को पकड़े रक्खें ?'

'राजेश्वर ! जिस प्रकार दुर्जन अपनी दुर्जनता का त्याग नहीं करता, उसी प्रकार सज्जन को अपनी सज्जनता नहीं छोड़नी चाहिये । हम नीति विमुख क्यों बनें ? यदि उसे समाचार मिलेगा, शायद उसे सद्बुद्धि प्राप्त हो, तो युद्ध का दावानल रुक जाएगा । घोर हिंसा का होना रुक जायगा ।'

भामंडल को वृद्ध कूटनीतिज्ञ की बात कुछ जंची परन्तु अब, जब सीता का पता चला है तब ऐसे शिष्टाचारों में समय व्यतीत करना उसे सीता के हित के विरुद्ध कार्य लगा । भामंडल समझता था कि लंका में सीता की क्या स्थिति हो रही होगी । अब क्षण का भी विलंब किए बिना सीता की मुक्ति के लिये ही सीधा प्रयत्न करने के लिये उसने श्रीराम से निवेदन किया ।

'हे पराक्रमी ! दूत भेजने का शिष्टाचार पालन करना हो तो भले ही करें, परन्तु ऐसी सब विधियां इस अवसर पर मुझे मैथिली के हित में नहीं लगती । अब एक क्षण का विलंब मुझे अनुचित लगता है' । भामंडल ने स्पष्ट भाषा में अपना मंतव्य श्रीराम को कह दिया । सुग्रीव ने भामंडल के कंधों पर हाथ रखकर कहा:

'राजन् ! आपकी बात यथार्थ है । मैं भी सीता-मुक्ति में जरा भी विलंब के पक्ष में नहीं हूं । अतः सर्व प्रथम हम ऐसे ही वीर पुरुष को भेजे जो लंका के धर्मात्मा विभीषण से मिले । राक्षसकुल में यही एक व्यक्ति है । वह सीता-मुक्ति के लिये

रावण को समझाएगा और यदि रावण बात न माने तो वह अवश्य श्रीराम के चरणों में आ जाएगा। इतना ही नहीं, हम ऐसे वीर पुरुष को लंका में भेजे .जो रावण को चमत्कार भी दिखा दे—और सीताजी को भी ले आए! हां, सीताजी यदि मान जाएं तो।' भामंडल ने सुग्रीव की बात स्वीकार की।

'तो मैं ही लंका जाता हु—' भामंडल ने प्रस्तार रक्खा।

'लंका में आपका काम नहीं। लंका में प्रवेश करना भी एक बहुत बड़ा साहस है....यह कार्य अनुभवी का है। इस कार्य के लिए मुझे वीर हनुमान पर भरोसा है। हनुमानजी को रावण का परिचय है। लंका की प्रवेश-रीति भी ये जानते हैं।'

सुग्रीव ने 'श्रीभूति' को बुलाकर हनुपुर जाने की आज्ञा दी। श्री भूति आकाश-यान में बैठकर हनुपुर की ओर रवाना हो गए।

श्री भूति ने हनुपुर पहुँचकर हनुमानजी को सुग्रीव का संदेश दिया और मौखिक समाचार भी कहे! फौरन हनुमानजी तैयार हो गए। श्री भूति के साथ आकाश-यान में बैठ कर किष्किन्धि के उद्यान में आ पहुँचे। हनुमानजी ने श्रीराम के चरणों में वंदना की और सुग्रीव ने अपने आसन पर उन्हें बिठाकर श्रीराम के साथ परिचय करवाया।

'कृपावंत! ये ही पवनंजय पुत्र हनुमान। हनुमानजी का विनय और वीरता, इनका न्याय और नीति....वास्तव में अद्भुत् और अपूर्व है। अपने ये परम मित्र हैं। सभी विद्याधरों में कोई भी हनुमानजी का सानी नहीं। अतः हे आर्य पुत्र! सीता

के सुख-समाचार लाने के लिये आप हनुमानजी को आज्ञा प्रदान करें। इन्हें सौंपे हुए कार्य में सदा सफलता ही मिलती है।'

श्रीराम हनुमानजी के तेजस्वी मुख को देखने लगे। हनुमान जी की सुदृढ काया और अंग में से टपकते शौर्य-पराक्रम को देखा, श्रीराम के हृदय में नवयुवान हनुमान के प्रति स्नेह प्रकट हुआ। लक्ष्मणजी भी हनुमान को तन्मयता से देख रहे थे। सुग्रीव द्वारा दिया गया परिचय उन्हें अपूर्ण लगा। 'ये कोई अद्वितीय पुरुष हैं""वीरता की साक्षात् मूर्ति हैं—विनय और कर्तव्य पालन की दृढता इनमें कूट २ कर भरी है।'

हनुमानजी बोले :

'दशरथनंदन ! कपीश्वर सुग्रीव स्नेह से इस प्रकार मेरी प्रशंसा करते हैं, मुझ जैसे तो अनेक वीर सुभट वानर द्वीप पर अस्तित्व रखते हैं। गव, गवाक्ष, गवय, शरभ, गंधमादन। नील नल, अंगद, जांबवान् आदि वीरों की कीर्ति विद्याधर दुनिया में फैली हुई है। और भी अनेक कपि वीर हैं—मैं भी उनमें से ही एक हूँ। आप श्री की कार्य सिद्धि के लिये हम सब तत्पर हैं।

आप आज्ञा दें। राक्षस द्वीप सहित लंका को यहाँ उठालाऊँ भाईयों सहित दशानन को बांधलाऊँ ? अथवा सपरिवार दशानन का वहीं वध कर देवी जानकी को कुशलतापूर्वक यहाँ ले आऊँ ? आपकी आज्ञानुसार कार्य अवश्य होगा।'

'वीर पुरुष ! यह सब बातें आपके लिये संभव हैं। आपके लिये कुछ भी अशक्य नहीं। किसी भी उपद्रव के बिना जानकी को आप यहाँ ला सकते हैं, परन्तु अभी ऐसा करने की आवश्यकता नहीं। आप जाएँ और लंका में सीता की शोध करें।

सीता कहाँ रक्खी गई है ? सीता कैसी परिस्थिति में रही है ? हाँ, यह मेरी अंगूठी आप जानकी को दें, जिससे उसे विश्वास होगा कि आप मेरे द्वारा ही लंका में भेजे गए हैं, और वहां लौटते समय सीता के मस्तक का मुकुट लेते आएँ ।'

'हनुमान ! देवी को मेरा संदेश देना, राम तेरे वियोग में अति दुःखी हैं""तेरे वियोग की असह्य पीड़ा का भार वहन करने में अब हृदय शक्तिमान नहीं""जीवन शुष्क-निष्प्राण बन गया है—बस, दिन रात तेरे ध्यान में राम समय काटते हैं""प्रिय हनुमान आप कहना कि अमावस्या की रात्रि जैसा राम का जीवन बन गया है। आनंद, खुशी और प्रसन्नता नष्ट हो चुके हैं। अयोध्या का त्याग करते समय वन में कष्ट सहन करते समय ऐसा कुछ भी नहीं था। तेरे सिर पर कैसी मुसीबत छा गई ? कपटी रावण तुझे उड़ा ले गया""तु कितनी चीखी-चिल्लाई है ? रत्नजटि ने तेरे करुण रुदन का सारा वृतान्त सुनाया-सुनते ही हृदय कम्पित हो उठा। देवी, अब विलंब न होगा। अनुज लक्ष्मण लंका के मैदान पर ही इस दुष्ट रावण का वध करेगा जिसे तू अपनी आंखों के सामने देखेगी। अब तेरे दुःख के दिन अधिक नहीं। तू चिन्ता न कर। राम और लक्ष्मण कुछ ही दिनों में लंका के किले को नष्ट भ्रष्ट कर तुझे बंधन मुक्त करेंगे।

श्रीराम हनुमान के गले लग गए। हनुमानजी श्रीराम के चरणों में झुक पड़े।

'नाथ, आपका संदेश देवी को पहुँच जायगा। मैं आपकी आज्ञा का पालन कर पुनः न लौटूँ तब तक आप यहीं स्थिरता करने की कृपा करेंगे।'

3

लंका के साथ पाणि ग्रहण

हनुमानजी का विमान आकाश मार्ग पर लंका की दिशा में उड़ा। वैताढ्य पर्वत के अनेक नगरों पर होकर विमान आगे बढ़ रहा था। हनुमानजी प्रकृति के सृजन का आनन्द लेते हुए अनेक विचारों-योजनाओं और सफलता की सीढियों का निर्माण करते थे।

'यह महेन्द्रपुर है।' विमान वाहक ने हनुमानजी को विराट निद्रा से जगाया।

'महेन्द्रपुर। मेरा ननिहाल'।

'विमान नीचे उतारो।' महेन्द्रपुर के बहिर्मार्ग में विमान नीचे उतारा गया।

'यह वही महेन्द्रपुर है जहां से एक दिन मेरी जनेता रोती-बोलती निकाली गई थी। राजा महेन्द्र को मेरी माता का मुख भी देखने में पाप लगता था। कैसा क्रूर""अधम और"" हनुमानजी का मुख क्रोध से तमतमा उठा आवेश से वे कांप उठे। 'मेरी निरपराधी महासती माता को दुःख-पीड़ा पहुंचाने वाले महेन्द्र को तथा उसके पुत्र प्रसन्नकीर्ति को आज मिलकर ही मानं यहूं!'

हनुमानजी ने युद्ध की नौबतें बजाई। युद्ध के नगाड़े दनदना उठे····महेन्द्रपुर की प्रजा-संरक्षक सैनिक और राजा-सभी भय, आश्चर्य और क्रोध से भगदड़ मचाने लगे।

ब्रह्मांड में मानो विस्फोट हुआ-धरा काँप उठी।

राजा महेन्द्र ने सैन्य को सज्ज होने का आदेश दिया। प्रसन्नकीर्ति रथारूढ होकर नगर के बाहर दौड़ा आया।

महेन्द्रनगर का रहावान युद्ध क्षेत्र बन गया। हनूमानजी ने प्रसन्नकीर्ति को तिरस्कार से उत्तेजित किया। दोनों वीर आमने सामने आ गए। शस्त्रास्त्रों के प्रहार होने लगे।

सच्चा युद्ध ठन गया। हनुमानजी को खेद हुआ। 'यह मैंने क्या शुरू कर दिया ? किसलिये चला हूं और बीच में क्या कर बैठा ? खैर, अब आरंभ किए हुए कार्य को पूर्ण करके ही चैन लेनी चाहिये।'

एक क्षण·······

एक प्रहार·······

प्रसन्नकीर्ति का रथ टूट गिरा, सारथि मारा गया····शस्त्र छिद गए। हनुमानजी वेग से आगे बढ़े—प्रसन्नकीर्ति को पकड़ लिया। राजा महेन्द्र की वृद्ध देह पुत्र पराजय से सिहर उठी।

वृद्ध महेन्द्र ने शस्त्र उठाए और अंजना पुत्र के सामने रण में चढ़े। हनुमानजी ने 'नाने' के साथ युद्ध करना टाल दिया ! बुद्धि कौशल्य से शस्त्र सहित महेन्द्र को पकड़ लिया।

युद्ध पूर्ण हुआ। पराजित महेन्द्र और प्रसन्नकीर्ति महेन्द्रपुरी की राज्य सभा में नत मस्तक होकर खड़े।

हनुमानजी खड़े हुए :

महेन्द्र को नत मस्तक होकर, दोनों हाथ जोड़ कर हनुमान जी ने वंदना की और कहा :

'राजन ! आपने मुझे पहिचाना नहीं। मैं आपका दोहित अंजना-पुत्र हूँ। श्रीराम की आज्ञा से मैं लंकापति महासति सीता का अपहरण कर गया है। मुझे महासती की शोध कर, कुशलक्षेम पूछकर, रावण को समझाकर, सीताजी को बंधनमुक्त करने का कार्य करना है।'

लंका जाते समय बीच में आपका यह नगर आया—कि मेरी माता के साथ आप द्वारा किया गया अन्याय मुझे याद आ गया""अंग ३ में क्रोधाग्नि भभक उठी और मैं युद्ध कर बैठा""""।'

आप मेरा अपराध क्षमा करें। अब मैं श्रीराम के कार्य हेतु जाऊँगा और आप श्रीराम के पास किष्किन्धि नगर में पहुँच जायें।

राजा महेन्द्र हनुमामजी की बात सुनकर गद्गद हो गए। उन्होंने हनुमानजी को गले लगा लिया।

पुत्र ! पहिले अनेक मनुष्यों के मुख से तेरे विषय में सुना है। तेरे पराक्रम की कीर्ति सुनकर ही प्रसन्न होता था, आज हे वीर ! तुझे प्रत्यक्ष देखा ! वास्तव में तेरी प्रशंसा करते अघाते नहीं, यह सत्य बात ही है—यथार्थ है। इसमें तनिक भी अतिशयोक्ति नहीं।

बेटा ! तू श्रीराम के महत्वपूर्ण कार्य पर जा रहा है। तू जा। 'पन्थानः सन्तु ते शिवाः' तेरे कार्य को पूर्ण कर तू शीघ्र

हो श्रीराम के चरणों में आ जाना, मैं सैन्य सहित उन पूज्य के चरणों में जाता हूँ।'

राजा महेन्द्र किष्किन्धि के मार्ग पर मुड़े।

हनुमानजी आकाश मार्ग पर आगे बढ़े।
दधि मुख द्वीप.......

आग की ज्वालाओ से प्रज्जवलित द्वीप...हनुमानजी ने विमान में से देखा।

प्रज्जवलित द्वीप के मध्य में हनुमानजी ने एक दृश्य देखा और उनका कलेजा काँप उठा।

दो महामुनि कायोत्सर्ग ध्यान में खड़े थे। उनके सामने तीन कुमारिकाँए ध्यानस्थ बैठी थी—उनके चारों ओर आग—।

एक पल भी नष्ट किए बिना हनुमानजी ने विद्याशक्ति से समुद्रजल लाकर दधिमुख द्वीप पर बरसाया मानो घनघोर बादल बरस पड़े हो। देखते हीं देखते आग बुझ गई। हनुमान जी का करुणापूर्ण हृदय प्रसन्न हो गया।

'पर दुःख विनाशिनी करुणा' करुणा से पर दुःख का विनाश करने का कार्य सफल होने पर करुणावंत को प्रसन्नता होती है।

निष्ठुर दूसरे का दुःख देखकर, दूसरे को दुःख देकर प्रसन्न होता है। करुणावान् दूसरे का दुःख दुर करके प्रसन्न होता है।

तीनों कुमारिकाओं को विद्या सिद्धि प्राप्त हुई। महामुनियों के तीन प्रदक्षिणा लगाकर, श्री हनुमानजी से कहा :

'हे परमार्हत् ! आपने महामुनियों की उपसर्ग से रक्षाकर इन्हें और हमें भी आग से बचा लिया। आपकी सहायता से जरा भी कालक्षेप के बिना विद्या सिद्ध हो गई। आप सचमुच ही परोपकारी हैं।'

'तुम कौन हो ?' हनुमानजी ने पूछा।'

'हे महापुरुष ! हमारा परिचय सुनें।'

इस दधिमुख नगर के राजा हैं गंधर्व राज। उनकी पटरानी है कुसुममाला। हम उनकी कन्याएँ हैं। हमने यौवन प्राप्त किया। अनेक विद्याधर कुमारों ने पिताजी के पास हमारी माँग की।

उनमें एक विद्याधर था—अंगारक !

सचमुच अंगारा ही ! हमारे लिये उसने खूब उछलकूद की। उन्मादी हो गया—परन्तु पिताजी ने उसे दुत्कार कर निकाल दिया। अन्य विद्याधरों की मांग भी अस्वीकार की। एक समय, कोई हितकारी महामुनि हमारे नगर में पधारे। पिताजी ने भावभक्ति पूर्वक पूछा: 'मेरी पुत्रियों का भर्तार कौन होगा ?'

मुनि ज्ञानी थे। भूत-भावी-वर्तमान को जान सकते थे। उन्होंने कहा—जो व्यक्ति 'साहस गति' विद्याधर का वध, करेगा वह तुम्हारी कन्याओं का पति होगा।'

पिताजी ने साहसगति का वध करने वाले पराक्रमी पुरुष का अन्वेषण करवाया, परन्तु कुछ भी समाचार न मिले। अब

विद्याशक्ति के विना उसका पता लगना असंभव लगने से हमने ही विद्यासिद्धि हेतु निश्चय किया और इन महामुनि गवंत के सामने ही विद्यासिद्धि करने के लिये वैठ गई।

उस अंगारक विद्याधर को पता चला कि हम विद्यासिद्धि हेतु वैठी हुई हैं तव उसने हमारे कार्य में विघ्न डालने के लिए दावानल सुल गाया। हे निष्कारण वन्धु! आपने उसकी मान्यता पर पानी फेर दिया—दावानल आपने वुझा दिया। छ; माह में सिद्ध होने वाली यह 'मनोगामिनी विद्या' हमें क्षण-भर में सिद्ध हो गई!'

तीनों ही कन्याएं हनुमानजी को पुनः नमन कर खड़ी रहो।

'साहसगति का वध करने वाले मेरे स्वामी श्रीराम हैं। मैं उन्हीं के काम से लंका जा रहा हूँ। रामपत्नी सती-सीता जिसका रावण अपहरण कर गया है उसका पता लगाने मैं जा रहा हूँ। यदि सद्वुद्धि पैदा हुई और सीता को लौटा दिया तव तो ठीक है, अन्यथा श्रीराम और उनके अनुज श्री लक्ष्मण करोड़ों विद्या-धरों की सैना लेकर लंका पर आक्रमण करेंगे, लंका और रावण मिट्टी में मिल जाएंगे। सीताजी की मुक्ति हेतु जो कुछ भी करना पड़ेगा वह करके सीताजी को मुक्त करूँगा।'

'धन्य वीर पुरुष! हम जिनके लिये वेचैन हो रहे हैं, उन्हीं महापुरुष श्रीराम के आप व्यक्तिगत एवं विश्वासपात्र सुभट हैं, यह जानकर हमारे आनंद की सीमा न रही। अव हमारी एक प्रार्थना है। आप नगर में पधारें। हमारे पिता गंधर्वराज आपका स्वागत कर, उनकी पुत्रियों को प्राणदान, विद्या-दान, करने वाले परोपकारी पुरुष का आतिथ्य कर प्रसन्न होंगे।'

आपकी प्रार्थना उचित है, परन्तु मेरे कार्य में विलंब हो रहा है, अतः.............'।

'हम आपके कार्य में जरा भी विलंब नहीं होने देंगे...... आप जिस कार्य के लिये निकले हैं, अब वह काय हमारा भी तो है न ! श्री राम का काम—हमारा ही काम।'

तीनों कन्याओं के साथ हनुमानजी दधिमुख नगर में गए। राजा गवर्वराज ने तीनों पुत्रियों को किसी अनजान व्यक्ति के साथ आती देखकर सोच में पड़ गए, परन्तु इतने में तो कन्याओं ने आकर पितृ चरणों में वन्दन किया और हनुमान जी का परिचय दिया। गंधर्वराज ने हनुमानजी को गले लगा लिया। अतिथि सत्कार कर गंधर्वराज ने कहा :

'हे अंजनापुत्र ! आप लंका पधारें, हम ससैन्य श्री राम की सेवा में उपस्थित होते हैं।'

\+ ÷ +

हनुमानजी ने लंका का मार्ग पकड़ा।

'यह लंका आई—'आकाशयान के संचालक ने आनन्द व्यक्त किया।

'अपने आकाशयान को लंका के बाहर गुप्त स्थल में उतारो।'

हनुमानजी ने लंका देख रखी थी। लंका के प्रवेश द्वार, वहाँ की संरक्षण व्यवस्था, सैन्य के गुप्त स्थान......आदि का हनुमानजी को अचूक ज्ञान था परन्तु बिभीषण ने मंत्री वर्ग के

साथ सीताजी के सम्बन्ध में चर्चा—विचारणा करने के पश्चात् लंका की सुरक्षा का सुदृढ़ प्रबन्ध किया था। लंका के चारों ओर 'आशालिका' विद्या-सुरक्षा कर रही थी।

आशालिका विद्या !

कराल काल की घोर निशा !

अच्छे-अच्छे शूरवीरों के भी पानी उतार डाले। हनुमान जी ने 'आशालिका' को देखा। उन्होंने गदा हाथ में उठाई, प्रवेश द्वार की ओर आगे बढ़े।

'ठहर जा रे कपि ! आशालिका ने गर्जना की और विकराल रूप करके, पूरे के पूरे हनुमान को निगल जाने हेतु वह हनुमानजी के सामने आई।

विद्याशक्ति में यह चमत्कार सृजन शक्ति होती है। दुनिया को हैरत में डाल दे ऐसा महाविज्ञान उसके पास होता है। ऐसी अनंत दिव्य शक्तियां आत्मा में भरी पड़ी हैं। इन्हें प्रकट करने की कला चाहिये।

हनुमान जी तैयार ही थे। मुख चौड़ा करके तेजी से आई हुई आशालिका के मुख में हनुमानजी ने वेग से प्रवेश कर लिया ! आशालिका प्रसन्न हो गई—परन्तु उसकी प्रसन्नता अधिक टिकी नहीं। हनुमान जी के गदा-प्रहारों ने उसकी शक्ति पर पानी फेर दिया। शक्ति का नाश करके हनुमानजी ने आशालिका को चीर डाला और गदा के साथ हनुमानजी बाहर निकल आए। बस ! उनका मार्ग सरल था। आशालिका द्वारा बनाए गए किले को उन्होंने अपनी विद्याशक्ति से तोड़ डाला। मिट्टी के सकोरे को

भाँति किला टूटा गिरा। किले का रक्षक राक्षस सुभट विज्रमुख दौड़ा आया। तीक्ष्ण खड्ग के साथ उसने हनुमानजी पर हमला कर दिया।

युद्धकुशल हनुमानजी ने ऐसे खड्ग के अनेकों आक्रमणों का सामना किया था। उन्होंने वज्रमुख के खड्ग वाले हाथ को अपने एक हाथ से पकड़ रक्खा और दूसरे हाथ से गदा का एक प्रहार कर वज्रमुख के सिर की वली चढ़ा दी।

कार्यसिद्धि के लिये कृतसंकल्प मनुष्यकार्य सिद्धि के मार्ग में आते विघ्नों को जोश और वेग से हटाता हुआ आगे बढ़ता जाता है—वह आकुल नहीं होता। हाथ पर हाथ रख कर बैठ नहीं जाता।

वज्रमुख मारा गया।

वज्रमुख की वीर पुत्री लंकासुंदरी।

लंका में लंका सुंदरी के रूप का बोलवाला था। उसी प्रकार उसके विद्याबल की भी मुक्त कण्ठ से प्रशंसा होती थी। लंका सुंदरी को अपनी बनाने के लिये अनेक राक्षस सुभट और कूटनीतिज्ञ तरसते थे परन्तु अभी तक कोई लंकासुंदरी को प्राप्त न कर सका था।

संसार में मनुष्य जो चाहे वह प्राप्त कर सकता है क्या? फिर भी इच्छित व्यक्ति या वस्तु न मिलने पर मनुष्य अपने ऊपर दुःख प्रकट करता है।

लंका सुदरी पितृवध के समाचार पाते ही शोक से व्याकुल हो हुई। पितृवध किसने किया? यह जानने के लिये

अधीर हो गई। अपनी प्रिय तीक्ष्ण कटार लेकर लंकासुंदरी महल से बाहर दौड़ी आई.......उसने देखा.......वह स्तब्ध बन गई.......वज्रमुख का रक्त बहता शव पृथ्वी पर पड़ा था और एक वीर पुरुष राक्षस सुभटों को यमलोक में पहुंचा रहा था।

लंकासुन्दरी ने 'विद्याशक्ति का जीवितस्वरूप धारण किया। आकाश की मानो विद्युत् ! उछल-उछलकर वह हनुमान पर प्रहार करने लगी। क्षण भर तो हनुमानजी इस अचानक आक्रमण से हक्के बक्के हो गए—परन्तु फौरन अपने आप को सम्हाल कर प्रत्याक्रमण कर दिया, परन्तु 'सामने स्त्री है,' इस बात की सावधानी रखते हुए उन्होंने युद्ध करना शुरू किया लंकासुंदरी ने ऐसे घमासन युद्ध कई देखे और लड़े थे, परन्तु हनुमानजी की युद्ध कुशलता, चपलता और छटा देखकर लंका-सुंदरी स्तब्ध रह गई।

हनुमानजी ने लंकासुंदरी के तमाम अस्त्रों को छेद डाला, विद्या शक्ति को पराजित कर डाली। आज तक अपराजित लंका सुन्दरी पराजित हो गई। हनुमानजी की शक्ति ने उसे पराजित कर दी। 'यह कौन होगा ?' लंकासुंदरी ने हनुमानजी की ओर दृष्टि मोड़ी।

हनुमानजी.......गदाधारी हनुमानजी के रूपवान् शरीर पर दृष्टि दौड़कर मुड़ी। बल, बुद्धि और विद्या के अतिरिक्त हनुमान के मोहक व्यक्तित्व ने लकासुंदरी को आकर्षित कर लिया। उसी व्यक्ति की ओर वह आकर्षित हुई, जिसने कुछ ही क्षण पूर्ण उसके पिता का वध किया था ! पिता का शव तो अभी तक महल के आँगन में ही पड़ा था। पिता के प्रति स्नेह से पितृ वध करने वाले के प्रति द्वेष पैदा हुआ। पितृवध करने

वाले के रूप-बल के आकर्षण से उसके प्रति राग उत्पन्न हुआ ! जिसके विरुद्ध द्वेष से कटार लेकर टूट पड़ी थी, उसी की ओर राग से झुक गई ! लज्जा से झुक गई उसके अंग-अंग में अनंग व्याप्त हो गया,....अनंग के आवेग से उसका शरीर काँपने लगा।

'वीर पुरुष ! मुझे क्षमा करो।'

'तुझे अभय है।'

'मैंने बिना सोचे साहस किया……।'

'बिना सोचे नहीं परन्तु विचार पूर्वक।'

'कैसे ?'

'अपने पिता का वध करने वाले पर क्रोध आना स्वाभाविक है……वधकर्ता का वध करने का मन होना भी स्वभाविक है,'

'मैंने आपके पराक्रम के विषय में सोचा नहीं था……'

'पराक्रम सोचने से समझने जैसी वस्तु नहीं है ! संग्राम से नहीं समझा जा सकता……!'

'परन्तु……-

'तुम मेरा वध न कर सकी—इसका खेद है !'

''नहीं।'

'तो?'

'आनन्द होता है……'

'आनन्द ?'

'जी हाँ ! मुझ से आपका वध हो गया होता तो मुझे अफसोस होता ·······'

'नहीं ! वध कर सकी होती तो हर्ष होता·······परन्तु वध न कर सकने से, अब आनन्द होता है !,

'सच्ची बात है, परन्तु अब मेरी एक प्रार्थना है·······'

'कहो।'

'मेरे पिता को किसी ज्ञानी पुरुष ने कहा था—'तेरा वध करने वाला पुरुष तेरी पुत्री का पति बनेगा।'

'हं—'

'अब मेरा पाणि-ग्रहणकर, मुझे सुखी करें।'

'मुझे पति बनाकर तू सुखी बन सकेगी ?'

'अवश्य, सम्पूर्ण विश्व में आपके समान कोई वीर नहीं। आपको पति बनाकर मैं जगत् की सभी स्त्रियों में अति गर्वांवित बनूंगी।'

'परन्तु मेरे परिचय विना मेरे साथ शादी करके फिर अफसोस तो नहीं होगा न ?'

'आपका परिचय हो चुका ! आपके पराक्रम, आपकी मुखाकृति, आपकी वाणी—इन सबने क्या कोई कम परिचय दिया है ?'

हनुमानजी ने लंका सुंदरी को शादी की अनुमति दी। लंका ने सर्व प्रथम अपने पिता के मृत देह की अंतिम विधि करवाई, स्नानादि से निवृत्त होकर, हनुमानजी को अपने महल में

ले गई, संध्या का भोजन किया। हनुमानजी ने गांधर्व विधि से लंका के साथ शादी की।

लंका सुंदरी हनुमान के साथ शादी करके परम कृतार्थता का अनुभव करने लगी। हनुमान लंका को प्राप्त कर, लंका पर अपनी प्रथम विजय समझकर, अपने स्वामी के कार्य सिद्धि की निशानी समझने लगे।

हनुमान लंका सुंदरी के साथ महल की अट्टालिका में खड़े २ लंका का अवलोकन कर रहे थे कि पश्चिम में सूर्यास्त हो गया।

४

१९ उपवास का पारणा

अंजनानंदन ने निःशंक होकर लंकासुन्दरी के साथ रात विताई। प्रातः लंकासुन्दरी को पूछकर हनुमान लंका में प्रविष्ट हुए।

लंका में यदि कोई प्राज्ञ पुरुप था तो वह विभीपरा था। हनुमानजी ने विभीषरा को मुलाकात से कार्यारंभ करने का निर्णय किया। विभीषरा नीतिज्ञ और न्यायी राजपुत्र था। उसे सीता का अपहरण कभी प्रिय न लगा होगा और इस संवंध में उसने कुछ न कुछ सोचा होगा, किया होगा, यह वात हनुमान जी ने सोची थी। हनुमानजी चाहते थे कि विभीपरा के प्रयत्नों से सीता की मुक्ति हो जाती हो तो युद्ध की ज्वाला में करोड़ों प्राणों की आहुति देने की आवश्यकता न रहे।

हनुमानजी लंका के राजमहलों से परिचित थे। विभीषरा का महल उन्होंने देख रखा था। निर्भय हनुमान विभीषरा के द्वार पर पहुंच गए। द्वारपाल को मुद्रिका दी। मुद्रिका लेकर द्वारपाल विभीपरा के पास पहुंचा। विभीषरा ने पवनंजय पुत्र का आगमन जानकर आनंद व्यक्त किया और स्वयं ने द्वार पर आकर हनुमान का स्वागत किया।

मंत्रणागृह में प्रविष्ट होकर, हनुमान को भद्रासन पर बैठने का इशारा करके विभीषण ने पूछा।

'कहो ! हनुमान ! कुशल तो हो न ?'

'राजन् ! कुशलता होती तो यहां इस समय आने का प्रयोजन ही न होता।'

कहो, क्या प्रयोजन है ?

'हे न्यायनिष्ठ राजन् ! राम पत्नी सीता का अपहरण हुआ है और दशानन रावण अपहरणकर्ता है। सीताजी देवरमण उद्यान में रखली गई हैं—आप दशानन के लघुभ्राता हैं; ऐसा अपकृत्य करने वाले दशानन को आपको रोकना चाहिये। न्याय विरुद्ध कार्य के प्रति आप उदासीन क्यों हैं ?'

'हनुमान ! तुम्हारी बात सत्य है। सीता को मुक्त करने हेतु मैंने पहिले अग्रज को समझाया था, पुनः आग्रहपूर्वक समझाने का प्रयत्न करूंगा।'

'प्रयत्न अभी ही करना आवश्यक है। मैं इसी काम के लिये श्री राम की आज्ञा से यहां आया हूं।'

'अवश्य ! मैं तुम्हारी बात से सहमत हूं। सीता श्री राम को सौंप ही देनी चाहिये। यह न्याय है। मैं इस न्याय की रक्षा हेतु बड़े भाई से प्रार्थना करूंगा; फिर क्या परिणाम निकलता है उस पर विचार करेंगे।'

हनुमानजी को विभीषण की बात से संतोष हुआ। विभीषण को नमस्कार कर हनुमानजी सीधे ही देवरमण उद्यान में पहुँचे।

वैदेही से अधिष्ठित देवरमण उद्यान—

महादेवी थीं फिर भी मन्दिर म्लान था–पवित्रता थी पर प्रसन्नता न थी, जीवन था पर शमशान जैसा सुनसान था।

अशोक वृक्ष की छाया में सीताजी बैठी थीं। कपोल पर केशकलाप रुखार लहरा रहा था; सतत अश्रुधारा से पृथ्वी भीगी हुई थी, हिमार्त पद्मिनी की भांति सती का मुख कमल म्लान बना हुआ था और प्रथम इन्दुकला की भांति सीताजी का शरीर अत्यन्त कृश बन चुका था। ऊष्ण निश्वास और सतत संताप से सती के अधर सूख गए थे और बस, निःस्पन्द योगिनी की भाँति 'राम राम राम' का नाम जप रही थीं।

उनके वस्त्र मलीन बन चुके थे, परन्तु उन्हें वस्त्र या वपु की चिन्ता ही कहां थी।

हनुमान ने वैदेही के दर्शन किये। वे वैदेही के आंतरिक जीवन वैभव की वन्दना करने लगे—'अहो! सीता वास्तव में महासती है–इनका दर्शन मनुष्य को पावन कर दे–यह निश्चित है। सीता के विरह में राम का झूरना युक्त ही है। रूपवती और शीलवती नारी का विरह किस पुरुष को शोकाकुल नहीं करता?'

'राम जैसे राम, पिता के वचन के खातिर राज्य गद्दी छोड़कर जंगल की राह पकड़ने वाले राम···माता पिता, भाई सबका संग छोड़कर निर्मोही जैसे बनकर जीवन जीने वाले राम, एक स्त्री के विरह में इतने अधिक क्यों झूर रहे हैं?' यह प्रश्न कभी से हनुमान को सता रहा था। इसका समाधान आज सीता-दर्शन से हो गया। साथ ही श्री राम की विरह व्यथा

किसी विषय वासना को तृप्त करने वाली अस्थि मज्जा-मांस की रूपसुन्दरी के पीछे न थी-परन्तु शीलवती-रूपवती पति-निष्ठा धर्म पत्नी के पीछे थी।

वीर हनुमान की विचारधारा आगे बढ़ रही थी। बेचारा रावण दोनों प्रकार से मारा जाएगा—श्री राम के प्रताप से और स्वयं के घोर पाप से। हां, विभीषण की सलाह मान ले तो बच जाए। सम्मानपूर्वक सीताजी को लौटा दे तो श्री राम रावण को दंड नहीं देंगे, परन्तु घमंडी रावण इस प्रकार मानने वाला कहां है? विभीषण को वह धिक्कारेगा···मैं जानता हूं उसे···खैर, अब अमावस्या की घोर अंधेरी रात में बिजली की चमक हो और प्रकाश फैल जाए, उस प्रकार सीताजी को आनंद से भर दूं।'

हनुमान ने अशोक वृक्ष पर बैठकर श्री राम की अंगूठी सीताजी की गोद में डाली। सीताजी चौंक उठीं—

'यह क्या' फौरन अंगूठी हाथ में ली–घूर-घूर कर देखने लगीं–मुख पर मुस्कराहट और आंखों में चमक छा गई। 'यह तो मेरे राम की मुद्रिका–' उन्होंने मुद्रिका सीने से लगा दी। हनुमान सीता की प्रसन्नता से गद्गद हो गए–उनकी आंखें हर्षाश्रु से भर गई।

सीताजी की सेवा में रही हुई त्रिजटा ने आज पहली ही बार सीता के मुख पर प्रसन्नता देखी–वह दौड़ी रावण के पास।

'महाराज! आज सीता प्रसन्न है। उस पर कभी न देखी गई प्रसन्नता उछल रही है।'

'ऐसा है ? तव तो वहुत अच्छा—'त्रिजटा को रावण ने गले से कीमती हार उतार पुरस्कृत किया। रावण मंदोदरी के पास दौड़ा हुआ गया।

अंत:पुर में प्रविष्ट होते ही रावण ने आवाज दी—'मंदोदरी–'

'स्वामीनाथ'—मंदोदरी भौचक्की सी पलंग पर से उठ बैठी।

परिचारिकाएं दूर हटकर खड़ी रहीं। रावण मंदोदरी के पलंग पर वैठ गया।
'अचानक आगमन–'

'प्रिये ! मेरा भाग्य अनुकूल वना है–मेरी आशाएँ सफल हो रही हैं।'

'ऐसा ही हो नाथ !'

'त्रिजटा ने अभी-अभी आकर शुभ समाचार दिया है कि देवी सीता आज प्रसन्न है। उसके मुख पर से ग्लानि दूर हट गई है–विषाद दूर हुआ है–आज वह आनंदविभोर हो रही है—मुझे लगता है कि अव वह राम को भूल गई है। कहां तक वह धैर्य रक्खे ? उसने सोचा होगा कि 'अव राम की आशा रखना व्यर्थ है····वह अव कहां से आएगा ? जवकि यहां लंकापति मेरे पीछे पागल हो गया है····तो उसकी इच्छा पूरी करके क्यों न सुखी वनूं····स्त्री कितना धैर्य रख सकती है ? मैंने उसके सामने आजिजी करने में भी कोई कमी नहीं रक्खी, वह भी तो मनुष्य है न····मेरे मनोभावों को आखिर वह समझी जरूर····

'स्वामिन् ! हम स्त्रियां वास्तव में पुरुष के प्रेम विना जी नहीं सकतीं। पुरुष विना प्रेयसी वास्तव में घुल-घुल कर जीती है और अन्त में मृत्यु का शिकार बनती है। सीता भी तो एक स्त्री है न ! राम के प्रेम को भुलाने के लिये इतने दिन पर्याप्त थे। फिर इस विश्व में कौन सी स्त्री ऐसी भाग्यहीना होगी जिसे आप चाहें और जो आपको न चाहती हो ? शूरवीर और रूपवान् ऐसे लंकापति के प्रति सीता अन्दर ही अन्दर अनुरागिनी तो होगी ही। यह तो स्त्री की कला स्त्री ही जाने ! हमारा अनुराग जल्दी कोई नहीं जान सकता—अन्तःकरण से जिसके प्रति हम अनुरागिनी होती हैं, बाहर से उसके प्रति द्वेष बताती हैं और हृदय से जिसके प्रति द्वेष होता है, बाहर से अनुराग बताती हैं।

इसीलिये मुझे भी ऐसा लगता है कि वह अब आपको चाहती है।'

'सही बात है देवी ! वह अब लंकापति के साथ क्रीड़ा करे—ऐसी व्यवस्था तू कर दे। सत्वर, तू जा और उसे समझा।'

'जैसी मेरे हृदयनाथ की आज्ञा···'

मंदोदरी ने रावण का दूतीपन स्वीकार किया और देवरमण उद्यान में जाने के लिये तैयार हुई। रावण प्रसन्नचित्त होकर अपने प्रासाद में आया और मंदोदरी की प्रतीक्षा करने लगा।

रंक रावण ! सीता के आकर्षण में मुग्ध बना रावण-त्रिजटा के समाचार को सत्य मान लेता है। सीता के स्मित का कैसा अर्थ धार बैठा। जहां जिसकी मति होती है, वहीं वह अर्थ को खींच ले जाता है। सीता के स्मित ने—सीता की प्रसन्नता ने

रावण को उलटे मार्ग पर चलाया। रावण ने उस पर आशा के महल बांध लिये—उसके मन ने सीता के लिये नवीन रंगीन दुनिया की कल्पना कर ली और अब उस दुनिया में सीता प्रवेश करे—इसी प्रतीक्षा में पागल रावण इस रंगीन दुनिया के द्वार पर बैठा।

मंदोदरी !

मतिमंद मंदोदरी—अंध पतिराग में नाचने वाली राक्षस वंश की परंपरा का उज्जवल इतिहास भूलकर इस इतिहास-परंपरा का अंत लाने वाले कार्य का दूतीत्व करने चली—'कुछ भी करके पति का प्रिय करना' ऐसे एकांत अशुभ सिद्धान्त के साथ वरण की हुई मंदोदरी पति के कार्य को न्याय—नीति के तराजू पर तोलना नहीं जानती थी। अपहरण कर उठाकर लाई हुई सीता—जो सती रावण की परछांई भी नहीं चाहती, ऐसा जानती हुई भी वह लंका के सम्राट को विवेक सिखाना भूल गई—भूली नही—उसे ऐसा सूझा ही नहीं। वह सत्यस्थिति शायद समझती भी होगी, परन्तु अप्रिय सत्य पति को कहना उसने पसंद न किया हो····कुछ भी हो—उसने लंका के लिये, लंका की प्रजा के लिये, राक्षसवंश के लिये अथवा लंका के सम्राट के लिये शुभचिन्तन नहीं किया—बल्कि राक्षसवंश की त्याग प्रधान संस्कृति के विनाश-कार्य में साथ दिया, सहयोग दिया।

मंदोदरी का रथ देवरमण उद्यान के द्वार पर आकर रुका। त्रिजटा दौड़ कर गई, मंदोदरी का हाथ पकड़ कर करने लगी।

'महादेवी ! आज सीता को क्या हो गया है—?

... आज इसका चेहरा मुस्करा...रहा है—हृदय नाच रहा है यह दुःख. वेदना, संताप सब कुछ भूल गई है। मुझे लगता है कि आज आपको वात इसके गले उतर जाएगी और लंका पति की आशा फलित होगी।'

'चल, मैं इसीलिये आई हूँ।'

त्रिजटा ने दौड़कर सीताजी को समाचार पहुँचाया— 'सीता! महादेवी स्वयं यहां पधार रही हैं.......सीता जी ने मुद्रिका को अपने कटि-प्रदेश में छिपा दी और अपनी ओर आती हुई मंदोदरी को देखती रही।

मंदोदरी आकर सीताजी के पास बैठ गई। त्रिजटा को आसन भी विछान न दिया। त्रिजटा दूर एक वृक्ष के पास खड़ी रही। मंदोदरी ने वात की शुरुआत की।

'सीता! तू यहाँ आई तव से आज ही तेरे मुख पर मैं कुछ स्वस्थता देखती हूँ—मुझे आज बड़ा संतोष हुआ है मंदोदरी क्षण भर मौन रही। सीताजी के मुख पर के भावों का अध्ययन करती रही दूसरी ओर, अशोक वृक्ष की घटा में छिपे हुए हनुमान मंदोदरी के मुख माला और वचन भावों की थाह ले रहे थे। त्रिजटा को सीता—मंदोदरी के वर्तालाप का क्या परिणाम निकलता है इतने में ही रुची थी।

'वास्तव में लंका के सम्राट अद्वितीय एश्वर्य और अप्रतिम सौन्दर्य के स्वामी हैं और सीताजी के मुख पर हाथ फेरते हुए कहा। त्रिभुवन में अद्भुत रूप और अनुपम लावण्य मेरी सीता का है! भले ही, अज्ञान दैव ने तुम दोनों का सुयोग्य संवंध न

बांधा—अब यह संबंध जुड़े……लंका के नर नारी महोत्वस करेंगे—देवता गण पुष्प वृष्टि करेंगे……जानकी ! मान जा; तू सहमति दे, बस, मैं और अन्य रानियां तेरी आज्ञा को शिरोधार्य करेंगी—तू राक्षस द्वीप की माननीय सम्राज्ञी बनेगी—

मंदोदरी का एक २ शब्द बहुत तपे हुए तीर की भाँति सीता के हृदय में चुभता था। सीता ने आज ऐसे ही उलटे तीर बरसाने का निर्णय कर दिया जिससे पुनः मंदोदरी ऐसा साहस करने के लिये आए ही नहीं।

'पापिनी ! तेरे दुर्मुख पति की दूती बनकर यहाँ आई है ? तेरा मुँह देखना भी नरकगामी बनाने वाला है—तू समझ ले कि मैं श्री राम के पास ही हूं……लक्ष्मण अभी यहाँ आए ही समझ, जिस प्रकार खर आदि का वध हुआ उसी प्रकार तेरे पति आदि का वध होगा और लंका कुचल दी जायेगी। पापिष्ठ ! तू अब एक अक्षर भी मेरे सामने बोलेगी नहीं और तेरा काला मुँह भी मुझे बतायेगी नहीं।

सीताजी की आँखों से अंगारे बरसने लगे—वाणी से लावा झरने लगा—मंदोदरी स्तब्ध हो गई—काँप उठी ! अधिक प्रहार सहन करने में समर्थ न थी। वहाँ से खड़ी हुई और चल पड़ी। उसकी समझ में कुछ नहीं आया।

'तो फिर सीता प्रसन्न क्यों थी ? त्रिजटा के समाचार क्या गलत थे ? नहीं। लंकापति के साथ खिलवाड़ करना काले सर्प के साथ खिलवाड़ करने के समान होता है, त्रिजटा ने प्रसन्नता

तो देखी ही होगी—तो, क्या यह प्रसन्न होने का और कोई कारण होगा ?'

त्रिजटा फीकी पड़ गई थी। वह मन्द २ गति से मंदोदरी के पीछे आती थी। अन्य परिचारिकाएं और उद्यान रक्षक उद्यान के बाहर पटरानी के पास एकत्रित हो गए, मंदोदरी ने सबके मुँह से सुना कि 'सीता आज प्रसन्न है।' तो उसके साथ ऐसा दुर्व्यवहार क्यों किया। इस प्रश्न ने मंदोदरी को आकुलित कर दिया। परन्तु उसने मन ही मन समाधान किया;

'मैं इस जंजाल में क्यों फँसू' सीता को वश करना सरल नहीं। लंकापति को जैसा योग्य लगे वैसा करें—अब मैं सीता को समझाने के लिये यहाँ नहीं आऊँगी।

भोजन का समय हो गया था। परिचारिकाएं और द्वार रक्षक भोजनार्थ चले गये। देवरमण उद्यान में सीता जी को प्रकट रूप से मिलने का हनुमान को अवसर प्राप्त हो गया।

हनुमान अशोक वृक्ष से नीचे उतर आये; और सीता के सामने नत-मस्तक प्रणाम कर खड़े रहे।

अचानक अपरिचित पुरुष को अपने सामने आकर खड़ा देखकर सीताजी ने तुरन्त अपने वस्त्र व्यवस्थित कर दिये। इसके पूर्व ही हनुमान बोले;

'देवी ! लक्ष्मण सहित श्री राम की जय हो। आपके कुशल-समाचार जानने हेतु श्री राम की आज्ञा से मैं यहां आया हूँ।

मैं वहाँ जाकर समाचार दूँगा जिससे श्री राम शत्रुवध के लिये यहाँ अविलंब आयेंगे। मैंने ही आपके उत्संग में श्री राम की निशानी के रूप में मुद्रिका डाली है।'

हनुमान ने पुन; अंजलि मस्तक से लगाकर वन्दना की। सीता की आँखें अश्रु-भीगी हो गई, हृदय गद्‌गद् हो गया, उन्होंने पूछा :

'वत्स ! तू कौन है' ? दुर्लंघ्य समुद्र तूने किस प्रकार पार किया ? मेरे प्राणनाथ कुशल हैं न ? सौमित्र के साथ तूने उन्हें कहाँ देखा ? किस प्रकार वे काल निर्गमन करते हैं ?'

'माता, मैं पवनंजयपुत्र हनुमान हूँ। मेरी जननी का नाम अँजना। विद्याशक्ति और व्योमयान से समुद्र लांघ कर मैं यहाँ आया हूँ

समस्त वानर द्वीप के अधिपति महाराजा सुग्रीव श्री राम के चरणों में सेवा करते हैं, लक्ष्मण सहित श्री राम वानरद्वीप की राजधानी किष्किन्धि में—उद्यान में वृक्ष के नीचे निवास कर रहे हैं।

देवी ! श्री राम आपके वियोग से दिनरात संतप्त है। दावानल पर्वत को भी जलाए उसी तरह उनका संताप समग्र वानरद्वीप को चितातुर वना रहा है और लक्ष्मण जी तो माँ विना गाय के वछड़े की भांति तड़फ रहे हैं—

निरन्तर चारों दिशाओं में देखते हुए वे क्षण भर के लिये भी सुख का अनुभव नहीं करते रात और दिन वे मौन रहते

हैं—राम और लक्ष्मण—दोनों भाई क्षण में क्रोध और क्षण में शोक करते हैं……हाँ, सुग्रीवराज आश्वासन देते हैं, परन्तु वह आश्वासन उन्हें सुख दे नहीं सकता। संतप्त हृदय को स्नेहीजनों के आश्वासन शांति दे नहीं सकते।

'देवी! जैसे २ विद्याधर दुनिया के राजा-महाराजाओं को समाचार मिलते हैं वैसे २ वे श्री राम की सेवा में उपस्थित होते जाते हैं। आपके भाई भामंडल भी किष्किन्धि आ पहुँचे हैं। पाताल लंका का अधिपति विराध अंगरक्षक बनकर खड़ा है। राजा महेन्द्र और प्रसन्नकीर्ति शत्रुवध हेतु जोशपूर्ण हो रहे हैं; किष्किन्धि का उद्यान एक विराट राजसभा बन गया है, सभी श्री राम लक्ष्मण की चरण-सेवा में तत्पर हैं :

महाराजा सुग्रीव ने आपके कुशल-समाचार प्राप्त करने हेतु सभी दिशाओं में खोज करवाई। स्वयं सुग्रीव ने ही पता लगाया कि रावण आपका अपहरण कर गया है। यहां आकर आपको श्री राम के समाचार देने का कार्य महाराजा सुग्रीव के आग्रह से श्री राम ने मुझे सौंपा। आपको मुझ पर विश्वास हो इस हेतु उन्होंने अपनी मुद्रिका दी और कहा कि 'आए तब देवी का मुकुट लेकर आना।'

अतः मुझे आपका मुकुट दें, मैं उसे श्री राम को दूँगा उन्हें मेरे कार्य की सफलता की प्रतीति होगी और मुकुट देखकर प्रत्यक्ष आपसे मिलने का आनंदानुभव करेंगे।

सीताजी की आँखों से अश्रुप्रवाह वह ही रहा था—उन्होंने तुरन्त अपना मुकुट हनुमान को दिया और कहा :

'यह मेरा मुकुट लेकर वत्स ! तू त्वरित गति से चला जा। यदि अधिक समय यहाँ रुका तो उपद्रव होगा। उस दुष्ट रावण को तेरे आगमन के समाचार मिलते ही वह यहाँ दौड़ा आएगा ....।

'माता', ! आप चिंता न करें, मैं इस बात का उत्तर बाद में देता हूँ, अब यह भोजन पड़ा है इसे खा लो। इक्कीस दिनों के उपवास का पारायण कर लो। मेरी प्रार्थना है आप भोजन करलें, फिर ही मैं यहाँ से जाऊँगा।

हनुमान के आग्रह और श्री राम के सैन से प्रसन्न होकर सीता जी ने देवरमण उद्यान में २१ दिन के उपवास का पारायण किया। हनुमान वहीं खड़े रहे। सीताजी भोजन करती थी और हनुमान कहते थे :

'माता ! आप मेरी माता हैं, वात्सल्य से प्रेरित होकर आप मुझे यहाँ से शीघ्र जाने की बात कहती हैं..........आपको भय लगता है न ? रावण के सिपाही मुझे पकड़ कर मेरा वध करेंगे, ऐसा मानती हैं न ?

माता ! मैं श्री राम-लक्ष्मण का दूत हूँ ! तीनों लोक पराजित करने की मेरी ताकत है.......भले ही रंक रावण अपनी सैना के साथ मेरे सामने आए; मैं इन सबसे निपट सकता हूँ।

माता ! आप अनुमति दें, मेरे स्कंध पर आपको बिठाकर श्री राम के पास ले जाऊँ—सैन्य सहित रावण देखता रह जाए..........दिन दहाड़े लंका में से मैं आपको ले जाऊँ चोर

रावण तो जंगल में से राम-लक्ष्मण की दृष्टि से बचाकर आपको उड़ा लाया—मैं सबके देखते २ आपको ले जाऊं।

सीताजी के मुख पर संतोष, आनंद और हर्ष उभर आया। 'वत्स! तेरे लिये जो तू कहता है वह सब शक्य है। तू राम-लक्ष्मण का दूत है 'वत्स! परन्तु मैं तेरे स्कंध पर न बैठूंगी। पर—पुरुष का स्पर्श भी मैं नहीं करती। तू जाकर आर्य पुत्र को सारे समाचार देना, फिर जैसा उचित होगा वैसा आर्यपुत्र करेंगे। तूने अपना कर्तव्य जरा भी त्रुटि बिना पूर्ण किया है। वास्तव में तू पराक्रमी सन्निष्ठ राम-सेवक है। अब मेरा दुःख मिटा—तू जा; मैं अब श्री राम-लक्ष्मण के साथ तेरी प्रतीक्षा में यहाँ बैठी हूँ।'

हनुमान का पराक्रम

'मैं जाता हूँ, परन्तु राक्षसों को अपने पराक्रम की चपलता बताता जाऊँगा। स्वयं को विश्व विजेता मानता हुआ रावण दूसरे के पराक्रम की परवाह नहीं करता—कोई बात नहीं। आज वह श्री राम के सेवक के पराक्रम को भी देख ले।'

हनुमान ने सीताजी के सामने अनुज्ञा—प्रार्थना की। सीताजी ने सहमति प्रकट की। हनुमान ने नमन किया और घटा को कंपित करते हुए वे उद्यान में दौड़ पड़े।

हनुमान ने देवरमण उद्यान में भंगलीला खेलना शुरू किया।

अशोक वृक्षों को तोड़ने लगे। वकुल वृक्षों को उखाड़ फेंका, सहकार वृक्षों को नष्ट किया, चंपक वृक्षों का भयंकर संहार किया, मंदार और कदली वृक्षों का विनाश किया—वृक्षों के टूटने और गिरने की आवाज द्वार रक्षकों ने सुनी। उद्यान के चारों द्वारों के रक्षक शस्त्र लेकर दौड़े आए। देवरमण उद्यान का कचरधान निकालते हनुमान की हत्या करने के लिये हाथ में मुगद्र लेकर वे हनुमान को पकड़ने का प्रयत्न करने लगे। हनुमान ने तो। इन्हीं भीमकाय वृक्षों को शस्त्र बनाया! 'सर्वमस्त्रं बलीयसाम्' बलवान् पुरुषों के लिये सब कुछ शस्त्र रूप होता है।

एक २ प्रहार से एक २ द्वार रक्षक को यमलोक में पहुँचाते हुए हनुमान ने हाहाकार मचा दिया। एक निशाचर सैनिक दौड़ा रावण के पास। रावण उद्विग्न था। मंदोदरी ने सीता के प्रहार अक्षरशः रावण को कह सुनाए थे। रावण को सीता की प्रसन्नता का रहस्य समझ में आता न था। तो फिर सीता आज प्रसन्न क्यों थी? क्या वह अभी तक मुझे चाहती नहीं? प्रहरी ने आकर रावण की विचार धारा भग्न की।

'महाराजा! देवरमण उद्यान में भयंकर तोड़फोड़ हो रही है—किसी बलवान् विद्याधर कुमार ने उद्यान का नाश करना शुरू किया है। मेरे सिवाय अन्य रक्षकों को भी मार डाला है।

'अक्षकुमार को बुलाओ।'

'देवरमण में विद्याधर कुमार? कौन होगा वह? लंका में वह कैसे घुस आया? लंका का अभेद्य दुर्ग उसने कैसे लांघ लिया? देवरमण उद्यान में क्यों गया? क्या वह राम का कोई अनुचर होगा? क्या वह सीता से मिला होगा?

'आज्ञा प्रदान करें पिताजी!' अक्षकुमार ने दशमुख को वंदन कर कहा।

'देवरमण उद्यान में सैनिकों को लेकर जा। वहाँ कोई दुष्ट विद्याधर कुमार घुस गया है और बड़ा उपद्रव मचा रहा है। उसे जीवित या मृत यहाँ पकड़ ला।'

'जैसी आज्ञा' अक्षकुमार प्रणाम कर सैनिकों के साथ उद्यान की ओर त्वरित गति से चला। सैनिकों ने उद्यान को

घेर लिया और अक्षकुमार उद्यान में प्रविष्ट होकर हनुमान की ओर दौड़ा।

हनुमान ने अक्षकुमार को ललकारा।

'भले ही आया! भोजन के प्रारम्भ में फल तो चाहिये न!'

'विशाल गर्जनाएँ न कर, कपि! अभी तू था, न था हो जाएगा।' अक्षकुमार ने बाण वर्षा शुरू कर दी। हनुमान ने प्रतिपक्षी बाण वर्षा कर अक्षकुमार को परेशान कर दिया। अक्षकुमार ने प्राणों की बाजी लगाकर एक के बाद एक तीक्ष्ण शस्त्रों से लड़ना शुरू किया। हनुमानजी ने भी सावधानी से मुकाबला करना शुरू किया। धीरे २ लड़कर हनुमान ने अक्षकुमार को उद्यान में ही बलि चढ़ा दिया।

रावण का पुत्र अक्षकुमार मारा गया—लंका में कोलाहल मच गया। उद्यान के एक सुरक्षित खंड में रही हुई सीताजी कांप उठी। हनुमान के अमंगल की शंका ने उन्हें आकुल-व्याकुल कर दिया। जिस पर प्रेम-स्नेह और वात्सल्य होता है, उसके अमंगल की शंका जल्दी पैदा होती है।

रावण को पुत्रवध के समाचार मिले। उसका हृदय वैर की आग में धधक उठा। फौरन इन्द्रजीत को बुलाकर आज्ञा दी।

'इन्द्रजीत! तू जल्दी जा और उस अधम वानरकुमार को बाँधकर ले आ।' इन्द्रजीत पर यह आपत्ति अकल्पित थी।

उसकी बुद्धि में बात बैठती न थी कि एक कपि-सैनिक लंका में कैसे घुस आया ?

सारी बात का रहस्य लंका में तीन व्यक्ति ही जानते थे। एक विभीषण, दूसरी सीता और तीसरी लंकासुंदरी। 'देवरमण उद्यान में उपद्रव करने वाला हनुमान है', यह बात अभी तक रावण को मालूम न हुई थी। इन्द्रजीत् ने उद्यान में पहुंच कर देखा तो सामने हनुमान! इन्द्रजीत् हनमान को भली प्रकार जानता था। वरुण के साथ युद्ध में हनुमान के पराक्रम को उसने प्रत्यक्ष देखा था, परन्तु भ्रातृवध से झुंझलाया हुआ इन्द्रजीत पूर्व परिचय की मधुरता मानने के लिये तैयार न था। उसने हनुमान से कहा—

'अरे वानर! तू खड़ा रह। अक्षकुमार के रक्त से लिप्त भूमि पर तेरे रक्त का छिड़काव करके ही मैं चैन लूंगा।'

दोनों ही महाबाहु वीरों के बीच कल्पान्त जैसा दारुण युद्ध तन गया। लंका के राजमार्ग, गलियां और महल जाग उठे। लंका के किले के बाहर तो युद्ध खेले गए थे, लंका के मध्य भाग में खेला जाता युद्ध एक आश्चर्य था। एक ही व्यक्ति समग्र राक्षस वीरों की शक्ति तोल रहा था—यह एक साहस था। हनूमान को युद्ध न करना था, उसे तो राक्षस वीरों के पराक्रम को लज्जित कर, श्रीराम के एक-एक सुभट की शक्ति का परिचय देकर, किष्किन्धि का मार्ग पकड़ना था यह तो उसके लिये एक नटखटपन था—दो घड़ी की मौज थी—सीताजी को प्रसन्न करने का एक खेल था।

जितने शस्त्रों का उपयोग इन्द्रजीत ने हनुमान पर किया उनसे कहीं अधिक शस्त्रों से हनुमान ने इन्द्रजीत् को परेशान किया। इन्द्रजीत् के सैनिकों में से कोई दूसरी वार हनमान पर प्रहार करने के लिये बचता ही न था ! सैनिकों और शस्त्रों की सामग्री का अभाव होते ही इन्द्रजीत सोच में डूव गया। वहां सामने ही हनुमान का अट्टहास्य गूंज उठा—'इन्द्रजीत् ! ऐसा श्रीराम के एक ही सुभट के साथ संग्राम है। ऐसे लाखों-करोड़ों सुभटों का सामना कैसे करेगा ? विनाश-लीला से बच निकलना है तो तेरे पिता को समझा कि सीताजी को श्रीराम को सौंप आए !'

इन्द्रजीत् ने अपना अन्तिम अस्त्र सम्हाला। उसने नागपाशास्त्र हनुमान पर छोड़ा। सिर से पांव तक हनुमान दृढ़ नागपाश से वँध गए। इन्द्रजीत के मुख पर विजय का गर्व उछल आया—हनुमान ने इस गर्व को टिकने दिया—नागपाश को एक ही अंग मोड़ से तोड़कर मुक्त बनने में हनुमान समर्थ थे, परन्तु हनुमान ने नागपाश को शारीरिक शक्ति से तोड़ने का प्रयोग लंका की राजसभा में करने का निर्णय कर, उस समय तो इन्द्रजीत् को बेआबरू होने से बचा लिया।

वड़े परिश्रम के पश्चात् वहुत वरवादी मोल लेने के पश्चात् भी प्राप्त विजय—वह भी सच्ची नहीं—कपटपूर्ण ! इन्द्रजीत् जैसे अप्रतिम योद्धा को खुश कर ही देती है। हनुमान को लेकर इन्द्रजीत् रावण के पास आ पहुँचा। अनेक राक्षस सुभट हनुमान को कुतूहल से, भय से, क्रोध से देख रहे थे। हनुमान को रावण के सामने खड़ा किया गया था। रावण का क्रोध समाता न था। वह चिल्ला उठा, 'अरे दुर्वुद्धि, यह तू ने

क्या किया ? आजन्म तू मेरा सेवक और तूने किसका आश्रय लिया ? दिन में दो बार जिसे खाने को भी पूरा नहीं मिलता, वन-वन जो भटकता है, जंगल के फल खाकर जो दिन काटता है. मलीन देह और वस्त्र—जंगल के भील जैसे ये भाई तुझ पर प्रसन्न होकर तुझे क्या देंगे ? कौन-सा राज्य देने वाले हैं ? मुझे पता चला है कि तू उनके कहने से यहाँ आया है। यहाँ आकर तूने क्या सार निकाला ? तेरे प्राणों की तूने बाजी लगा दी।

सचमुच तेरे ये स्वामी दक्ष हैं ! धूर्त हैं""तुझे यहां भेजकर पराये हाथों अंगारे उठवाए ! खैर ! मैं तुझे अपना श्रेष्ठ सेवक मानता था, आज तू अन्य का दूत बनकर मेरे पास आया है"" अत: तू अवध्य है, मात्र तुझे कुछ दण्ड देकर छोड़ दूंगा; परन्तु दुर्मति तूने सचमुच गलत साहस किया है"""

हनुमान ने रावण की बात सुनली। उसके अंग अंग में आग लग गई। उसने उग्र भाषा में रावण की खबर लेली।

'अरे दशमुख ! मैं कब तेरा सेवक था ? तू कब से मेरा स्वामी बन गया ? तुझे ऐसा बोलते शर्म नहीं आती। ऐ निर्लज्ज, भूल जाता है वह युद्ध का प्रसंग ? जब वरुणराज ने तेरे बहनोई खर विद्याधर को पकड़कर कारागार की हवा खिलाई थी, तब तेरी मित्रता से मेरे पिता ने वरुणराज के पास से खर को मुक्त किया था। और इसी वरुणराज के पुत्रों के साथ युद्ध में जब राजीव-संजीव ने तुझे दिन दहाड़े आकाश के तारे दिखाए थे तब तूने मुझे सहायता के लिए बुलाया था। याद है वे दिन ? वरुण के दारुण पुत्रों के हाथों करुण स्थिति में मरते तुझे किसने बचाया था ? यह सब तू आज भूल रहा है और तू मुझे अपना सेवक बताने का साहस करता है। मेरा स्वामी बनता

है ? नराधम तू अब सहायता के योग्य नही; तू महापापी है, परस्त्री का अपहरण करने वाले तुझ जैसे के साथ बात करने में भी पाप लगता है।

तेरे परिवार में मुझे कोई ऐसा पराक्रमी-शूरवीर दिखाई नहीं देता जो तेरी रक्षा करे। एक सौमित्र से भी बचना तेरे लिये अशक्य है, बड़े भाई श्री राम की तो बात ही छोड़ ! तेरा पाप खूब भर गया है–अब तेरी आ बनी है।'

रावण आग बबूला हो गया.........हनुमान के छोड़े हुए अंगारों ने उसे आग बबूला कर दिया। रावण के जीवन में यह पहला ही अवसर था जब कि उसके मुंह पर उसके कान के कीड़े मरने लग जाँय ऐसा कोई सुनाए। रावण सहन कर न सका। वह सिंहासन से पाँव पटकता खड़ा हो गया। दांत से ओठ चबाता भ्रकूटिभीषण बनकर वह बोला :

'नादान ! तूने मुझे अकारण तेरा शत्रु बनाया, अतः अब तू मौत का ही इच्छुक है। तुझ पर वैरागी बनने में कोई अर्थ नहीं.......तू दूत है, तेरी हत्या करना अभी भी मुझे जंचता नहीं, परन्तु मैं आज्ञा देता हूँ कि तुझे गधे पर बिठाकर आगे ढोल बजवाकर लंका की गली-गली में फेरकर लंका के बाहर निकाल दिया जाय.......'

अभी तो रावण आगे कुछ बोले इतने में तो वीर हनुमान ने नागपाश तोड़ फेंका ! नलिनी के नाभ से हाथी बांधा जाय तो हाथी कहां तक उस बंधन को रक्खे ?

बिजली की चमक के वेग से हनुमान उछले–एक लात मार कर रावण को गिरा दिया—दूसरी लात से उसके मुकट को

चकनाचूर कर दिया और उसी त्वरित गति से हनुमान राज-महालय में से बाहर निकल कर लंका का विनाश करते हुए बाहर निकल गए।

पकड़ो—मारो—पकड़ो—की आवाजें गर्ज उठी परन्तु उस कृतान्त काल के पास जाए कौन ? एक ही झटके में नाग-पाश तोड़कर, एक जादूगर की अदा से रावण को भूमि पर गिराकर उसके मुकुट को चकनाचूर कर अदृश्य होने वाले हनुमान को इन्द्रजीत् देखता ही रह गया। वह वहाँ स्तब्ध हो गया।

अक्षकुमार की मृत्यु और रावण का भयंकर अपमान, हनुमान का यह घोर साहस—इन्द्रजीत के लिये एक प्रश्न चिह्न बन गया। रावण का आक्रोश और उछलकूद सब व्यर्थ थे। एक रात में श्रीराम का सुभट क्या कर सकता है—इस विचार ने रावण को तो नहीं, पर इन्द्रजीत को चलित कर दिया।

रावण के हृदय में एक परिवर्तन हुआ ! सीता के विचारों में मूढ बना हुआ उसका चित्त, अब वैर का बदला लेने की ओर मुड़ा। वह अभिमान की प्रत्यक्ष मूर्ति-सदृश था। हनुमान द्वारा किया हुआ घोर अपमान रावण के लिये मृत्यु से बढ़कर था।

विभीषण हनुमान की लंका की प्रवृत्ति से संपूर्ण जान-कारी प्राप्त कर रहा था। देवरमण में खेले गए युद्ध में हुई बरबादी और सम्राट के महल में हुआ सम्राट का घोर अपमान—तथा लंका की तोड़फोड़—यह सब उसने जान लिया था। यह सब क्यों ? इस प्रश्न के उत्तर में 'एक लंकापति की जिद्द

के खातिर' यही उत्तर मिलता था। कैसे यह जिद्द छुड़वाई जाए इसका कोई उत्तर विभीषण के पास न था। परन्तु 'जिद्द न छोड़े तो क्या होगा?' इसका उत्तर बिल्कुल स्पष्ट था। 'लंका का विनाश ......राक्षस वंश का अंत।'

विभीषण का अंतःकरण रो उठता था। मिथ्याभिमानी रावण की अनाचारी, अत्याचारी और पाशवी वृत्ति-प्रवृत्तियों से उसका हृदय संतप्त हो उठा था—रावण के आसपास घिरे रहने वाले खुशामदखोरों से विभीषण को भारी घृणा थी, परन्तु घृणा का कोई प्रभाव इन खुशामदखोरों पर नहीं होता था, क्योंकि लंकापति के उन पर चार हाथ थे! पवित्र विभीषण की बातों की अपेक्षा इन चापलूसों की बातों पर रावण अधिक विश्वास रखता था। विभीषण को इस परिस्थिति का अंत अति दुःखद और सर्व विनाश में दिखाई देता था—इस प्रकार विभीषण भविष्य को अंधकारमय दुःखपूर्ण और सर्वविनाश में देखता था।

देवरमण उद्यान में बैठी हुई सीताजी भविष्य को प्रकाशमय सुखपूर्ण और नूतन सृजन में देखती थी। हनुमान के आगमन ने सीताजी के सारी निराशाएँ दूर कर दी थी। सीताजी की कल्पना सृष्टि में आशाओं के झरने फूट चले थे। श्रीराम और लक्ष्मण आएँगे। घोर संग्राम में रावण मारा जाएगा। श्रीराम—मेरे प्राणनाथ—आकर मुझे अयोध्या ले जाएँगे।' इस सृजन के ढाँचे में अनेक आकार वे बाँध रही थी।

अब वे नित्य भोजन करती थीं। पंच परमेष्ठि के ध्यान में एकाग्र बनती थीं और मुख पर प्रसन्नता धारण करती थी।

हनुमान ?

सीताजी के मुकुट की सम्पत्ति कमाकर हनुमान ने किष्किन्धि की ओर आकाश मार्ग से प्रयाण किया परन्तु जाते-जाते अपनी नूतन धर्म पत्नि लंका सुंदरी से मिलकर गए थे। लंकासुंदरी को पुनः अविलंब लंका आने का आश्वासन देकर, वे चले थे। मार्ग में कहीं भी रुके विना—कहीं भी तूफान मचाए विना—सीधे किष्किन्धि पहुंचना था।

जिस समय हनुमान का आकाशयान किष्किन्धि पर चक्कर काटता हुआ आ पहुंचा होगा तब श्रीराम, लक्ष्मण और भामंडल के मन की क्या गति हुई होगी, उसका वर्णन किसी प्राचीन ग्रंथ में नहीं मिलता।

श्रीराम!

किष्किन्धि नगर के भव्य उद्यान में शोकाकुल राम!

बिना माँ के बछड़े की भाँति चीखते चिल्लाते लक्ष्मण!

हनुमानजी की सब प्रतीक्षा कर रहे थे। लंका में सीता जी से मिलकर, उनका मुकुट लेकर लौटना था। सुग्रीव आदि इस कार्य को दुष्कर समझते थे। उनकी समझ अर्थहीन न थी। रावण और उसकी लंका से सुग्रीव आदि राजा लोग सुपरिचित थे।

हनुमान का आकाशयान जिस समय किष्किन्धि के उद्यान में उतरा तब लक्ष्मण बोल उठे—'हनुमान आ गए।'

श्रीराम खड़े हो गए, दौड़ते हुए आ रहे हनुमान की ओर श्रीराम दौड़े—गले लगे हनुमान ने श्रीराम के चरणों में नमस्कार कर, सीताजी का दिया हुआ मुकुट दोनों हाथों से सम्मानपूर्वक श्रीराम को सौंपा। राम मुकुट को देखते ही उसे सीने से लगाकर आँखें बंद कर दो मिनिट मौन रहे मानो साक्षात् सीता का मिलन हुआ हो, ऐसे अवर्णनीय आनंद का राम ने अनुभव किया।

सब वृक्षों की घटा में बैठे।

हनुमान श्रीराम के चरणों में बैठ गए।

'क्यों ? सीता कुशल है।'

'नाथ ! सीता कुशल कैसे हो ? आपके बिना पानी मछली की भाँति तड़कती है, निरंतर राम राम जपती रहती है।'

'तुमने मेरी मुद्रिका दी तब ?'

'मैंने अदृश्य रहकर देवी के उत्संग में मुद्रिका डाली थी। मुद्रिका को देखते ही देवी आश्चर्य में डूब गईं। चारों ओर देखा—कुछ भी दिखाई दिया नहीं। बार २ अंगूठी को हाथ में लेकर छाती से लगाती हुई देवी अवर्णनीय आनंद का अनुभव करने लगी।'

'फिर ?'

'फिर तो वहाँ लंका की पटरानी मंदोदरी आई—रावण का पक्ष प्रबल करने। अहा ! देवी ने मंदोदरी को क्या वाणी

सुनाई है······मंदोदरी फीकी होकर गई—फिर मैं देवी के सामने गया—नमस्कार किया और आपका संदेश दिया।'

'फिर क्या हुआ ?'

'मैंने देवी का मुकुट मांगा। देवी ने दिया—हां, इक्कीस दिन से देवी ने भोजन ही न किया था।'

'क्या इक्कीस दिन के उपवास ?'

'जी हां ! जब तक आपके समाचार न मिलें तब तक अन्न का त्याग कर रक्खा था। मैंने आग्रह करके पारायण करवाया।'

'तब तक रावण को तुम्हारा पता ही न चला' ?

'नहीं ! मैंने लंका में प्रविष्ट होकर लंकासुंदरी के साथ शादी की, फिर विभीषण से मिला। तत्पश्चात् देवी के उद्यान में गया।'

हनुमानजी ने लंकासुंदरी के साथ पाणिग्रहण का उल्लेख किया। सब प्रसन्न हो गए। विभीषण के साथ हुई बातचीत से सभी प्रभावित हो गए और जब हनुमानजी ने अक्षकुमार का वध, इन्द्रजित के साथ युद्ध- नागपाश का बंधन, रावण के साथ मुलाकात-तर्कगर्भ चर्चा-अंत में रावण के मुकुट को लात मार कर तोड़ डालने का साहस यह सब सुना, तब लक्ष्मणजी का सीना गर्व से फूलने लगा। उन्होंने हनुमान को गले लगाया और बहुत २ धन्यवाद दिया। श्री राम ने कहा—

हनुमान ! तुम सचमुच ही महान, पराक्रमी, प्रतिष्ठावान

और कर्तव्यपरायण मित्र हो। तुम्हारे जाने से देवी वैदेहि को कितनी शांति मिली ! कितनी आशा बँधी ! और दुष्ट रावण को भी पता चल गया कि युद्ध में किसका सामना करना है।'

सुग्रीव हनुमान को नगर में ले गए। स्नान-भोजन आदि कर हनुमान को थोड़ा विश्राम करने का कहकर सुग्रीव उद्यान में आए ! लक्ष्मणजी ने कहा—

'सुग्रीवराज ! अब अविलंब लंका प्रयाण की तैयारी करनी चाहिये।'

'जैसी आज्ञा ! सुग्रीव ने लक्ष्मणजी की आज्ञा शिरोधार्य कर ली।

उसी संध्या को किष्किन्धि के उद्यान में विद्याधर राजाओं की विचार परिषद मिली और लंका प्रयाण की पूर्व तैयारी के विषय में विचार विमर्श हुआ। सैन्य का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व सुग्रीव को सौंपा गया। महेन्द्र, विराध, भामंडल आदि राजाओं ने अपनी २ राजधानिओं में निजी दूत भेजकर सैन्य को बुलवा लिया।

किष्किन्धि युद्ध की धुँआधार तैयारियों में दिनरात जुट गयी।

युद्ध की प्रचंड तैयारियाँ होने लगीं।

किष्किन्धि के आसपास का प्रदेश आकाशयान हाथी, घोड़े, रथ आदि लाखों वाहनों से व्याप्त हो गया। लाखों वीर सैनिक और करोड़ों शस्त्र जमा होने लगे। वाहन, शस्त्र और सुभटों की व्यवस्था चन्द्ररश्मि कर रहा था। सुग्रीव, भामंडल, प्रसन्न-

विमान गतिशील था। उसके पीछे दूसरे एक हजार विमान शस्त्रों के भंडार लेकर उड़ रहे थे। उनके पीछे विराध का छोटा सा विमान चोकीदारी करता हुआ उड़ रहा था। इस विमान से थोड़े अन्तर पर दो हजार विमान, हाथी, घोड़े और रथ लेकर उड़ रहे थे।

उनके पोछे एक भव्य देदिप्यमान विमान श्रीराम लक्ष्मण को लेकर चलता था। उनके पीछे चुने हुए एक लाख वीर योद्धाओं को लेकर एक हजार विमानों का नेतृत्व करता हुआ सुग्रीव उड़ रहा था। सबसे अन्त में सौ विमान सैन्य के परि-चारकों के काफिले को लेकर चले आ रहे थे।

सब को जैसा युद्ध का जोश था वैसा ही लंका जाने की भी उत्कंठा थी। जबकि हनुमानजी ने तो मार्ग में आते हुए राजाओं को पराजित कर सैन्य में उन्हें भी भर्ती करने का संकल्प कर रक्खा था।

सैन्य समुद्र के ऊपर होकर प्रस्थान कर रहा था।

इस समुद्र के अधिपति थे राजा सेतु और समुद्र। समुद्र के मध्य वेलंधर पर्वत पर वेलंधर नगर में उनकी राजधानी थी। उन्होंने इस विराट सैन्य को आकाशमार्ग से प्रस्थान करते हुए देखा। फौरन उन्होंने रणभेरो बजवाई और सेन्य के अग्रभाग ने युद्ध आरंभ कर दिया।

अग्रभाग में हनुमान थे इस बात का शायद इन राजाओं को पता न था अथवा जानते हुए भी उन्होंने उपेक्षा की हो! हनु-मान ने चुनौति को स्वीकार किया—परन्तु साथ बैठे हुए नल और नील ने हनुमान को रोककर कहाः—

'आपका काम लंका के रहवान में है, यहां तो हम ही इस काम को निवट लें।

आकाश में ही युद्ध छिड़ गया। समुद्र और सेतु के सामने नल और नील जूझ पड़े। सैन्य युद्ध प्रारंभ हो इसके पूर्व तो नल ने समुद्र को बांध लिया और नील ने सेतु को बांध डाला। हनुमान ने कहा :

'यह प्रथम प्रसाद श्रीराम के चरणों में रख आओ।'

दोनों राजाओं को लेकर नल-नील श्रीराम-लक्ष्मण के विमान के पास आए।

'इन दोनों उद्धत राजाओं ने हमारे सैन्य के अग्र भाग में युद्ध कर हमारी गति रोकी थी। इन्हें हमने आपके सम्मुख उपस्थित किए हैं।'

दोनों राजा श्रीराम के चरणों में झुक गए। शरणागति स्वीकार की। श्रीराम ने दोनो राजाओं को वंधन मुक्त किया और उनका राज्य उन्हें पुनः लौटाया।

महान् पुरुषों के सामने जव शत्रु भी पराजित होकर झुक जाते हैं तव वे उन पर कृपालु होते हैं।

राजा समुद्र ने निवेदन किया :

'कृपानाथ ! आज रात वेलंधरपुर में विराजे। कल प्रातः प्रयाण करें।'

श्रीराम ने राजा समुद्र की प्रार्थना स्वीकार की। नल-नील के साथ हनुमान को संदेश भेजा कि 'सैन्य नीचे उतारे।'

वेलंधर पर्वत सैन्य से घिर गया।

श्रीराम को सपरिवार राजमहल में ले जाकर समुद्र ने निवेदन किया :

'कृपालु ! मेरी तीन रूपाभिराम कन्याओं के साथ पाणि-ग्रहण कर मुझे कृतार्थ करें।'

श्रीराम की आज्ञा से लक्ष्मणजी के साथ तीनों कन्याओं का पाणिग्रहण किया गया। प्रयाण की प्रथम रात्रि वहाँ विताई

दूसरे दिन प्रातः सैना आगे वढ़ी। राजा समुद्र और सेतु भी अपनी सैना के साथ युद्ध प्रयाण में शामिल हुए। दोनों राजाओं को हनुमान के विमान में स्थान दिया गया। राजा समुद्र ने हनुमान से कहा :

'आगे सुवेलाद्रि पर सुवेल नामक पराक्रमी राजा है। यदि उसे जीत लिया जाय तो वह हमारे लिए वड़ा उपयोगी सिद्ध होगा।

हनुमान ने यह समाचार सहर्ष स्वीकार कर लिया। विमान सुवेलाद्रि पर आए कि हनुमान ने रणभेरी वजवा दी। राजा सुवेल ने चुनौति स्वीकार कर ली। हजारों सुभटों के साथ उसने आकाश में ही भीषण आक्रमण कर दिया। भामंडल ने अपने विमान को हनुमान के विमान के पास ले जाकर कहा :

'सुवेल से मैं ही निवट लूँगा।'

'ठीक है तो', हनुमान ने सहमति दी। भामंडल और सुवेल के वीच घमासान युद्ध छिड़ा। सुवेल के सुभटों को नल-नील ने

भगा दिया। भामंडल ने सुवेल को अल्प समय में ही युद्ध बन्दी बना दिया।

राजा सुवेल भी श्रीराम के पास ले जाया गया। उसने शरणागति स्वीकार की। एक रात सुवेलाद्रि पर बिताकर आगे प्रयाण किया गया।

हनुमान ने श्रीराम से कहा :

'यहाँ से आगे हंस-द्वीप आता है। वहां से लंका निकट है, अतः हम हंस द्वीप के राजा हंसरथ को जीतकर हंस द्वीप पर ही सैन्य का पड़ाव डालें। व्यूह की दृष्टि से यह स्थान महत्वपूर्ण है।

सुग्रीव ने हनुमान की बात का समर्थन किया। श्रीराम ने हंस द्वीप पर रहने की अनुमति दी। सैन्य हंसद्वीप की ओर आगे बढ़ा। हंसरथ को समाचार मिल गए थे। उसने युद्ध की तैयारी कर ही रक्खी थी। हनुमान ने नल और नील को हंसरथ के पास भेजा। बिना युद्ध के यदि हंसरथ शरण स्वीकार कर ले, तो युद्ध टल जाय। नल-नील के समझाने से हंसरथ श्रीराम की शरण में आया और सम्मानपूर्वक राम-लक्ष्मण को नगर में ले गया। हंस द्वीप पर व्यवस्थित सैन्य का पड़ाव डाला गया। चारों ओर पूर्ण सुरक्षा कर दी गई। सुरक्षा का भार चन्द्ररश्मि और नल-नील को सौंपा गया।

श्रीराम और लक्ष्मण विशाल सैन्य के साथ हंसद्वीप तक आने के समाचार रावण को मिल गए।

लंका की गलियों में राम-सैन्य की बातें पूरे जोर-शोर से चलने लगी। लंका में भारी खलबली मच गई।

रावण ने फौरन युद्ध-परिषद् बुलाकर कुंभकर्ण, विभीषण, इन्द्रजित, हस्त, प्रहस्त, मारीच, सारण आदि पराक्रमी वीरों के साथ विचार-विमर्श किया। मारिच ने कहा—

'श्रीराम की सेना में अनेक विद्याधर राजा शामिल हुए हैं। वानर द्वीप का अधिपति सुग्रीव, बालिपुत्र चन्द्ररश्मि, पाताल लंका का राजा विराध, महेन्द्रपुर के वयोवृद्ध राजा महेन्द्र, भामंडल, राजा समुद्र और सेतु आदि के अतिरिक्त वीर हनुमान नल-नील आदि हजारों लाखों सुभटों के साथ श्रीराम हंस द्वीप पर बैठे हैं। यह निवेदन करने में मेरा प्रयोजन हमारी तैयारियों से है। हमें बड़ी सतर्कता से तैयारियाँ करनी चाहिये।'

मारीच की बात सुनकर दशानन ने कहा :

'युद्ध की भेरियाँ बजवाओ। एक २ राक्षस सुभट इन वानरों का कौर बना देगा। मेरा एक २ वीर सेनानी राम की सेना का संहार करने के लिए शक्ति शाली है। तुम सब अविलंब युद्ध की तैयारी करो।

सब बातें शांतचित्त से सुनता हुआ विभीषण खड़ा हुआ और नमन कर कहा :

'राक्षसवंशभूषण! कृपा करें। मेरी दो बातें सुनकर उन पर गंभीर विचार करें–ऐसी मेरी प्रार्थना है।

सर्व प्रथम तो यह सोचें कि परस्त्री का अपहरण करने का जो कदम उठाया गया है क्या वह विचारपूर्वक उठाया गया है? क्या यह इहलोक और परलोक का विनाश करने वाला कृत्य से हमारा कुल कलंकित नहीं हुआ? सचमुच, इस कृत्य से मुझे

बड़ा दुःख हुआ है—शर्म के मारे मेरा मस्तक झुक जाता है। असत्य वर्षों के राक्षश वंश के इतिहास में ऐसा लज्जास्पद कृत्य किसी ने नहीं किया। खैर ! अभी कुछ भी विगड़ा नहीं। अपनी पत्नी को लेने के लिये श्रीराम आ रहे हैं, उन्हें उनकी पत्नी सोंप देने का आतिथ्य करें, इसमें हमारी अपकीर्ति होगी नहीं, या हमारे पराक्रम को कलंक लगने वाला नहीं, हाँ, इससे भूल सुधार हो जाएगी और श्रीराम-लक्ष्मण के साथ हमारी मित्रता जुड़ जाएगी।

यदि आप हठपूर्वक सीता को सम्मान के साथ पुनः न ही लौटाते तो राम येन केन प्रकारेण सीता को प्राप्त करके ही रहेंगे। इतना ही नहीं वल्कि समग्र राक्षस कुल का नाश करेंगे—आप और आपके सभी समर्थक युद्ध की आग में होम दिये जाएँगे। भले ही मारिच सारण आदि आपको सच्ची सलाह न दें, आपके अन्यायी कृत्य में दोप न दिखाएँ; परन्तु मैं तो आपका अनुज वंधु हूं। आपको सच्ची सलाह देना मेरा कर्तव्य है, भले ही सभवतः यह आपको प्रिय न लगे।

यदि मेरी वात पसंद आती हो तो युद्ध का विचार छोड़ दें और राम-लक्ष्मण के आतिथ्य की तैयारी करें, अन्यथा राम-लक्ष्मण तो वाद में, पहिले तो उनके चरणों का दास बना हुआ हनुमान। देखा उसका पराक्रम ? और अनुभव किया उसके साहसिक पुरुषार्थ का बड़े भाई। इस प्रकार कह कर मैं आपके पराक्रम की निन्दा नहीं करता, परन्तु एक सनातन सत्य समझा रहा हूँ कि अन्तिम विजय बल की नहीं होती, सत्य और न्याय की होती है—इसे न भूलें कि सत्य और न्याय आपके पक्ष में नहीं है……।

इन्द्र की संपत्ति और वैभव की अपेक्षा आपकी संपत्ति और वैभव अधिक है—फिर एक परस्त्री के खातिर यह सब क्यों खोने पर तुले हैं ?'

रावण उत्तेजनापूर्वक सब सुन रहा था। इन्द्रजित उछल पड़ा।

आप तो जन्म से ही भीरू हैं—आपने ही सारे कुल का नाश आमंत्रित किया है। पिताजी पर छींटे उछाल कर आप बता रहे हैं कि आप पिताजी के भाई नहीं है। दशानन जैसे सम्राट का अनुज ऐसी भीरुता बताए ? विद्या धरेन्द्र इन्द्र के जो विजेता हैं और सर्व संपत्ति के जो नेता हैं—ऐसे पिताजी के लिए आप कैसी हीन कल्पनाएँ कर रहे हैं ? आपको शर्म आनी चाहिये। मैं आपको आज तक पिता तुल्य समझता और मानता आया हूँ। अतः कहते हुए मेरी जिह्वा रुकती है''''अन्यथा कहता हूं कि आप ही कुल के संहारक हैं। पहले आपने ही पिताजी को झूठ बोलकर ठगे थे। दशरथ का वध करने की, लंका की राज सभा में प्रतिज्ञा करके गए थे न ? बिना वध किए लौट आए और पिताजी से कहा—'मैं वध कर आया हूँ''''कैसा छल—कैसा दंभ ?

अब उस दशरक्ष-पुत्र को आप बचाने चले हैं, क्यों ? इन भूचरों का भय दिखाते हैं। आपको जरा भी शर्म नहीं ? आपके समक्ष गुप्त मंत्रणा करना भी उचित नहीं। रावण की ओर मुड़कर इन्द्रजित् बोला—'पिताजी ! इन्हें मंत्रणा में से बाहर निकालें।'

'पिताजी ! इन्हें मंत्रणा में से बाहर निकालें।'

विभीषण के नेत्र क्रोध से लाल हो गए। वह बोला—

'शत्रु के पक्ष में मैं नहीं परन्तु पुत्ररूप में तू शत्रु पैदा हुआ है—तू कुल का नाश कर रहा है—महान् ऐश्वर्य और सुन्दरी के मोह में अन्धे बने हुए तेरे पिता का पक्ष लेकर तू कुल का नाश नहीं कर रहा है? क्या मूढ! अभी तो तेरे दूध के दांत हैं, तू क्या समझता है? 'विभीषण रावण की ओर मुड़कर बोला;

'राजन्! इस पुत्र से और आपके दुश्चरित्र से सर्वनाश होगा—अविलंब पतन होगा—'

अभिमानी रावण—विभीषण के तीक्ष्ण वाग्बाण सहन न कर सका। उसके क्रोध की सीमा न रही। भीषण खड्ग लेकर वह विभीषण की ओर धँसा। विभीषण ने भीषण रूप धारण किया निकट का पाषाण स्तंभ उखाड़कर उसे उठाकर वह रावण की ओर दौड़ा। दो मदोन्मत्त हाथी एक दूसरे का वध करने के लिये तैयार हुए, परन्तु फौरन कुम्भकर्ण, और इन्द्रजीत ने बीच-बचाव किया। कुम्भकर्ण विभीषण को पकड़ कर उसके आवास में ले गया। इन्द्रजीत् रावण को उसके निवास पर ले गया।

लंका के पतन की यह आगाही थी। गृहकलह ने पतन के लक्षण बताये। विभीषण की न्यायनिष्ठा रावण को प्रिय न लगी! रावण का अविचारीपन विभीषण को रुचिकर न लगा।

विभीषण रावण के प्रखर प्रताप से चकित न हुआ। उसने श्रीराम के साथ युद्ध करने से स्पष्ट मना ही कर दी।

रावण ने विभीषण को आज्ञा दी :—

'मेरी नगरी छोड़कर चला जा। अपने ही आश्रय पर अंगारा फेंकने वाला मुझे नहीं चाहिये।'

विभीषण के लिये अब दूसरा कोई विकल्प न था। लंका के साम्राज्य पर विभीषण का भी अधिकार था। उसने न्याय, नीति और निष्ठा के लिये सर्वस्व का त्याग करना स्वीकार किया।

विभीषण को कौन समझाने जाए? इन्द्रजीत् और मेघ वाहन तो रावण के ही समर्थक थे। जबकि मारीच आदि सामंत और मंत्रीगण विभीषण की बात तो हृदय से स्वीकार करते थे, परन्तु रावण को छोड़ने का उनमें मनोबल न था।

विभीषण ने लंका का त्याग किया।

लंका की प्रजा को जब राजकुल के आन्तरिक कलह का पता चला तब प्रजा की सहानुभूति विभीषण की ओर ढली, परन्तु रावण का विरोधकर नाश को न्यौता देने के लिये कौन तैयार हो? भौतिक वैभव में राचने में अभ्यस्त प्रजा सत्य के लिये सब कुछ त्यागने के लिये तैयार न थी।

विभीषण ने श्रीराम के सानिध्य में जाने का संकल्प कर हंसद्वीप की दिशा पकड़ी।

हंसद्वीप में लंका के राजकुल के कलह का वृतान्त चरपुरुषों के द्वारा पहुँच गया था, परन्तु विभीषण श्रीराम के पास आयगा—ऐसी कल्पना किसी को न थी।

आकाश मार्ग से विभीषण हंसद्वीप पर पहुँचा।

दूसरी ओर लंका में से विभीषण के जाने के पश्चात् लंका के सैन्य में खलबली मच गई। सैन्य में मतभेद हो गया। विभीषण की पवित्र छाया से और दीर्घ दृष्टि का सैन्य पर भारी प्रभाव था। 'विभीषण लंकापति को छोड़कर लंका से बाहर चले गए हैं,' ये समाचार प्राप्त होते ही सैन्य की प्रथम श्रेणी की तीस अक्षौहिणी (जैसे वर्तमान में डिवीजन कहलाते हैं) विभीषण का पक्ष लेकर, लंका से बाहर चली गई और विभीषण के आदेश की प्रतीक्षा करने लगीं।

अचानक विभीषण को हंसद्वीप पर देखकर सुग्रीव आदि चौंक उठे। सुग्रीव ने भामंडल से कहा :—

'मैं इस राक्षसकुल से सुपरिचित हूँ। भूत-डाकिनों पर विश्वास हो सकता है पर इन लोगों पर नहीं—

वे तुरन्त श्रीराम के पास पहुँचे। वहाँ हनुमान, महेन्द्र, नल-नील आदि उपस्थित थे। द्वारपाल ने प्रविष्ट होकर श्रीराम को प्रणाम किया और संदेश देते हुए कहा :—

'दशरथनंदन की सेवा में विभीषण उपस्थित होने के लिये द्वार पर खड़े हैं, आपकी आज्ञा हो तो वे आएँ।'

श्रीराम ने सुग्रीव की ओर देखा, सुग्रीव ने कहा :—

'स्वामिन्! राक्षसों की प्रकृति जन्म से ही मायाविनी होती है—क्षुद्र होती है; फिर भी विभीषण आये हैं, वे भले ही आएँ, जैसे भी होंगे-देख लेंगे।'

वहाँ एक वयोवृद्ध-अनुभवी विशाल नामक विद्याधर उपस्थित था, जो लंका के राजकुल को और उसमें भी विशेषकर विभीषण को अच्छी तरह से जानता था, उसने श्रीराम को प्रणामकर विनयपूर्वक कहा :—

'नाथ ! महाराजा सुग्रीव ने जो कहा है वह सब के लिये है; उनमें विभीषण अपवाद रुप हैं। विभीषण वास्तव में महात्मा हैं। धार्मिक वृत्ति के हैं और न्याय निष्ठ हैं। समग्र राक्षस कुल में ये ही एक पुरुष सत्य के आग्रही और न्याय के लिये सर्वस्व का त्याग करने वाले महापुरुष हैं।

लंका की अन्तिम से अन्तिम परिस्थिति से मैं ज्ञात हूँ। अभी कल ही लंका में रावण और विभीषण के बीच में भयंकर कलह हुआ था। विभीषण ने सीता को सम्मान पूर्वक आपको सौंप कर लंका में आपका आतिथ्य करने की सलाह दी थी जिस पर से यह कलह पैदा हो गया। अंत में रावण ने विभीषण को लंका छोड़कर चले जाने की आज्ञा दी और विभीषण आपकी सेवा में उपस्थित होने के लिये यहाँ आये हैं। अन्तिम समाचारों के अनुसार लंका की सेना में से ३० अक्षौहिणी सेना विभीषण के पीछे लंका से बाहर निकलकर विभीषण के आदेशों की प्रतीक्षा में खड़ी है। अतः आप निःशंक होकर विभीषण को बुलायें, ऐसी मेरी प्रार्थना है।

विशाल की बात सुनकर श्रीराम को प्रतीति हुई। उन्होंने द्वारपाल से कहा :—

'इन धर्मात्मा विभीषण को सम्मान पूर्वक ले आओ।'

विभीषण ने प्रवेश कर श्रीराम के चरणों में मस्तक झुका-कर वंदन किया। श्रीराम ने फौरन विभीषण की बाहु पकड़कर उन्हें खड़ा किया और उन्हें गले लगाया।

विभीषण ने कहा :—

'हे दशरथनन्दन, अन्याय के मार्ग पर चढ़े हुये मेरे अग्रजों का त्याग कर आपके पास आया हूँ। आप मुझे अपना भक्त समझें। सुग्रीव को जैसे आप आज्ञा दें, उसी प्रकार आप मुझे भी आज्ञा प्रदान करावें।'

श्रीराम विभीषण की नम्रता, सम्य भाषा और सौम्य-मुखाकृति पर प्रसन्न हो गये। उन्होंने कहा :—

'हे धर्मात्मा! आपकी सत्य-प्रियता और न्यायनिष्ठा की प्रशंसा मैंने सुन रखी है। आज आप उसकी कसौटी में उत्तीर्ण हुए हैं। मैं प्रसन्न हुआ हूँ। मैं आज ही आपको लंका का साम्राज्य देता हूँ। लंका के अधिपति आप!'

सुग्रीव, हनुमान और भामंडल की त्रिपुटी विभीषण को लेकर भोजन कुटिर में ले गये और युद्धव्यूह के सम्बन्ध में वार्तालाप शुरू किया। श्रीराम और लक्ष्मण भी भोजनादि से निवृत्त होकर वार्तालाप में सम्मिलित हुए।

७

भीषण युद्ध

प्रथम दिन

[प्रथम दिन के युद्ध का नेतृत्व नल-नील की बांधव जोड़ी को श्रीराम सौंपते हैं।]

रावण हस्त-प्रहस्त नाम के वीर राक्षस सेनापतियों को प्रथम दिन का युद्ध संचालन सौंपता है।

पराक्रमी नल हस्त-राक्षस का वध करते है। प्रहस्त नील के हाथों यमलोक पहुँचता है। हनुमान और प्रसन्नकीर्ति रणबांकुरे बनकर राक्षस सैन्य में भंयकर रक्तपात करते हैं तब अन्तिम प्रहर में राक्षस-सैन्य राम-सैन्य में हाहाकार फेला देता है और सूर्य अस्त हो जाता है।]

हंसद्वीप पर आठ दिन बीत गये।

आठ दिनों में सुग्रीव, हनुमान तथा भामंड़ल ने युद्ध की तेयारियों को अंतिम रूप दे दिया। विभीषण, सुग्रीव आदि के बुद्धि चातुर्य को देखकर प्रसन्न हो गया।

सुग्रीव ने राम से कहा :—

'सभी तैयारियाँ हो चुकी हैं। अब हमें लंका के द्वार खट-खटाने चाहियें।'

'प्रयाण आरंभ कर दें' श्रीराम ने आज्ञा दी। रणभेरियां बज उठीं.......लाखों सैनिकों के जयनाद ने लंका को कम्पित कर दिया। अल्प समय में ही लंका के सीमा प्रान्त की बीस योजन भूमि में श्रीराम की सेना ने डेरा डाल दिया। एक युद्ध नगर ही मानों बस गया हो।

चन्द्ररश्मि ने बीस योजन में छाये हुए सैन्य के चारों ओर सुरक्षा की व्यवस्था करदी। कोई भी राक्षस चरपुरुष युद्ध शिबिर में घुस न पाये ऐसा मजबूत संरक्षण कर सुग्रीव से कहा --

'सैन्य शिबिर के संरक्षण का आवश्यक प्रबन्ध हो चुका है। आप निश्चिन्त होकर अब युद्ध के मैदान में सेना को उतार सकते हैं।'

सुग्रीव, हनुमान और भामंडल अपने-अपने रथ में आरुढ हुए थे। सुग्रीव ने श्रीराम से कहा :—

'अब हम रण के मैदान में जाने की तैयारी करें। सुर्योदय होने में मात्र एक घटिका ही शेष है। आज के प्रथम दिन के युद्ध का नेतृत्व किसे सौंपना उचित है ?

'जैसा आपको उचित लगे, वैसा करें।'

'मेरी मान्यता के अनुसार आज का युद्ध नल और नील को सौंपें। इस बन्धु युगल के पराक्रम से राक्षस त्राहि-त्राहि पुकार उठेंगे।'

'ठीक है, इन वीर बंधुओं को ही सौंपें'।

तुरन्त नल और नील बुलवाये गये । श्रीराम ने इन वीर बंधुओं को सेनापति पद सौंपकर उन्हें आशीर्वाद दिया :—

'वीर पुरुषों ! आप मेरी सेना के शृंगार हैं, आज अपने पराक्रम से राक्षसों में कहर मचा दो ।'

'आपकी कृपा से हमें सौंपे गये उत्तरदायित्व को हम पूर्ण करेंगे ।'

सैन्य युद्ध भूमि पर यथास्थान व्यवस्थित हो गया । सुग्रीव ने घोषणा की :

'प्यारे सुभटो ! आज के युद्ध के हमारे सेनापति नल और नील हैं । इनकी आज्ञा और मार्ग दर्शन के अनुसार हम युद्ध कर राक्षसों का संहार करेंगे ।'

'सेनापति नल-नील की जय हो ।' सैन्य में ब्रह्मांड विस्फोट करता हुआ जयनाद किया । नल और नील ने फौरन व्यूह रचना कर दी । श्री राम, लक्ष्मण, सुग्रीव और भामंडल को आज द्रष्टा बनकर युद्ध देखने की प्रार्थना की । हनुमान जी को एक लाख सैनिकों के साथ उत्तर दिशा से युद्ध करने की आज्ञा दी ।

महेन्द्र और प्रसन्न कीर्ति को एक लाख सुभटों के साथ दक्षिण का मोर्चा सम्हालने के लिये भेजा । दो लाख सैनिकों का नेतृत्व देकर विराध को राक्षस सैन्य के सामने ही खड़ा कर दिया और विराध से कुछ ही दूर नल और नील शस्त्रसज्ज बनकर रथारूढ होकर खड़े । शेष लाखों सैनिकों को आज छावनी में विश्राम हेतु ही रखा था ।

युद्ध प्रयाण की तैयारियों से लंका धमधमा उठी थी। इन्द्र के रथ को भी लज्जित करे ऐसे रथ में दशानन रावण शस्त्र सज्ज कर आरूढ़ हुआ था। भानुकर्ण रथ का सारिथ्य कर रहा था।

रावण के दोनों ओर इद्रजित् और मेघवाहन के रथ आ खड़े हुए। रावण के पृष्ठ भाग में महाकाय कुम्भकर्ण अपनी गदा के साथ रथ में बैठकर आ पहुंचा। शुक, सारण, मारीच, मय, सुंद आदि राक्षस वीरों के रथ भी धरा को कम्पित करते हुए रावण के आसपास आकर व्यवस्थित हो गये। लाखों राक्षस सुभट युद्ध मैदान पर उतर पड़े। पचास योजन जितनी भूमि पर राक्षस-सैन्य छा गया। दशमुख ने आज के युद्ध का सेनापतित्व हस्त और प्रहस्त को सौंपा। हस्त-प्रहस्त ने श्री राम की सेना के सामने कुशलता पूर्वक व्यूह रचना कर दी। सामने ही दो लाख सुभटों के साथ खड़े हुए विराध के सामने हस्त-प्रहस्त ने एक लाख राक्षस सुभटों के साथ सुन्द को खड़ा किया। दक्षिण में एक लाख सुभटों के साथ स्वयंभू को व्यवस्थित किया। उत्तर में सारण को चुने हुए दो लाख सुभटों के साथ रवाना किया।

उदयाचल में सहस्त्रकिरण का पदार्पण हुआ और राम रावण की सेनाओं के बीच घमासान युद्ध छिड़ा। दोनों सेनाएं निश्चित विजय हेतु मैदान में आ हटीं। किसी को अपने पराजय की शंका न थी। शस्त्रों के प्रहार होने लगे। वाहन परस्पर भिड़ने लगे। कोई विजय की हुंकार करने लगे तो कोई मृत्यु की चीख छोड़ने लगे। एक प्रहर बीतते-बीतते तो हजारों सुभटों की लाशें ढल पड़ी""हजारों हाथी घोड़े अंतिम सांस गिनते हुए

रणभूमि में तड़फने लगे। दोनों दलों में से किसी को भी विजय के लक्षण दिखाई नहीं दिये, दूसरे प्रहर का आरम्भ होते ही नल और नील ने अन्य दो लाख सुभटों को सीधा आक्रमण कर राक्षस सैन्य का कचरधान करने का आदेश दिया। दो लाख नये और ताजे वानर सुभटों के साथ विराध प्राणों की बाजी लग कर राक्षस सैन्य पर टूट पड़ा। घड़ी दो घड़ी के समय में राक्षस सैन्य हाहाकार करता हुआ पीछे हट गया। वानर सैन्य ने आनन्द के साथ किलकारियां की।

हस्त-प्रहस्त ने राक्षस सेना को पीछे हटती देख तुरन्त अपने रथ राक्षस सेना के अग्र भाग में लिये। हस्त-प्रहस्त को अग्र भाग में आते देखकर नल और नील ने अपने रथ उनके सामने भिड़ा दिये। नल ने हस्त को युद्ध के लिये ललकारा। नील ने प्रहस्त के रथ पर गदा प्रहार कर अपनी ओर आकर्षित किया।

उत्तर में हनुमान जी ने सारण और उसके दो लाख सुभटों में त्राहि-त्राहि मचवा दी। हनुमान जी के एक लाख सुभटों ने रणबांकुरे बनकर राक्षस सैन्य की तबाही मचा दी। हनुमान जी ने दूसरे प्रहर के अन्त में सारण का रथ तोड़ डाला। सारण ने अन्य रथ लिया, हनुमान जी ने रथ के अश्वों को यमलोक पहुँचाया; सारण तीसरे रथ का आश्रय लेने जाये इसके पूर्व ही हनुमानजी के तीर ने सारण का सीना चीर डाला। सारण के मरते ही राक्षस सैन्य हतवीर्य बनकर युद्ध-भूमि से भागने लगा।

दक्षिण में प्रसन्न कीर्ति और स्वयंभू का संग्राम देवों के लिये भी दर्शनीय हो गया था। युवान प्रसन्न कीर्ति वृद्ध स्वयंभू को

थका रहा था परन्तु स्वयंभू अनुभवी रणवीर सेनापति था। उसने प्रसन्न कीर्ति को घेर लिया। प्रसन्न कीर्ति के एक लाख सुभटों में से आधे तो खप चुके थे। आधे सैन्य ने प्रसन्न कीर्ति को घिरा हुआ देखकर राक्षस सैन्य पर प्रचण्ड आक्रमण कर स्वयंभू को चिन्ता में डाल दिया। परन्तु उसे चकमा देना आसान न था। उसने प्रसन्न कीर्ति को जीवित पकड़ने के लिये व्यूह रचना की। प्रसन्न कीर्ति और स्वयंभू के रथ आमने-सामने आ गये थे। प्रसन्न कीर्ति ने बाणों की अविरल वर्षा कर स्वयंभूको ढंक दिया। स्वयंभू ने गदा का प्रहार कर प्रसन्न कीर्ति के रथ के चक्र तोड़ डाले; इसी क्षण प्रसन्न कीर्ति उछला और स्वयंभू के रथ में जाकर एक ही गदा प्रहार से स्वयंभू का मस्तक फोड़ डाला। राक्षस सैन्य में हाहाकार मच गया। वानर सैन्य हर्ष से नाच उठा।

नल और हस्त का युद्ध तथा नील और प्रहस्त का युद्ध तीसरा प्रहर बिता रहा था। क्षण में नल की पराजय, हस्त की विजय तो क्षण में हस्त की पराजय और नल की विजय दिखाई देती थी। तीरों की आमने सामने झड़ी और गदाओं के प्रचण्ड प्रहार त्रिशूल के दाव और खड्ग के खेल""शस्त्रों की अभूतपूर्व प्रतियोगिता चली। नील और प्रहस्त के बीच भी ऐसा ही दारूण संग्राम जमा था। कोई एक दूसरे से हार स्वीकार न करता था।

'या तो मैं नहीं; या तू नहीं' कहते हुए नल ने हस्त के रथ के पुर्जे-पुर्जे हवा में उड़ा दिये। खिलाड़ी हस्त ने तुरंत दूसरा रथ पकड़कर नल का मुकुट उड़ा दिया, उसने रथ के अश्वों को भूशरण कर दिया, नल ने कालकृतान्त का स्वरूप धारण किया।

वह काल मुख खड्ग को लेकर हस्त के रथ पर कूद पड़ा और खड्ग के एक ही झटके से हस्त के सिर को काट डाला... इसी समय नील ने भी प्रहस्त के साथ अंतिम युद्ध छेड़ दिया प्रहस्त के रथ के चारों ओर अपने रथ को पवन वेग से घुमाते हुए नील ने प्रहस्त पर बाणों की वर्षा शुरु कर दी। प्रति पक्षी तीरों से प्रहस्त अपनी रक्षा करता कि अचानक नील ने निशाना साधकर त्रिशूल प्रहार प्रहस्त के वक्ष स्थल पर किया। त्रिशुल ने प्रहस्त का वक्ष स्थल चीर ड़ाला और प्रहस्त यमलोक पहुँच गया।

हस्त और प्रहस्त का वध राक्षस सैन्य के लिये भयंकर घाव था। वानरसैन्य ने (वानर द्विप के सैन्य ने) वाद्ययंत्र बजाये और राक्षस सैन्य की वड़ी हँसी उड़ाई। नल और नील को वानर सुभट सिर पर विठाकर श्री राम के पास ले गये। श्री राम ने नल-नील को बहुत बहुत धन्यवाद दिया इतने में हनुमान और प्रसन्न कीर्ति भी आ पहुँचे। श्री राम ने इन दोनों को अपनी भुजाओं में पकड़ते हुए कहा :

'आप सब तो मेरी सैन्य के कीमती रत्न हैं आप लोग अवश्य विजय प्राप्त करेंगे।'

इतने में तो वानर सैन्य में से करुण चीखें उठी। हस्त-प्रहस्त के वध से प्रचण्ड़ बने हुए राक्षस सुभटों ने अंतिम प्रहर में क्रूरता के साथ वानस सैन्य को काटना शुरु कर दिया था। मारीच, ज्वर, उद्धाम, विहन, सिहाजघन आदि राक्षक सेनापति एक साथ टूट पड़े थे। लाखों राक्षस सुभट प्राणों की बाजी लगाकर राम के सैन्य को कत्ल कर रहे थे। देखते देखते हर्ष में

पागल बने हुये हजारों वानर सैनिक कट गये। हनुमान और प्रसन्न कीर्ति पुनः युद्ध के अग्र भाग में जाने के लिये तैयार हुऐ परन्तु सुग्रीव ने उन्हें रोका। इतने में संताप, नंदन, दुरित, विघ्न प्रथित आदि पराक्रमी सुभटों के रथ युद्ध भूमि को चीरते हुए युद्ध के अग्र भाग में पहुँच गये और राक्षस-सैन्य के वेग से आगे बढते प्रवाह को रोक कर खड़े रहे। सूर्य अस्ताचल की ओर ढल रहा था। पश्चिम दिशा लाल बनती जा रही थी। युद्ध भ लाल बन रहा था। हस्त-प्रहस्त के वध का बदला लेने के लिये मारीच महाकाल बनकर टूट पड़ा था। मारीच को संताप ने हंफाना शुरु किया। सुग्रीव के पराक्रमी सेनापतीयों की पंक्ति का संताप के रथ को चूर ढाला और संताप को तीरों से बिंध डाला। संताप को मरा जानकर नंदन सेनापति ने ज्वर राक्षस सेनापति को यम दरबार में पहुँचा दिया।

उद्याम और विघ्न वानर का युद्ध भी जोरदार जमा था। विघ्न ने उद्याम का रथ तोड़ डाला, उद्याम के रथ की ध्वजा चीर डाली, उसके धनुष को तोड़ डाला......उद्याम हैरान हो गया......वह दूसरे रथ में आरूढ हुआ और विघ्न पर टूट पड़ा खड्‌ग के एक के बाद एक तीन प्रहार कर विघ्न के शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर डाले।

प्रसन्न कीर्ति के पराक्रमी सेनापति दुरित ने लंका के यशस्वी सुभट शुक राक्षस को यम सदन में पहुँचा दिया। इसी समय सिंहजघन राक्षस ने प्रथित नामक वानर सेनापति का वध किया और सूर्य आधा डूब गया। युद्ध तुरंत रुक गया।

सैन्य अपनी-अपनी छावनी में लौट गये। रणक्षेत्र भयानक बन गया था।

एक ओर स्नान, भोजनादि, से निवृत्त होकर सुभट विश्राम करने लगे। दूसरी ओर मशालों के प्रकाश के सहारे अपने-अपने सुभटों के मृत कलेवरों को पहिचान कर काँवरो में मृतकों को भर २ उनका अंतिम संस्कार किया जा रहा था।

प्रथम दिन के युद्ध में श्री राम के सैन्य की तबाही रावण के सैन्य की अपेक्षा कम हुई थी। संताप, विघ्न, प्रथित आदि वीर सेनापति मारे गये थे। रावण के सैन्य में हस्त-प्रहस्त का वध एक महान् हानि हुई थी। इनके अतिरिक्त ज्वर, शुक, स्वयं भू आदि अनेक प्रथम कोटि के सेनापति मारे गये थे। सैन्य की भी भारी हानि हुई थी।

सुग्रीव ने श्री राम से कहा :—

'स्वामिन् ! आज राक्षस सेना का जो विनाश हुआ है उससे रावण अवश्य ही आग बबूला होगा। दूसरे दिन का युद्ध निश्चित् रूप से देवताओं को भी दहलाने वाला होगा। कल युद्ध में इन्द्रजीत, मेघवाहन आदि दुर्जेय वीरों को उतारेगा।'

'भले वह इन्द्रजीत् को उतारे या स्वयं रावण उतरे, मैं उन्हें युद्ध भूमि पर सदा के लिये सुला दूंगा……कल मैं युद्ध में आगे रहूँगा'

यह नहीं होगा, जब तक लक्ष्मण है तब तक आर्य पुत्र को कष्ठ उठाने की आवश्यकता नहीं। लक्ष्मण का एक-एक तीर शत्रु के हृदय बींध डालेगा' लक्ष्मणजी बोल उठें। सुग्रीव ने नमन कर कहा :—

'आपको युद्ध अवश्य देंगे पर कल नहीं। कल तो वीर हनुमान राक्षसों से रार मचवाएँगे। कल के युद्ध में सेनापति हनुमान होंगे।'

'मुझ पर बड़ी कृपा की।' हनुमान प्रणाम कर, सुग्रीव के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया।

'दूसरे दिन का युद्ध तीव्र खींच-तान वाला होगा। कल मुझे युद्ध के अग्रभाग में रखकर उस अन्यायी-घमंडी दशानन को दंड देने का अवसर मिले तो·······' विभीषण ने श्री राम से निवेदन किया।

'लंकेश! आप तो हैं ही। जब आप आपकी आवश्यकता देखें तब चाहे जिस समय युद्ध में अग्रभाग सम्हाल सकते हैं।'

'महान् कृपा की·······'

तत्पश्चात् सुग्रीव के शिविर में सुग्रीव, हनुमान और भामण्डल एकत्रित हुए। श्री राम ने विभीषण को अपने ही शिविर में शयन करने का आग्रह कर, रात को देर तक उनके साथ बातें की। लक्ष्मणजी ने अंगद को लेकर, युद्ध की छावनी के चारों ओर एक प्रदक्षिणा लगाकर छावनी का निरीक्षण किया। आकर श्री राम के शिविर के द्वार पर खड़े हो गए। दूसरीओर नल-नील और प्रसन्न कीर्ति प्रथम दिन के युद्ध की सिहरन भरी रोमांचक बातें करते हुए सैनिकों को उत्साहित कर रहे थे।

दशानन की छावनी में इन्द्रजीत्, मेघवाहन, मारीच, कुम्भकर्ण आदि वीरों के साथ रावण गंभीर मंत्रणाएँ कर रहा था।

वह उत्तेजित था। नल-नील के हाथों हस्त-प्रहस्त जैसे वीरों का वध रावण के लिये असह्य था। लाखों राक्षस सुभटों का संहार उसके हृदय को पीड़ा पहुँचा रहा था। उनकी मंत्रणा चल ही रही थी कि इतने में चरपुरुष के साथ वज्रोदर ने प्रवेश किया। रावण को नमन कर उसने कहा :—

यह चरपुरुष समाचार लाया है कि कल शत्रु-सैन्य का सेनापतित्व हनुमान सम्हालेगा........'

'भले ही कल हनुमान आए या स्वयं राम-लक्ष्मण आए। मैं कल शत्रु सैन्य का संहार करूँगा।' कुम्भकरण चिल्ला उठा।

'कल राक्षस सैन्य का सेनापतित्व किसे सौंपना है ?' इन्द्रजीत् ने पूछा।

'वज्रोदर सम्हाले........'

अहोभाग्य मेरे........वज्रोदर ने रावण के चरण में मस्तक झुका कर आदेश स्वीकार कर लिया।

लंका के सैन्य में वज्रोदरसिंह समझा जाता था। उसका बल और उसकी बुद्धि, उसकी युद्ध कुशलता और व्यूहात्मक दृष्टि सदा राक्षस सैन्य को विजय दिलवाती आती थी। रावण ने वज्रोदर का चयन उचित ही किया था।

वज्रोदर सैन्य छावनी का निरीक्षण कर दूसरे दिन के युद्ध का व्यूह रचना करता हुआ निद्राधीन हुआ।

दूसरा दिन

[श्रीराम ने दूसरे दिन के युद्ध के सूत्र वीर हनुमान को सौंपे ......जब कि रावण ने अपने प्रचंड शक्तिशाली सुभट वज्रोदर को सेना का नेतृत्व सौंपा है........

नल और नील घाटाल होते हैं, तब हनुमान चुनौती देते हैं। वज्रोदर और हनुमान का भीषण युद्ध खेला जाता है... हनुमान वज्रोदर का शिरच्छेद कर राक्षस सैन्य में सिहरन पैदा कर देते हैं....दूसरी ओर इन्द्रजित् और चन्द्ररश्मि युद्ध का मजा दिखाते हैं। हनुमान रावण पुत्र जंबुमालि को बलि चढ़ाकर रावण से रार मचवाते हैं—कि कुंभकर्ण युद्ध में उतरता है। परन्तु सुग्रीव कुंभकर्ण को पीट डालता है—कुंभकर्ण हनुमान को बगल में दबाता है—और इन्द्रजित् मेघवाहन का बन्धु युगल-सुग्रीव-भामंडल को नागपाश से जकड़कर युद्ध पर नियन्त्रण प्राप्त करता है कि अंगद हनुमान को मुक्त करता है। बिभीषण को देखते ही इन्द्रजित्-मेघवाहन पलायन हो जाते हैं और श्रीराम के पास 'महालोचन' देव आते हैं।]

अरुणोदय होते ही दोनों सेनाएँ आमने सामने व्यवस्थित हो गयीं।

आज सैन्य के मध्य भाग में रावण हाथी पर आरुढ होकर खड़ा था। यम की अपेक्षा अधिक भीषण और भयानक रावण की आँखों में से आग निकलती थी। उसकी वाणी एक-एक राक्षस सुभट को शत्रुसैन्य को पीस डालने के लिये उत्तेजित करती थी।

आज दक्षिण और उत्तर में इन्द्रजित-मेघवाहन लाखों सुभटों के साथ शत्रुसैन्य को कत्ल करने के लिये खड़े थे, वज्रोदर दो लाख सुभटों को लेकर शत्रु पर टूट पड़ने के लिये उदयाचल की ओर टकटकी लगाकर खड़ा था। कुम्भकर्ण का रथ भी सूर्योदय की तैयारी थी तब आकर रावण से कुछ दूर व्यवस्थित हो गया था।

हनुमान ने आज के भीषण युद्ध की कल्पना करके ही व्यूह रचना की थी। सैन्य के मध्य में श्रीराम, लक्ष्मण तथा विभीषण के रथ व्यवस्थित किये गये थे। दक्षिण और उत्तर में आज चन्द्ररश्मि और विराध को भेजकर हनुमान निश्चिन्त बने थे। जबकि प्रसन्नकीर्ति, नल तथा नील को सैन्य के अग्रभाग में नियोजित कर किले को मजबूत बनाया था। भामंडल के रथ को अपने रथ के साथ ही रखा था। सुग्रीव को श्रीराम के पीछे छायी हुई विशाल सेना के मध्य भाग में रखा था।

सूर्योदय हुआ और युद्ध के नगाड़े बज उठे। वज्रोदर ने एक साथ पाँच लाख राक्षस सुभटों को शत्रुसैन्य पर हमला करने का आदेश दिया। राक्षसों का सैन्य राम के सैन्य पर टूट पड़ा। सभी दिशाओं से एक साथ हमला हुआ। घास की भाँति राम का सैन्य कटने लगा। राक्षस सुभट राम की सेना में घुस गये और घमासान युद्ध करने लगे। दो घड़ी में ही राम-सैन्य की आगे को पंक्ति छिद गयी........नल और नील घायल हुए तुरंत उन्हें रथ में डालकर प्रसन्नकीर्ति शिविर में ले गया।

अपने सैन्य की प्रथम पंक्ति भिदी हुई देखकर हनुमान ने अपना रथ तुरंत आगे लिया। सुग्रीव ने दो लाख सुभटों के साथ

आकर पुनः प्रथम पंक्ति को मजबूत बना दिया। हनुमानजी ने ब्रह्माण्ड को फोड़ डाले ऐसी धनुष की टंकार की और बाणों की वर्षा की। क्षण भर में राक्षस सैन्य को स्तब्ध कर डाला। हनुमान को अग्र भाग में देखकर वयोवृद्ध सेनानी माली सामने से दौड़ आया। हनुमान ने माली के आने के साथ ही उसके रथ को तोड़ डाला। उसके एक-एक शस्त्र को छेद डाला। वीर्यशाली माली निस्तेज हो गया। हनुमान ने कहा :

'बूढ़े राक्षस! चला जा यहां से, तुझ जैसे वृद्ध की हत्या करना मुझे उचित नहीं लगता।'

इतने में वज्रोदर का रथ दौड़ा आया। वह गर्ज उठा :

'अरे पापी! मरना चाहता है क्या? आ, मेरे साथ युद्ध कर।'

हनुमान ने वज्रोदर को बाणों के प्रहार से ढक दिया। वज्रोदर ने लौटते प्रहार से हनुमान को तीरों से आच्छादित कर दिया। हनुमान ने अपने रथ को वज्रोदर के रथ के चारों ओर घुमाने के लिये सारथी को कहकर सतत तीरों का प्रहार शुरू रखा। वजोदर ने एक-एक तीर को व्यर्थ बना दिया। आसपास युद्ध करते हुए सुभट स्तम्भित हो गये। दोनों वीरों का युद्ध देखने लगे। क्षण में हनुमान के वध की, तो क्षण में वज्रोदर के वध की शंकाएँ होने लगीं। धीरे-धीरे हनुमान ने अपना रथ वज्रोदर के रथ के निकट लेना शुरू किया। जहां खूब निकटता हुई कि हनुमान ने गदा लेकर वज्रोदर के रथ को चकनाचूर कर दिया। वज्रोदर रथ से बाहर कूद कर गदा लेकर दौड़

आया। दोनों के बीच घोर गदा युद्ध छिड़ा। वज्रोदर ने एक प्रहार करके हनुमान की गदा को दूर फेंक दिया। उसी क्षण हनुमान ने खड्ग का प्रहार कर वज्रोदर के हाथ को काट डाला। वज्रोदर एक हाथ में तलवार लेकर लड़ने के लिये आया, परन्तु वह थक चुका था। हनुमान ने दाव लगाकर वज्रोदर का सिर काट डाला।

रावण के सैन्य में हाहाकार मच गया। वज्रोदर के वध के समाचार ने रावण को क्रुद्ध कर दिया। रावण के बगल में ही रहा हुआ उसका पुत्र जम्बू माली हनुमान के सामने आ पहुँचा। हनुमान का खड्ग वज्रोदर के रक्त से सना हुआ था, कि जम्बू माली ने युद्ध की चुनौती दी। हनुमान ने कहा: 'अरे जम्बू माली! तू क्यों आया? तू तो लंका के उद्यानों में रमणियों के साथ क्रीड़ा कर'।

'अरे उद्धत! अभी तो मैं तेरे साथ क्रीड़ा करके तृप्त होऊँगा। तेरा सिर काट कर तुझे मेरे गले में पहन कर लंका की रमणियों को प्रसन्न करूँगा।'

वह वाक्य पूरा करें इसके पहिले तो हनुमान ने धनुष पर से बाण वर्षा कर जम्बू माली का युद्ध आह्वान स्वीकार कर लिया जम्बू माली ताजा ही युद्ध कर रहा था। उसने पूरे जोश के साथ तीर फेंकना शुरू कर दिया। हनुमान जी उसके एक-एक तीर को निष्फल बनाते गये।

दक्षिण में इन्द्रजित् और बालि पुत्र चन्द्ररश्मि का संग्राम ठना था तो उत्तर में मेघवाहन और विराध का भीषण युद्ध

जमा था। चन्द्ररश्मि ने आज दिन दहाड़े इन्द्रजित् को आकाश में तारे दिखाये थे। चन्द्ररश्मि आज इन्द्रजित् का अस्तित्व ही मिटा देता परन्तु उसे समाचार मिले कि विराध संकट में है, उसने रथ को उत्तर में मोड़ दिया। मेघवाहन ने विराध को घेर लिया था फिर भी सिंह की भांति विराध मेघवाहन के साथ लड़ रहा था। चन्द्ररश्मि का रथ विराध के बगल में आ गया। चन्द्ररश्मि ने त्रिशूल का एक प्रहार मेघवाहन पर किया। मेघवाहन नीचे झुक गया। और त्रिशूल उसके मुकुट को भेदकर चला गया। इसी समय चन्द्ररश्मि ने मुगदर का प्रहार कर मेघवाहन का रथ तोड़ डाला; मेघवाहन ने दूसरा रथ लिया और दोनों के बीच तुमुल युद्ध ठन गया।

इतने में राक्षस सैन्य चीख उठा, 'जम्बू माली मारा गया' भाई के वध के समाचार सुनकर मेघवाहन ने अपना रथ उसी दिशा में वेग से मोड़ दिया।

हनुमान ने जम्बू माली को भी यमलोक पहुंचा कर रावण के कलेजे में तीर मारा था।

रावण ने कुम्भकर्ण की ओर देखा कि तुरन्त कुम्भकर्ण का प्रचण्डकाय रथ युद्ध के अग्रभाग की ओर दौड़ा। कुम्भकर्ण को आता देखकर हताश बना हुआ लंका का सैन्य पुनः सज्ज होकर शत्रु सैन्य पर टूट पड़ा।

कुम्भकर्ण ने रथ छोड़ दिया और वह शत्रु सेना में दौड़ पड़ा। किसी को लात मारकर चिर निद्रा में सुलाया तो किसी

को मुष्ठि प्रहार से चीर डाला""तो दो शत्रुओं को इधर-उधर झटका कर मारने लगा मानो कल्पांत काल का समुद्र झुंझला उठा हो और वह जैसे विनाश करता है उस तरह विनाश करता हुआ कुम्भकर्ण राम सैन्य में हाहाकार मचाने लगा।

कुम्भकर्ण की युद्ध की रीति-नीति से परिचित सुग्रीव तुरन्त कुम्भकरण का मार्ग रोक कर खड़ा हुआ। दूसरी ओर भामंडल ने कुम्भकर्ण पर शस्त्रों का प्रहार चलाया। दधिमुख, महेन्द्र, कुमुद, अंगद आदि कुम्भकर्ण को घेरकर तीक्ष्ण शस्त्रों से उसे जर्जरित करने लगे। कुम्भकर्ण क्षण भर में निराश हो गया परन्तु तुरन्त उसने समग्र शत्रु सैन्य पर 'प्रस्वापना' अस्त्र का उपयोग किया।

राम की शत्रु सेना गहरी नींद लेती हुई युद्ध भूमि पर लेट गयी!

परन्तु सुग्रीव ने ,प्रबोधिनी' महाविद्या का स्मरण किया। सैन्य तुरंत निद्रा के बन्धन से मुक्त हुआ और शस्त्र लेकर 'कहाँ है यह दुष्ट कुम्भकर्ण ?' कहता हुआ कुम्भकर्ण पर टूट पड़ा। कुम्भकर्ण रथारुढ होकर वाणों की वर्षा करता हुआ झूम रहा था। सुग्रीव ने अपना रथ कुंभकरण के रथ के साथ भिड़ा दिया और एक ही गदा के प्रहार से रथ के पूर्जे-पूर्जे हवा में उड़ा दिये। दूसरी गदा ने सारथी का प्राण लिया और कुंभकरण को जमीन पर उतरना पड़ा। वह अपनी बड़ी गदा लेकर सुग्रीव की तरफ लपका। एक ही प्रहार में सुग्रीव का रथ चकना-चूर हो गया। सुग्रीव आकाश में उड़ा। एक वज्रमयी

शिला का निर्माण किया और उसे कुंभकर्ण पर गिरा दी। कुंभकर्ण तैय.र ही खड़ा था, उसने वज्र जैसी शिला को मुगदर के प्रहार से चूर डाली।

सुग्रीव ने तडित् दंड अस्त्र छोड़ा। तड़"""तड़""" तड़ चिनगारियाँ छोड़ता काल सर्प की जीभ की भाँति लपलपाहट करता हुआ तड़ित् दंड कुंभकरण की ओर लपका। कुंभकरण ने तड़ित् दंड को तोड़ने के लिये यथाशक्य सभी शस्त्र फेंके परन्तु सब व्यर्थ गये। तड़ित् दंड ने कुंभकरण की भंयकर काया को मार गिराया। कुंभकर्ण पृथ्वी पर गिर पड़ा"""मूर्छित हो गया। कुंभकरण की जगद् भयंकर काया भूमि पर ढल पड़ी और रावण आपे में रहे? उसकी भ्रकुटी भीषण हो गयी। वह गर्ज उठा: 'मैं स्वयं अब शत्रुसेना का संहार करूँगा'।

इन्द्रीजत ने नमस्कार कर कहा :—

हे स्वामिन्! युद्ध में आपके सामने यम, कुबेर, वरुण अथवा इन्द्र भी टिक न सके, तो ये वन्दर तो किस खेत की मूलियाँ हैं? अतः आप यहीं रहें, मेरे क्रोध से फड़कती हुई बाहु इन शत्रुओं को पीस ड़ालेगी।

इन्द्रजीत!

मान का पर्वत!

शस्त्रों की होली खेलता हुआ इन्द्रजीत शत्रु सेना में घुस पड़ा। मारकाट करता हुआ उसका रथ जहां कुम्भकरण की पहाड़-काया पड़ी थी वहाँ आया"""उसके पीछे ही मेघवाहन

का रथ आ पहुँचा। शस्त्रों का एकसा प्रहार करते हुये दोनों भाई गर्जना करते हैं :

'अरे वन्दरों! खड़े रहो, युद्ध नहीं करने वालों को हम नहीं मारते। हम रावण के पुत्र इन्द्रजीत और मेघवाहन हैं। परन्तु कहाँ हैं। वह हनुमान ? कहाँ हैं सुग्राव ?

अरे! उनका क्या काम है ? वे राम लक्ष्मण कहाँ हैं ?"

"तुरन्त सुग्रीव ने उनका अभिमान ठण्डा करते हुये कहाँ।

अरे अभिमानी इन्द्रजीत् उन राम सौमित्र का स्वाद तो वाद में चखना, पहिले तो मेरे आतिथ्य का अनुभव करले।" इन्द्रजित् और सुग्रीव के वीच भंयकर युद्ध ठन गया। मेघवाहन ने भामंड़ल को ललकारा, वे वीर प्राणों की परवाह किये विना युद्ध करने लगे। हनुमान मूर्च्छित कुम्भकरण के चारों ओर फिरते हुए रक्षा करने लगे।

इन्द्रजीत् और सुग्रीव !

मेघवाहन और भामंड़ल !

चारों दिग्गज! मानो चारों समुद्र! उनके युद्ध से धरा काँप उठी। समुद्र में खलवली में मच गई।

जितने शस्त्र थे, उन सव का प्रयोग कर देख लिया, जितने अस्त्र थे, सवका उपयोग कर लिया, इन्द्रजीत् सुग्रीव का या मेघवाहन भामंड़ल का वध तो कर ही न सके, हैरान भी न रक

सके। दोनों भाईयों को अपनी इज्जत खतरे में लगी। सुग्रीव किसी विद्याशक्ति का प्रयोग करे उसके पूर्व ही दोनों भाईयों ने सुग्रीव और भामंडल पर नागपाश शस्त्र छोड़ा। सुग्रीव-भामंडल नाग-पाश से ऐसे बँध गए कि उनके लिए साँस लेना भी कठिन हो गया।

उसी समय कुम्भकर्ण की मूर्छा दूर हुई। वह होश में आया। उसने अपने पास खड़े हुए हनुमान को देखा। सोए-सोए ही उसने हनुमान पर गदा का प्रहार किया। हनुमान मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। तुरन्त कुम्भकर्ण ने हनुमान को अपनी बगल में दबा दिया।

राम सैन्य में हाहाकार व्याप्त हो गया। सुग्रीव और भामंडल नागपाश के बंधन में फँस गए और हनुमान को कुम्भ-करण ने बगल में दबा दिया। इस अवसर का लाभ लेकर रावण की सेना ने एक सामूहिक आक्रमण कर राम सैन्य का संहार करना शुरू किया।

तीसरा प्रहर पूर्ण हुआ था।

आगे बढ़े हुए राक्षसों पर चन्द्ररश्मि और विराध दो लाख सुभटों को लेकर टूट पड़े और घास की भाँति राक्षस सुभटों को काटने लगे। उनके साथ प्रसन्न कीर्ति अन्य एक लाख सुभटों को लेकर आ मिले। रावण को लेने के देने पड़ गए।

दूसरी ओर श्रीराम-लक्ष्मण के पास जाकर विभीषण ने कहा।

स्वामिन् ! मैं दो दिन के युद्ध में देख रहा हूँ कि सुग्रीव और भामंडल अपनी सेना की दो आँखों जैसे हैं। इन्द्रजीत्-मेघवाहन ने नागपाश से उन दोनों को बाँध लिया है। यदि उन्हें लंका में ले जाएँगे, तो उन्हें छुड़वाना अशक्य हो जाएगा। अतः मैं सुग्रीव-भामंडल को छुड़वा लाता हूँ। साथ ही हे श्रेष्ठ पुरुष ! कुम्भकर्ण के वज्र जैसे हाथों में फँसे हुए हनुमान को भी लंका में ले जाने से पूर्व छुड़वा लेना चाहिये।

विभीषण ने तुरन्त अपने रथ को इन्द्रजीत्-मेघवाहन की ओर त्वरित गति से बढ़ा दिया। विभीषण के चारों ओर उसकी तीस अक्षौहिणी सेना आ डटी !

इन्द्रजीत्-मेघवाहन के लिये बड़ी समस्या खड़ी हो गई। वे सोचमग्न हो गए। 'ये तो पिता तुल्य विभीषण स्वयं हमारे सामने आकर खड़े हो गए। इनके साथ हम से युद्ध कैसे हो ? इनकी आंखों के नीचे हम छोटे से बड़े हुए हैं। हमे इन्होंने ही युद्ध कला सिखाई और अब इनके ही विरुद्ध लड़ना ? अतः यहाँ से भाग निकलना ही एक मात्र उपाय है। पूज्य से डरने में शर्म किस बात की ?' इन्द्रजीत्-मेघवाहन के रथों ने दिशा बदली। उन्होंने लंका की ओर रथ हाँक दिये......परन्तु नागपाश से बंधे हुए सुग्रीव-भामंडल को रथ में डाल उड़ा ले जाना वे भूल गये थे ! शायद भूले न होते तो विभीषण उन्हें जाने भी न देते !

कुम्भकर्ण हनुमान को बगल में दबाकर सुग्रीव की सेना को कुचल रहा था। श्रीराम-लक्ष्मण हनुमान को मुक्त करने का

विचार करते हैं इतने में तो युद्धकोविद अंगद् कुम्भकर्ण की ओर झपट पड़ा।

सुग्रीव की सैन्य में अंगद् सर्वश्रेष्ठ युद्ध कौशल का स्वामी था। वह बल की अपेक्षा बुद्धि से अधिक युद्ध करता था। उसने कुम्भकरण के चारों ओर घूमकर युद्ध करना शुरू किया। कभी तो कुम्भकरण के वह बहुत निकट पहुंच कर, कुम्भकरण को ललचाता, तो कभी दूर जाकर शस्त्र फेंककर उसे तंग कर डालता। दो तीन वार इस प्रकार करते-करते एक वार कुम्भ करण ने अंगद को पकड़ने के लिये अपना हाथ यकायक लंबा किया कि बगल में से हनुमानजी बिजली की भांति त्वरित गति से कूदकर निकल गए। बस, अब हनुमान क्या हाथ आएँ ? अंगद और हनुमान ने प्रबल वेग से कुम्भकर्ण को पीटना शुरू किया।

दूसरी ओर, सुग्रीव-भामंडल को नागपाश से मुक्त कैसे करना-यह प्रश्न महत्वपूर्ण हो गया था। श्रीराम ने 'महा लोचन' देव का ध्यान किया।

महालोचन देव ने अवधिज्ञान का उपयोग किया। श्रीराम उसे ही याद कर रहे हैं'—यह पता चलते ही देव अब युद्धभूमि पर आए। श्रीराम को प्रणाम करके पूछा :—

'आज्ञा करें, आपका क्या प्रत्युपकार करूं ? 'मेरा दिया हुआ वचन मुझे याद है'। राम ने परिस्थिति समझाई। देव ने वहीं श्रीराम को 'सिंहनिनाद' नामक विद्या दी। मूसल और हल दो शस्त्र दिये और रथ दिया।

लक्ष्मण को 'गारूडी' विद्या दी, रथ दिया और शत्रु का नाश करने वाली 'विद्युत वंदना विद्या' दी।

लक्ष्मणजी तुरन्त गरूड़ के वाहन पर आरुढ हुए। गरूड़ को देखते ही सुग्रीव भामंडल को घेरे हुए सर्प भाग निकले।

राम सैन्य में जयजयकार हो गया। सूर्य अस्त हो गया। युद्ध स्थगीत हो गया।

सेनाएँ अपनी २ छावनियों में पहुँच गई। स्नान-भोजनादि से निवृत्त होकर सभी दूसरे दिन के युद्ध के पराक्रम याद करने लगे। श्रीराम की छावनी में आज भारी उत्तेजना थी, जबकि रावण की छावनी में भारी निराशा छा गई थी। वज्रोदर और जंबूमाली का वध, इन्द्रजीत् और मेघवाहन का रणभूमि से भाग जाना, कुम्भकर्ण का मूर्छित् हो जाना, और हाथ में आए हुए हनुमान का बच निकलना–लाखों राक्षस सुभटों का संहार-रावण शोक और क्रोध से विह्वल हो उठा। इन्द्रजीत, मेघ-वाहन, कुम्भकर्ण, मारीच, सिंहजघन, घटोदर, कुम्भ-आदि राक्षन सैन्य के उच्च कक्षा के सुभट रावण के इर्द-गिर्द आ जमे थे। रावण ने उच्च स्वर में कहा।

'तुम सबके विश्वास से मैंने दो दिनों के युद्ध में खूब खोया। अब मैं ही युद्ध में उतरूंगा। कल मैं शत्रु सैन्य का राम-सौमित्र सहित वध करूंगा।'

सब सुनते रहे।

"ये सुग्रीव हनुमान भामण्डल आदि तो मेरे सामने आएँ इतनी ही देर हैं। और वह विभीषण कुलांगार······ वह भी यदि सामने आया तो कल मेरे हाथ से उसकी भी······

रावण ने रात को ही तीसरे दिन की व्यूह रचना कर सभी सेनापतियों को उचित निर्देश देकर विदा किये।

भले ही रावण ने तीसरे दिन के युद्ध में शत्रुसैन्य व सौमित्र का संहार करने की प्रतिज्ञा की थी परन्तु उसका मन शंकाशील था। दो दिन के युद्ध में उसने श्री रामसैन्य का युद्ध कौशल देखा था। सुग्रीव, भामण्डल और हनुमान का पराक्रम देखा था। नल—नील और अंगद की युद्ध चपलता देखी थी। प्रसन्न कीर्ति—विराध और चन्द्र रश्मि की निर्भय निशंक साहसिकता देखी थी······ दूसरी ओर सीता के विचार भी उसे व्याकुल कर रहे थे······शत्रु पर विजय प्राप्त करने के पश्चात् भी सीता न मानी तो? यदि वह आत्म हत्या कर बैठी तो? उसका मन बेहोश हो गया··········उसे कुछ भी सूझा नहीं।

श्री राम लक्ष्मण के पास सुग्रीव हनुमान भामण्डल आदि इकट्ठे हुए। दूसरे दिन के युद्ध में रावण के सिवाय राक्षस सैन्य के तमाम महान सेनापतियों की शक्ति राम ने तोल ली थी। उन्होंने कहा,·······"मेरे प्रिय वीरो! आज का युद्ध आपने देव-दानव भी प्रशंसा करे ऐसा खेला है। कुम्भकर्ण और इन्द्रजित-मेघवाहन के साथ का युद्ध वास्तव में महान युद्ध था। इन राक्षस कुमारों का युद्ध कौशल देखा; कल उनमें से कोई भी लंका में लौट नहीं सकेगा। परन्तु कल स्वयं रावण युद्ध में उतरेगा।'

विभीषण बोले.......

'कृपानाथ ! आपका अनुमान सत्य है। कल रावण अवश्य युद्ध खेलेगा ; मेरा आपसे निवेदन है कि कल मुझे ही रावण के साथ युद्ध खेलने दें।

'लंकापति ! भले ही कल सर्वप्रथम रावण के साथ आप युद्ध करें, परन्तु कल रावण के सिवाय कुम्भकरण, इन्द्रजीत् आदि को जीवित या मृत पकड़ना चाहिये फिर मात्र रावण का ही विचार शेष रहेगा; आपकी इच्छा पूर्ण होगी.......सुग्रीव ने श्री राम को उत्साहित किया।

रात को वड़ी देर तक चर्चा विचारणा करने के पश्चात् सब अपने अपने शिविर में चले गये।

तीसरा दिन

तीसरे दिन का युद्ध अर्थात् दोनों पक्षों में भारी रक्त पात ....निराशा ओर पराजय की आशंका ! रावण स्वयं युद्ध में उतरता है.......विभीषण सामने आकर प्रतिवोध देते हैं, परन्तु वह प्रतिवोध रावण को और अधिक छेड़ता है...............दोनों भाइयों के वीच तुमुल युद्ध जमता है.......कि लक्ष्मणजी ने इन्द्रजीत् को नाग पाश से वांधकर शिविर में डाल दिया। श्री राम ने कुम्भकर्ण की भी यही स्थिति की। चन्द्ररश्मि ने मेघ-वाहन को वाँध लिया..........रावण ने यह सुना और उसने विभिषण पर 'अमौघविजया' महाशक्ति का प्रहार किया....... मित्र वत्सल लक्ष्मणजी ने विभीषण को वचाने के लिए यह

प्रहार स्वयं पर ले लिया..........सीना चिर गया और लक्ष्मण-जी ढल पड़े। क्रोध से आग वबूला वने हुये श्रीराम ने रावण के पांच रथ तोड़ डाले..........रावण लंका में भागा..........राम-लक्ष्मणजी को भूमि पर अचेतन पड़े हुए देखकर मूर्च्छित हो गये और सूर्य अस्त हो गया..........]

रण क्षेत्र पर दोनों सैन्य आमने-सामने व्यवस्थित हो गये। सूर्योदय होने में कुछ ही देर थी। सुग्रीव भामंडल और हनुमान ने आज अद्भुत व्यूह रचना की थी।

वे जानते थे कि आज स्वयं रावण युद्ध में उतरेगा। उतरेगा इतनी ही नहीं, परन्तु यमराज वनकर वह राम सैन्य पर टूट पड़ेगा। विभीषण ने सुग्रीव से कह रखा था कि 'तुम, भामंडल और हनुमान आदि आज युद्ध के प्रारम्भ में ही राक्षस सैन्य पर आक्रमण कर डालना। जब रावण आगे आयेगा तब मैं उसका मान मर्दन कर दूँगा। कपीश्वर! आज दो भाइयों का युद्ध ठनेगा' हनुमान ने अपना रथ सुग्रीव के पास लेते हुये कहा :—

'हां, आज विभीषण रावण को अवश्य थका देगा..........'

'परन्तु हम क्या देखते ही रहेंगे? श्री लक्ष्मणजी भी आज रुकेंगे नहीं, वे रावण की ही प्रतीक्षा कर रहे हैं..........

'सच्ची वात है श्री राम भी मुझे कहते थे कि रावण मैदान में आये इतनी ही देर।

दो सेनापतियों का वार्तालाप एकदम रुक गया । सूर्योदय हुआ और दोनों सेनाएं शस्त्र लेकर भिड गयी.........भयंकर युद्ध ठन गया । इन्द्रजीत और मेघवाहन ने प्रारम्भिक युद्ध में ही राम सैन्य में हाहाकर मचा दिया । अपने सैन्य को पीछे हटते देखकर सुग्रीव, हनुमान और भामंडल प्राणों की बाजी—लगाकर रात्रस सैन्य में घुस पड़े और घास की भांति राक्षस सुभटों को काटने लगे । त्रिपुटी को राक्षस सैन्य में हाहाकार मचाती देखकर चन्द्र रश्मि, नल-नील और विराध भी उत्साहित हुए और उन्होंने इन्द्रजीत-मेघवाहन को घेर लिया । राक्षस कुमारों के हाथ युद्ध का रंग जम गया, इन्द्रजीत चिढे हुए सिंह की भांति युद्ध खेल रहा था । चन्द्ररश्मि ने आज अपना युद्ध-कौशल वताना शुरू किया था ।

रावण सेना चिंता में पड़ गयी । इन्द्रजीत-मेघवाहन के विना सेना सुग्रीव-त्रिपुटी के संहार से दुःखी हो गई और पीछे हटने लगी । रावण ने यह दृश्य देखा । तुरन्त वह महारथ में आरुढ होकर युद्ध के अग्रभाग में दौड़ आया । शस्त्रों का एकसा प्रहार करते हुए रावण के सामने कोई टिक न सका । रामसैन्य क्षण भर में स्तब्ध वन गया । परन्तु जहाँ रावण को युद्ध खेलते देखा, श्री राम ने अपने रथ को गति दी, परन्तु विभीषण ने राम को रोका ।

'आप यही रहें । मैं दशमुख से भिड़ूंगा ।' विभीषण ने अपने रथ को रावण के रथ के सामने ले जा कर खड़ा कर दया और धनुष की टंकार कर रावण के कान खोल दिये । रावण विभीषण को देखकर बोला..........

'अरे विभीषण तू किसकी शरण में गया है ? जो तुझे मेरे कालपुरा में होमना चाहता है उसकी शरण में ? सिंह के सामने छाग डालने का काम राम ने किया है। तुम्हें मेरे सामने भेज-कर राम ने अपनी रक्षा करने की बुद्धिमत्ता का उपयोग किया है। रावण का स्वर कुछ मृदु हुआ। उसने आगे बोलते हुए कहा..........

'वत्स ! तू मेरा भाई है.........छोटा भाई.........मुझे अभी भी तुझ पर वात्सल्य है.........तू मेरे मार्ग में न आ। आज मैं इस राम-लक्ष्मण को स सैन्य स्वर्ग में पहुँचा दूँगा......... तू क्यों इनमें संख्या की वृद्धि करता है ? तू पुनः मेरे पास आ जा। अभी भी तेरा स्थान मेरे पास है। तेरी रक्षा करने के लिए अभी भी मैं तैयार हूँ, तू समझ जा ?'

विभीषण ने कहा :—

'अग्रज ! मैं आपका स्वागत करता हूँ। मैं यहाँ आपके सामने किस प्रकार आया हूँ यह आप जानते हैं ? यमराज और राम स्वयं आपके सामने आते थे, उन्हें बहाना बनाकर रोका और मैं स्वयं आया, क्यों ? आप अब भी विवेक से काम लें। आपको सत्य मार्ग बताने के लिए मैं आया हूँ। युद्ध करना तो बहाना है। मेरी बात मानें और अब भी सीता को छोड़ दें। हे अग्रज ! मैं आपका भाई हूँ। मैं आपका अहित नहीं चाहता। मृत्यु के भय से अथवा राज्य के लोभ से मैं राम की शरण में नहीं गया, परन्तु अपयश के भय से गया हूँ। अतः सीता को मुक्त कर अपकीर्ति दूर करें, बस, फिर भी राम को छोड़कर मैं आपके पास आने के लिए तैयार हूँ।'

'रावण क्रोध से आग बबूला हो उठा। वह जोर से बोला :—

'अरे कायर बुद्धिहीन विभीषण क्या तू मुझे भय दिखाता है? भ्रातृ-हत्या के भय से तुझे उस दिन जाने दिया था परन्तु आज अब तेरी मृत्यु तुझे निमन्त्रण दे रही है…………' रावण ने धनुष की टंकार की।

'अरे! परस्त्री लंपट, मैंने भी उस दिन भ्रातृ-हत्या के ही भय से तुझे मौत के कुएँ में धक्का नहीं मारा था, आज तू भाई नहीं।' विभीषण ने धनुष की भीषण टंकार की।

दोनों भाईयों के बीच अति भीषण युद्ध जमा। इन्द्रजीत्-मेघवाहन, कुम्भकर्ण आदि राक्षस वीर भय, शंका और क्रोध से दौड़ आए। परन्तु ये वीर रावण के पास पहुँचें, इसके पूर्व ही श्री राम ने कुम्भकर्ण को रोका। लक्ष्मणजी ने इन्द्रजीत् को चुनौति दी। नील नें सिंहजघन का मार्ग रोका। घटोदर को दुर्भर्ष ने ललकारा। मेघवाहन को चन्द्ररश्मि ने छूटने न दिया। विघ्न राक्षस को भामंडल ने रोक रक्खा।

एक भी वीर शेष न रहा। सभी इस भीषण युद्ध के हिस्सेदार बने। इन्द्रजीत् और लक्ष्मणजी का युद्ध क्षण भर में देवताओं के हृदय को भी थर्रा दे ऐसा ठन गया। इन्द्रजीत् रावण के पास जाने के लिये व्याकुल हो रहा था, कि मार्ग में लक्ष्मणजी ने उसे रोका—वह चिढ़ गया। उसने लक्ष्मणजी पर 'तामस' अस्त्र छोड़ा। आग उगलता हुआ तामसअस्त्र लक्ष्मणजी

की ओर आया कि तुरन्त लक्ष्मणजी ने उसका प्रतिपक्षी 'तपन' अस्त्र छोड़ा। मार्ग में ही दोनों अस्त्र टकराए और नष्ट हो गए। एक पल का भी विलंब किये बिना लक्ष्मणजी ने इन्द्रजीत् पर नागपाश अस्त्र छोड़ा। इन्द्रजीत् भूमि पर गिर पड़ा। विराध ने इन्द्रजीत् को उठाकर रथ में डाला और लक्ष्मणजी की आज्ञा से शिविर में उठा लेगया।

विघ्न राक्षस का वध कर भामंडल श्रीराम के पास पहुँच गया। श्रीराम और कुम्भकर्ण का युद्ध राक्षस सैन्य को प्रथम बार ही देखने को मिला था। पहाड़-काय कुंभकरण जब श्रीराम के तीक्ष्ण बाणों से विंध कर चीखता था तब राक्षस सैन्य में सिहरन व्याप्त हो जाती थी। कुंभकरण हाँफ चुका तब तक श्रीराम ने शस्त्रों का प्रहार जारी रक्खा। जब इन्द्रजीत् जीवित पकड़ लिया गया तब श्रीराम ने भी कुंभकरण को जीवित पकड़ने के लिये 'नागपाश' अस्त्र छोड़ा।

कुंभकर्ण नागपाश से बँध जाने के कारण धव्व से भूमि पर लुढक पड़ा। राक्षस सैन्य हतोत्साहित बन गया""""तत्काल राम की आज्ञा से भामंडल कुंभकर्ण को रथ में डालकर शिविर में चला गया।

मेघवाहन को चन्द्ररश्मि ने थका दिया था, फिर भी मेघवाहन बिगड़े हुए शेर की भाँति तूफानी युद्ध लड़ रहा था। चन्द्ररश्मि ने वालि का याद करवाए ऐसा पराक्रम बताना शुरू किया था। वह उछला-मेघवाहन के रथ में जा कर कूदकर मेघवाहन को शस्त्रविहीन कर, सिंह जैसे बकरे को उठा ले जाता

है वैसे मेघवाहन को बगल में दबाकर शिविर में कैद कर दिया।

श्रीराम, लक्ष्मण, सुग्रीव और हनुमान विभीषण के पक्ष में पहुँचे। विभीषण रावण को जरा भी बाजी लेने न देता था। रावण ने जब देखा कि विभीषण के आस-पास राम-लक्ष्मण आदि आ पहुँचे हैं, तब उसने शीघ्र ही विभीषण का वध करने के लिये 'शूल' फेंका। तुरन्त लक्ष्मणजी ने तिक्ष्ण शस्त्रों से मार्ग में ही शूल के टुकड़े २ कर डाले। रावण ने धरणेन्द्र द्वारा दी गई, 'अमोघविजया' महाशक्ति। का प्रयोग किया।

धक्, धक्, धक करती तड्, तड्, तड् नाद करती, संहार लीला खेलती हुई महाशक्ति विभीषण को ओर लपकी.......कोई इस महाशक्ति को देखने में भी समर्थ न था.......सभी दूर हट गए।

श्रीराम ने यह गम्भीर परिस्थिति देखी.......क्षण भर वे स्तब्ध हो गए। क्या करना ? विभीषण अभी था न था हो जाएगा।' वे बोल उठे.......

'लक्ष्मण ! धिक्कार हो हमें.......शरणागत विभीषण की हम रक्षा नहीं कर सकते.......धिक्कार हो, श्रीराम के वचन कान में पड़ते ही मित्र वत्सल लक्ष्मणजी विभीषण के आगे जाकर खड़े हुए। गरुडस्थ लक्ष्मणजी को विभीषण के आगे देखकर रावण बोला :—

मैंने तुझ पर शक्ति नहीं छोड़ी। क्यों दूसरे की मौत पर तू मरने आया है ? अरे हाँ ....तू मर, मुझे तेरा ही वध करना

है। यह तो व्यर्थ ही विचारा विभीषण मेरे सामने खड़ा है………'
तुरन्त रावण ने 'अमोघविजया' महाशक्ति का लक्ष्य बदला। महाशक्ति लक्ष्मणजी की ओर बढ़ी।

महाशक्ति को अशक्त करने के लिये लक्ष्मणजी, सुग्रीव, हनुमान, भामंडल, और विराध के अनेक प्रयत्न किये, परन्तु व्यर्थ………महाशक्ति ने लक्ष्मणजी के सीने पर भयंकर प्रहार किया। लक्ष्मणजी का सीना चिर गया। धमाके के साथ लक्ष्मणजी भूमि पर गिर पड़े। सैन्य में हाहाकार व्याप्त हो गया।

श्रीराम क्रोध से तमतमा उठे। रावण का वध करने के लिए सिंह रथ पर चढ़कर उन्होंने रावण के विरुद्ध युद्ध आरम्भ किया। रथ के सिंहों ने क्षणभर में रावण के रथ को तोड़ डाला। रावण ने तुरन्त दूसरा रथ लिया। वह भी टूटा। पांच-पांच बार रावण के रथ टूटे। रावण भयभीत हो गया। उसने सोचा—भ्रातृ स्नेह राम स्वयं मर जाएगा—इसके साथ क्यों युद्ध करूं ?'

तुरन्त रावण ने रथ को लंका की ओर हांका। रावण के भाग जाने के पश्चात् राम मुड़े और उस स्थान पर आए जहां लक्ष्मणजी घायल होकर पड़े थे। लक्ष्मणजी को बेहोश देखकर श्रीराम मूर्च्छित होकर भूमि पर ढल पड़े।

सुग्रीव आदि राजागण चिंतित हो गए। तुरन्त शीतल चंदन का विलेपन किया—शीतल जल छिड़का, शीतल वायु प्रवाहित किया,—मूर्च्छा दूर होते ही श्रीराम लक्ष्मणजी को आलिंगन कर ऊंचे स्वर से रो पड़े। 'वत्स ? तुझे क्या हुआ ? तुझे क्या दुःख है—कह। तू मौन क्यों है ? मेरे साथ मौन ? मैं तेरा

अग्रज हूँ। भले ही न वोल, संज्ञा, से तो मुझे कह। तू न वोलेगा ? देख ! ये सुग्रीव-भामंडम-हनुमान-तेरे मुख की ओर देख रहे हैं। हे प्रियदर्शन ! तू आँख खोलकर देख ! क्या तुझे आँखें खोलकर देखने में लज्जा आती है ? हा-हा……दुष्ट रावण जीवित रूप से लंका में भाग गया……इस वात की लज्जा है न ? नहीं, तू एक बार आँखें खोल ! मैं तेरा प्रिय करूँगा। देख ! मैं यह चला ! दुरात्मा रावण को जीवित या मृत ले आता हूँ……' श्रीराम ने धनुष की टंकार की और लंका की ओर दौड़ पड़े। परन्तु सुग्रीव ने श्रीराम के चरणों को पकड़ कर कहा :—

'हे स्वामिन् ! यह रात्रि है। निशाचर रावण लंका में चला गया है। ये हमारे स्वामी लक्ष्मण शक्ति प्रहार से आहत हैं, मूर्च्छित् हैं……धैर्य धारण करें……दुष्ट रावण मरा ही समझें……अब सर्व प्रमथ सौमित्र की मूर्च्छा दूर करने का ही प्रयत्न करना चाहिये।'

श्रीराम की आंखो से आँसू वह रहे थे। सुग्रीव की वात सुनकर श्रीराम बोले :—

'कपीश्वर ! भार्या का अपहरण हुआ और भाई का प्राण-हरण हुआ फिर भी यह राम अभी तक जीवित है—! आश्चर्य ! राम का हृदय विदीर्ण क्यों न हो जाता ? मित्रो, सुग्रीव, हनु-मान, भामंडल, नल, अंगद, और सभी विद्याधरो ! मैं आपसे कहता हूँ कि आप अपने २ घर जाएँ……और मित्र विभीषण ! मैं तुझे कृतार्थ कर न सका। तुझे मैंने लंका का राज्य देने का वचन दे रक्खा है……अभी तक उसे पूर्ण न कर सका……मुझे इस का बड़ा दुःख है। जैसा दुःख प्रियतमा के अपहरण से न

हुआ या सौमित्र के वध से न हुआ वह दुःख मुझे इस वचन के पालन न करने से हुआ है·······परन्तु हे बन्धु ! कल प्रातः तू तेरे अग्रज को मेरे अरि को लक्ष्मण के मार्ग पर जाता देखेगा। मैं उसका वध करूँगा। तुझे कृतार्थ करूँगा। और फिर ? मेरे लक्ष्मण की देह को उत्संग में लेकर अग्नि-प्रवेश करूँगा।'

श्रीराम-लक्ष्मण के वक्षस्थल पर सिर रखकर रोने लगे। विभीषण ने श्रीराम के दोनो हाथ पकड़ कर अपने उत्तरीय वस्त्र से राम के आँसू पोंछते हुए कहा :—

हे प्रभु ! आपका विषाद विराट सेना को रुला रहा है। आपका रुदन हमारे गात्रों को शिथिल कर रहा है। हे नर श्रेष्ठ ! आप धैर्य धारण करें। लक्ष्मणजी की मृत्यु नहीं हुई। 'अमोघविजया' महाशक्ति ने लक्ष्मणजी की देह में प्रवेश कर रक्खा है। इस शक्ति से आहत हुआ व्यक्ति एक रात जीवित रहता है। सूर्योदय होने, के पश्चात् हमारे हाथ में कोई प्रयत्न नहीं रहेगा। अतः अभी तो संपूर्ण निशा-काल हमारे पास है। तब तक मंत्र-तंत्रादि कोई भी उपाय करके लक्ष्मणजी को महाशक्ति के प्रभाव से मुक्त करना चाहिये।'

'क्या लक्ष्मण पुनर्जीवन प्राप्त करेंगे।'

'अवश्य, नाथ !'

'तब तो प्रयत्न करो।'

तुरन्त विभीषण ने राम-लक्ष्मण के चारों ओर विद्या शक्ति से सात किले बना दिये। चार द्वार बनाए और सजगता युक्त संरक्षण व्यवस्था कर डाली। विभीषण रावण के छल-कपट से परिचित था। रात्रि के अंधकार में रावण क्या न करे, उसकी

कल्पना भी न हो सकती थी। अतः विभीषण ने ऐसी व्यवस्था की कि एक पक्षी भी राम लक्ष्मण के पास फटक न सके।

पूर्व दिशा में सात द्वारों पर सुग्रीव, हनुमान, कुंद, तार, दधिमुख, गवाक्ष और गवय को पहरे पर बिठाया गया। पश्चिम के सात द्वारों पर नील, समखील, दुर्धर मन्मथ, जय, विजय और संभल को नियुक्त किया। उत्तर में अंगद, कुर्म, महेन्द्र, विहंगम, सुषेण और चन्द्ररश्मि खड़े रहे। दक्षिण में भामंडल, विराध, गज, भुवनजीत्, नल, मैन्द और विभीषण खड़े रहे।

श्रीराम लक्ष्मणजी के पुनर्जीवन के लिए विचार मग्न हो गए। उन्हें कुछ सूझा नहीं, दूसरी ओर विभीषण, सुग्रीव और भामंडल इकट्ठे हुए और क्या करना? इस पर गंभीर विचार-विनिमय करने लगे, परन्तु उन्हें कोई उपाय दिखाई न दिया। धरणेन्द्र द्वारा दी हुई 'अमोघविजया' महाशक्ति का निवारण करने की शक्ति भारत में किसी के पास दिखाई न दी। दूसरी ओर, यदि प्रातः होने से पूर्व लक्ष्मणजी पुनर्जीवन प्राप्त न करें, तो श्रीराम के जीवन का प्रश्न खड़ा होता था। लक्ष्मणजी के प्रति श्रीराम का स्नेह सब को विदित था।

रात्रि का प्रथम अर्ध प्रहर बीत चुका था। एक २ पल बीतती जाती थी और विभीषण सुग्रीव आदि की व्याकुलता भी बढ़ती जाती थी।

'क्या किया जाए?' इस प्रश्न ने सबको मूढ़ बना दिया था।

एक रात अनेक घटनाएं

कैसी यह डरावनी विभावरी थी ?

लक्ष्मणजी मूर्च्छित थे—श्रीराम चिंतित और हताश थे।

दशमुख रावण शोकाकुल–विह्वल और व्यथित था। सभी तीन दिन के घोर-भयंकर युद्ध के भूतकाल को याद कर काँप उठे थे। भावी की कल्पना अस्पष्ट और धुँधली थी।

एक राक्षस परिचारिका त्वरित गति से दौड़ती हुई देवरमण उद्यान में पहुंची। वह परिचारिका सीता को चाहती थी—उसने सीता को समाचार दिये।

सीता ! आज के युद्ध में लक्ष्मणजी मारे गए हैं। श्रीराम लक्ष्मण की निष्प्राण देह को उत्संग में लेकर बैठे हैं—सुना है कि राम भी प्रातः प्राण·······

सीता के श्वास हवा में लटकने लगे। वे खड़ी हो गई। उस परिचारिका के दोनों कंधे पकड़ कर उससे पूछा :

'क्या तू सच कहती है ? अजेय लक्ष्मण मारे गए ?'

'देवी ! मैंने राजमहल में बात सुनी है—लंका की गली २ में बात हो रही है—'

सीता के लिये ये समाचार असह्य थे। उन्हें मूर्च्छा आ गई। उद्यान की धरती पर उनकी देह ढल पड़ी। आसपास की परिचारिकाएं दौड़ आईं। शीतोपचार किया गया। सीता की मुर्च्छा दूर हुई, परन्तु करुण विलाप से सीता ने राक्षस स्त्रियों

के क्रूर हृदय भी द्रवित कर डाले। सीताजी खूब रोई। अन्त में वे बोली :

'हा वत्स लक्ष्मण ! आर्यपुत्र को अकेले छोड़कर तू कहाँ चला गया ? तेरे विना तेरे अग्रज एक मुहूर्त भी जी सकने में समर्थ नहीं। धिक्कार हो मुझे, मैं मन्दभाग्या हूँ''''कि मुझ जैसी अभागिनी के कारण स्वामी और देवर का ऐसा अशुभ हुआ। क्या करू ? कहाँ जाऊं ? हे वसुंधरा ! मुझ पर कृपा कर, मुझे मार्ग दे''''मैं तुझ में समा जाऊं''''''अथवा हे हृदय ! तू टुकड़े २ हो जा''''मैं अब जीना नहीं चाहती''''मैं स्वामी और देवर के विना जी नहीं सकती''''' अविरल आँसू और असंख्य सिसकियां। सीता के करुण कल्पांत ने लंका की उस रात्रि को अभिशापित कर दी।

परिचारिकाओं के समूह में एक विद्याधरी के पास 'अवलोकिनी विद्या' थी, इस विद्या के द्वारा वह भविष्य के भेद जान सकती थी। सीता के हृदय-प्रकंपक रुदन ने इस विद्याधरी के हृदय को सहानुभूति से द्रवित कर दिया। वह तुरन्त उद्यान के एकांत भाग में पहुंची। पद्मासन लगाकर बैठ गई और 'अवलोकिनी विद्या' का स्मरण किया। देवी तुरन्त उपस्थित हुई। विद्याधरी ने पूछा :

'हे विद्यादेवी ! राम-लक्ष्मण के युद्ध में किसकी विजय होगी। लक्ष्मण मृत्यु के शिकार बनेंगे या जीएंगे। सीता का क्या होगा ?'

'हे भद्रे ! इस युद्ध में श्रीराम की ही विजय होगी। कल प्रातः होने से पूर्व लक्ष्मण पर से महाशक्ति का प्रभाव दूर होगा और राम, लक्ष्मण सहित यहां आकर सीता को प्रसन्न करेंगे।'

अवलोकिनी विद्या अदृश्य हो गई। विद्याधरी दौड़ती हुई सीताजी के पास आई, विद्यादेवी द्वारा कथित भविष्य कहा। सीताजी को शांति हुई।

अभी तो रात्रि का प्रथम प्रहर ही चल रहा था। सीताजी प्रभात–सूर्योदय की प्रतीक्षा करते हुए मन में लक्ष्मणजी के नव-जीवन की कामना करती हुई देव रमण उद्यान में समय व्यतीत करने लगीं।

और रावण?

'आज लक्ष्मण मारा गया!' यह विचार उसे हर्ष से पागल बना रहा था……'जबकि 'कुम्भकर्ण' इन्द्रजीत्, मेघवाहन आदि शत्रुशिविर में बंधनग्रस्त हैं,' यह विचार उसे शोकाकुल बना रहा था। लंका का श्वेत संगमरमर का राजप्रासाद, उसकी रत्नजटित छत और भूमिभाग रावण को आश्वासन देने में असमर्थ था।

'हा वत्स कुम्भकर्ण, तू मेरी ही दूसरी आत्मा है…हे इन्द्र-जीत्, मेघवाहन! तुम दोनों मेरी भुजाएँ हो…वत्स जंबुमाली… तू मुझे छोड़कर चला गया? मेरा परिवार छिन्न-भिन्न हो गया।' रावण बार-बार मूर्च्छित् होने लगा। करुण स्वर से रो पड़ा… लंकापति मदान्ध रावण! इन्द्र, कुबेर और यम जैसों को वश में रखने वाला विश्वविजेता रावण…असहाय बनकर उस रात को फूट २ कर रो पड़ा था…तब लंका घोर अशांति में डूब गई थी। रावण के आंसुओं से भीगे हुए मुख को साफ करने वाला वहाँ कोई उपस्थित न था। उद्वेग, संताप और बेचैनी से करवटें बदलता रावण असंख्य विकल्पों में गोते लगा रहा था।

श्रीराम की व्याकुलता भी बढ़ रही थी। लक्ष्मण को महा-शक्ति के प्रभाव से मुक्त करने का कोई उपाय मिलता न था···· सभी चिन्ता के महासागर में डुबकी लगा रहे थे।

उधर पूर्व दिशा के द्वार पर भामंडल शस्त्रसज्ज होकर खड़ा था—एक विद्याधर आया। उसने भामंडल को मस्तक झुकाया और दोनो हाथ जोड़कर कहा :—

'हे राजन् ! यदि आप श्री लक्ष्मण के आप्तजन हैं, तो मुझे श्रीराम के चरणों में ले जाएँ। लक्ष्मणजी को जीवित करने का एक उपाय मैं ले आया हूँ····'

'तू कौन है ?'

'मैं आपका हितेच्छु हूँ····और परिचय फिर दूँगा—इस समय एक क्षण का भी दुरुपयोग न करें।

भामंडल ने आगंतुक विद्याधर को दृढ़ता से पकड़ा और श्रीराम के पास ले आया। विद्याधर ने श्रीराम को नमस्कार कर अपना परिचय देते हुए कहा :—

हे दशरथनंदन ! मैं संगीतपुर नगर का राजकुमार प्रतिचन्द्र हूँ। पिता का नाम शशिमंडल और माता का नाम सुप्रभा।

एक दिन की बात है। मैं अपनी प्रियतमा के साथ गगन-विहार करने निकला। मार्ग में 'सहस्त्रविजय' नामक विद्याधर ने हमको देखा—उसकी हमारे साथ प्राणों की शत्रुता थी। युद्ध छिड़ा—उसने मुझे 'चंडरवा' शक्ति से आहत किया। मैं पृथ्वी पर धड़ाम से गिर पड़ा—भाग्य योग से मैं जिस पृथ्वी पर गिरा वह भूमि थी साकेतपुर की।

अभी मुझे धड़ाम से गिरने की चैन हुई न थी—शक्ति प्रहार की अपार वेदना का अनुभव कर ही रहा था—कि आपके लघु भ्राता भरत ने मुझे देखा—वे दौड़ आए—दयासागर भरत ने तुरन्त मेरे लिये चमत्कारिक 'गंगाजल' मँगवाकर मुझ पर छिड़का। मेरे शरीर में से 'चंडखा' शक्ति निकल गई।

मैं जाग्रत हुआ—विस्मित चित्त से मैंने महाराजा भरत को इस चमत्कारिक गंगाजल की महिमा पूछी—भरत ने मुझे इसकी महिमा इस प्रकार बताई, मैं उन्हीं के शब्दों में इसकी महिमा कह सुनाता हूं, जिसे आप सुने :

'गजपुर से 'विंध्य नामक सार्थवाह यहाँ आया था। मार्ग में उसका एक बैल अशक्त हो गया। अतिभार वहन करने से उसके गात्र शिथिल हो गए। उसे यही छोड़कर विंध्य सार्थवाह चला गया। निष्ठुर नगरजनों ने भूमि पर पड़े हुए बैल के सिर पर पाँव देकर चलना शुरु किया। बैल अत्यन्त पीड़ा से रिबार कर मृत्यु की गोद में समाया, परन्तु मृत्यु के समय कोई शुभ भाव आ गया—मर कर वह वायुकुमार देव हुआ। अवधि ज्ञान से उसने अपना पूर्व जीवन देखा। क्रूर नगरवासियों द्वारा की गई घोर कदर्थना उसने देखी—क्रुद्ध हुआ—सारे नगर में रोग फैलाया। नगर ही नहीं—मेरे समग्र देश में रोग फैलाए, परन्तु इनमें एक मात्र मेरे मामा द्रोणमेघ राजा का देश और उसका कुटुम्ब बच गया। इस बात का मुझे पता चला और मुझे आश्चर्य हुआ। मैं मामा के घर गया। मैंने मामा से पूछा :

'सारा देश जब अनेक रोगों से पीड़ित हो रहा है, तब आप और आपका जनपद कैसे बच गए ?'

'मामा ने कहा : भरत ! रानी प्रियंकरा पहिले व्याधिग्रस्त हो गई थी, परन्तु जब वह गर्भवती बनी—तब से वह निरोगी हो गई। पुत्री का जन्म होने के पश्चात् सम्पूर्ण परिवार रोगमुक्त बना। उसका नाम 'विशल्या' रक्खा गया। विशल्या जिसका स्पर्श करे, वह निरोगी हो जाय, बस, मेरा समग्र देश विशल्या के कर स्पर्श से और उसके स्नान जल से निरोगी हो गया।

एक बार 'सत्यभूतशरण' नामक महामुनि को मैंने विशल्या के प्रभाव पीछे छिपे हुए रहस्य को जानने के लिए पूछा :

'प्रभु ! विशल्या के प्रभाव का क्या कारण है ?'

'राजन् ! पूर्वभव की तपश्चर्या का यह फल है। उसके स्नान जल से मनुष्यों के घाव भरेंगे, शल्य दूर होंगे, व्याधि का उपशम होगा और इसके पति लक्ष्मण होंगे।'

मुनि वचन से और मेरे अनुभव से इस प्रकार मैंने विशल्या के स्नान-जल के प्रभाव का निर्णय किया।

इस प्रकार द्रोणमेघ ने मुझे कहकर विशल्या का स्नान जल मुझे दिया। उससे मेरे देश के व्याधिग्रस्त लोग भी रोगरहित बने और आज तुम पर भी इस पानी का उपयोग करते ही तुम्हारा शल्य दूर हुआ। 'शक्ति प्रहार का असर दूर हुआ और पुनर्जीवन प्राप्त हुआ।'

आगन्तुक विद्याधर की बात श्रीराम, भामंडल और विभीषण तन्मयता से सुन रहे थे। विद्याधर ने कहा :

'भरत द्वारा मुझ पर किये गये प्रयोग से मुझे दृढ़ श्रद्धा हो गई है कि विशल्या का स्नान जल वास्तव में महान् प्रभावशाली है। अतः प्रभात होने से पूर्व आर्य लक्ष्मण के लिये यह स्नान

जल यहां लाना चाहिये। जल्दी करें। अविलम्ब भरत के पास से वह स्नान जल ले आएँ।'

रात्रि का प्रथम प्रहर पूर्ण होने आया था। लंका से अयोध्या जाना, स्नान जल लेकर पुनः लंका लौटना। श्रीराम ने भामंडल की ओर देखा। इतने में हनुमान और अंगद भी आ पहुंचे। चन्द्ररश्मि, नल-नील भी उपस्थित हो गए। श्री राम ने कहा :

भामंडल ! तुम हनुमान और अंगद को साथ लेकर अयोध्या जाओ। भरत से मिलकर विशल्या का स्नान-वारि लेकर प्रभात होने से पूर्व यहां लौट आओ।'

भामंडल विचार मग्न हो गया। वह कुछ बोले इसके पूर्व ही विभीषण ने कहा :

'चिन्ता न करो भामंडल ! मेरे पास पवन गति विमान है। इसे तुम ले जाओ। पवन की गति से यह उड़ता है। तुम समय का पालन कर सकोगे।'

श्री राम को नमस्कार कर भामंडल, हनुमान और अंगद विमान में बैठ गए। विमान अयोध्या की दिशा में अदृश्य हो गया। श्री राम-विभीषण और चन्द्ररश्मि आदि प्रसन्न हो गए। विद्याधर कुमार प्रतिचन्द्र को बहुत-बहुत धन्यवाद देने लगे।

रामायण के इस महान् युद्ध में प्रतिचन्द्र को महत्वपूर्ण स्थान क्यों न दिया गया ? यह एक गंभोर प्रश्न है। लक्ष्मणजी के प्राण बचाने वाले प्रतिचन्द्र कुमार को युद्ध विजय के पश्चात् भी कोई उचित पुरस्कार दिया गया हो ऐसा रामायणकार ने बताया नहीं। भरत ने प्रतिचन्द्र को पुनर्जीवन देकर उपकार किया तो मानो इस उपकार का कृतार्थ भाव से बदला चुकाता हो उस तरह मानो लक्ष्मणजी को उसने पुनर्जीवन दिया।

विमान अयोध्या पहुँचा।

रात्रि का द्वितीय प्रहर पूर्ण होने की तैयारी में था।

अयोध्या के राजमहल की छत पर निद्राधीन भरत को देख कर उसे जाग्रत करने के लिये अंगद ने गीत छेड़ा। राजकार्य में भी राजा को सावधानी से जाग्रत करने की नीति अंगद जानता था। भामंडल और हनुमान ने भी गीत के स्वरों में अपने स्वर मिलाए। 'मध्यरात्रि को गीत ?' भरत की निद्रा उड़ गई कि सामने ही दोनों हाथ जोड़कर मस्तक नवांकर खड़े हुए भामंडल को देखा। भरत ने तुरन्त भामंडल को पहचान लिया। अंगद का परिचय न था। भामंडल ने परिचय दिया। भरत ने पूछा :

'कहिये ! इस समय कैसे पधारे ?'

'विशल्या का जल लेने.....'

'प्रयोजन ?'

'लक्ष्मण जी रावण की महाशक्ति से आहत हुए हैं. प्रभात होने से पूर्व किसी भी उपाय से इस महाशक्ति को भगाना आवश्यक है—अन्यथा प्राण का.....'

'परन्तु.....' भरत वेचैनी का अनुभव करने लगे।

'क्या ?'

'मेरे पास जरा भी स्नान जल रहा ही नहीं...और विशल्या है कौतुक मंगल नगर में।'

'कोई वात नहीं। हमारे पास पवनवेगी विमान है। कौतुक मंगल पहुंचना अर्थात् अर्ध घटिका का कार्य।'

भरत को विमान में बैठा दिया। भामंडल ने विमान में भरत के सामने लंका के युद्ध का चित्रण कर दिया। लक्ष्मणजी की आकस्मिक घटित भयानक स्थिति ने भरत को व्याकुल कर दिया परन्तु 'विशल्या के स्नान जल से लक्ष्मण जी अवश्य पुन-र्जीवन प्राप्त करेंगे,' इस विचार से उसे आश्वासन मिला। भरत ने कहा :

'मैं लंका आऊँ ? अयोध्या के लाखों शूरवीर सुभटों को युद्ध में उतारूँ ... कल ही लंका का पतन हो....'

राजेश्वर ! आप निश्चित् रहें। आपके लंका पधारने की जरा भी आवश्यकता नहीं। लक्ष्मणजी शक्ति प्रहार की मूर्छा में से जाग्रत हो, इतनी देर है ! कल का युद्ध रावण के लिये अपशकुन वाला सिद्ध होगा। इसके अतिरिक्त, हमारे पास अभी तो लाखों पराक्रमी सुभटो की सेना है। जो लंका की लक्ष्मी प्राप्त करने के लिए थिरक रही है। आप अयोध्या में ही रहकर अयोध्या के विशाल राज्य को सम्हालें और माताओं के लिए आश्वासन रूप बनें—यही उचित है।'

भामंडल की बात सुनकर भरत मौन रहे, इतने में कौतुक-मंगल नगर आ गया। राजा द्रोणमेघ के महल की छत पर ही विमान उतारा गया। भामंडल आदि को विमान में ही बैठने का कहकर भरत राजा द्रोणमेघ के पास गए। द्रोणमेघ को निद्रा में से जगा कर भरत ने भामंडल, हनुमान और अंगद के आगमान की बात की। द्रोणमेघ तुरन्त भरत के साथ भामंडल के पास आया; नमन कर सब को राजमहल में ले आया। भरत ने कहा ;—

'राजन् ! अभी समय बहुत ही अल्प है। प्रभात होने से पूर्व विशल्या लंका के शिविर में पहुँच जानी चाहिये......लक्ष्मणजी के जीवन मरण का प्रश्न है।'

'भरत ! मैं प्रसन्न होकर विशल्या को देता हूँ। विशल्या मन से लक्ष्मणजी का वरण कर चुकी है। ज्ञानी गुरुदेव का भी यह भविष्य कथन है, परन्तु एक हजार सखियों के साथ विशल्या लक्ष्मणजी का वरण करेगी......यह बात आपको.......'

'अवश्य राजन् ! युद्ध पूर्ण होते ही लंका में विशल्या का लक्ष्मणजी के साथ विवाहोत्सव आयोजित करूँगा।' अंगद ने विश्वास दिलाया।

तुरन्त द्रोणमेघ ने विशल्या को बुलाया—पूर्व भवकी तपस्विनी विशल्या के पुण्य प्रभाव से भामंडल आदि प्रभावित हुए। विशल्या को भामंडल आदि के साथ लंका जाने की द्रोणमेघ ने आज्ञा दी। विशल्या पुलकित हो गई। उसका हृदय प्रसन्न हो गया। वह अविलंब तैयार हो गई। एक हजार सखियों को इस समय जगाकर साथ ले जाने का समय न था—पीछे से उन्हें लंका भेजने का कहकर विशल्या वायुयान में बैठ गई।

भामंडल ने द्रोणमेघ का अत्यन्त आभार मानकर विमान को अयोध्या की ओर गतिमान किया; क्योंकि भरत को अयोध्या पहुँचा कर उन्हें लंका जाना था।

तृतीय प्रहर की अंतिम घटिका व्यतीत हो रही थी। पवनवेगी जाज्वल्यमान विमान लंका की ओर वेग से आगे बढ़ रहा था। विमान को भामंडल ने बहुत ऊँचाई पर लिया। उसे भय था कहीं रावण को इस बात का पता चल गया। और मार्ग में ही कोई विघ्न खड़ा कर दिया तो ?'

शुभ कार्य में विघ्न की आशंका होती ही है।

विभीषण, सुग्रीव, आदि आयोध्या की ओर आतुर नयनों से, उत्सुक हृदय से देख रहे थे। अनेक शुभ-अशुभ विकल्पों में घुटते हुए श्रीराम बार-बार सुग्रीव से पूछते थे 'भामंडल आदि आ गए क्या ?' सुग्रीव श्रीराम को धैर्य बँधवाता और 'अभी आ जायेंगे,' कहकर अयोध्या की दिशा में देखता हुआ खड़ा रहता था।

चौथा प्रहर·······

एक घटिका बीत गई।

कि पूर्व दिशा में चमक हुई·······

सुग्रीव-विभीषण के दिल धड़कने लगे·······क्या सूर्योदय हो गया ? इतने में उनकी शंका का निवारण हो गया। विशल्या सहित विमान द्रुतगति से आ रहा था। विभीषण ने हर्ष ध्वनि की सुग्रीव दौड़ कर श्रीराम के पास पहुँच गया·······वह बोल उठा :—

'विशल्या आ गई देव !'

श्रीराम खड़े हो गए। विमान सीधा ही लक्ष्मणजी के पास उतारा गया। क्षणभर की भी विलंब किये बिना विशल्या विमान में से कूद पड़ी भूमि पर चित्त पड़े हुए अपने प्राणवल्लभ को देखा—क्षणभर विशल्या कांप उठी·······परन्तु दूसरे ही क्षण श्री पंचपरमेष्ठि भगवन्त का स्मरण कर लक्ष्मणजी के पास बैठकर उनके विदीर्ण वक्षस्थल को अपने हाथ से स्पर्श किया।

चारों ओर शस्त्रसज्ज होकर विभीषण, सुग्रीव, भामंडल, हनुमान, चन्द्ररश्मि, अंगद-आदि नियुक्त हो गये थे।

विशल्या के करस्पर्श ने चमत्कार कर दिया।

'अमोघविजया' महाशक्ति कांप उठी-लक्ष्मणजी की देह का त्याग करना अनिवार्य हो गया। वह महाशक्ति एक देवी थी : लक्ष्मणजी की देह से निकल कर आकाशमार्ग से भागी—

परन्तु जैसे ही यह निकल कर आकाश में भागी-हनुमान जी ने एक छलाँग मारकर उसे पकड़ ली। हनुमान के हाथ में फँसी हुई महाशक्ति मुक्त होने के लिये तड़पने लगी। वह गिड़गिड़ाने लगी।

'हनुमान! मुझे छोड़! मेरा कोई दोष नही! मैं प्रज्ञप्ति की भगिनी हूँ। धरणेन्द्र ने मुझे रावण को सौंप रक्खी है........ मैं क्या करूँ? विशल्या के पूर्वजन्म की उग्र तपश्चर्या के असह्य प्रताप को सहन करने में मैं समर्थ नहीं। मैं जानती हूँ-मुझे मुक्त कर।'

हनुमान ने महाशक्ति को मुक्त की। लज्जा से झुकी हुई महाशक्ति अदृश्य हो गई।

विशल्या लक्ष्मणजी के दर्शन से ही रोमांचित हो गई थी। महाशक्ति के निकलते ही पुनः विशल्या ने लक्ष्मणजी की देह पर अपना कोमल कर स्पर्श करना शुरू किया।

'गोशीर्षचन्दन लाएँ,' विशल्या ने भामंडल से कहा—तुरन्त गोशीर्षचन्दन घिसकर लाया गया। रत्न के वर्तन में चंदन लेकर विशल्या ने लक्ष्मणजी की देह पर विलेपन करना शुरू किया। महाशक्ति द्वारा किए हुए घाव भरने लगे—देह में चेतनता

दौड़ने लगी, आँखों की पलकें फिरकने लगी। फीका पड़ा हुआ मुख लाल होने लगा।

दूसरी ओर भामंडल ने पवनवेगी वायुयान लेकर अंगद को कौतुकमंगल भेजकर विशल्या की एक हजार सखियों को बुलवा लीया।

श्रीराम के नेत्रों से हर्ष के अविरल अश्रु प्रवाहित हो रहे थे। वे खड़े २ लक्ष्मणजी के सामने अनिमेष नेत्रों से देख रहे थे। उनका हृदय विशल्या पर प्रेम के फव्वारे छोड़ रहा था। सुग्रीव आदि के मन हर्ष विभोर हो गए थे।
पूर्व दिशा लाल २ हो गई।

सूर्य के आगमन के चिह्न दिखाई देने लगे और लक्ष्मणजी ने आँखें खोली। उन्होंने विशल्या को देखा.........विशल्या के नयन हर्षाश्रुसे छलक रहे थे, उसका मुख लाल सुर्ख हो गया।

लक्ष्मणजी आलस्य छोड़ कर खड़े हुए और श्रीराम के गले लग गए। सुग्रीव ने जय ध्वनि से लंका को गूंजारित कर दिया। सेना नाचने लगी। सर्वत्र आनंद-आनंद छा गया।

सूर्योदय हुआ।

परन्तु आज युद्ध के लिये रावण लंका से बाहर ही नहीं निकला।

भामंडल ने श्रीराम को नमस्कार कर कहा :—

'हे कृपानिधि ! राजा द्रोणमेघ ने हम पर अनंत उपकार किया है। देवी विशल्या ने मात्र लक्ष्मणजी को ही नहीं, हम सब को नवजीवन प्रदान किया है। महादेवी सीता के सौभाग्य को अखंडित रक्खा है.........'

एक महत्त्व पूर्ण बात अब हमें प्रकाशित करनी चाहिये। देवी विशल्या एक सहस्त्र सखियों के साथ लक्ष्मणजी का वरण कर चुकी है। राजा द्रोणमेघ ने लक्ष्मणजी के साथ विशल्या का पाणिग्रहण करने का कहा है—हम वचनबद्ध हो आए हैं........

श्रीराम प्रफुल्लित हो गए।

मैं सौमित्र को आज्ञा देता हूँ कि वह विशल्या सहित एक सहस्त्र कन्याओं का पाणिग्रहण करे।'

लक्ष्मणजी ने मौन रहकर अपनी अनुमति दी।

युद्ध की छावनी विवाहोत्सव की धूम-धाम से गूँज उठी। ब्याह की शहनाईयाँ बज उठीं। विद्याधर राजाओं ने भव्य महोत्सव संपादित किया और विशल्या का एक हजार कन्याओं सहित लक्ष्मणजी ने पाणिग्रहण किया।'

लंका में लक्ष्मणजी के पुनर्जीवन के समाचार फैल गए। उस अवलोकिनी विद्याधरी ने सीताजी को ये शुभ समाचार पहुँचाए।

सीताजी को उस समय कैसा हर्ष हुआ होगा?

९

लंका परिषद्

राक्षसेश्वर ने चतुर्थ दिन युद्ध स्थगित रखकर लंका के विचक्षण दीर्घदृष्टा मंत्रीश्वरों की एक परिषद् बुलाई। अपनी ही मनमानी करने की कुटेव वाला रावण किसी की हितकारी सलाह सुनने के लिये तैयार न था। ऐसी सलाह देने के लिए आने वाले बिभीषण का तो वह वध करने पर उतारू हो गया था और अपने दाहिने हाथ के समान भाई को वह खो बैठा था। वह यह भी जानता था कि मंत्रीमंडल उसे क्या सलाह देगा! परन्तु उसके एक के पश्चात् एक सभी दाव निष्फल रहे। वह बहुत खो बैठा था। एक परस्त्री-सीता के खातिर उसने लाखों सुभटों का रक्त बहा दिया.......कुंभकरण, इन्द्रजीत, मेघवाहन, जैसे भाई और पुत्रों को शत्रु-शिविर में बंधनग्रस्त बनाया, अनेक पराक्रमी पुत्रो का शत्रु के हाथों वध होते देखा—फिर भी? वह परस्त्री अब भी उसका मुंह देखने को भी तैयार न थी। उसकी परछाई के स्पर्श को भी वह पाप समझती थी। रावण इस बात को जानता था, परन्तु क्या करे? सीता के संभोग की कल्पना उसके मन को बेहोश बना देती थी। वह सर्वस्व की कीमत पर भी सीता का अपनी बनाना चाहता था। सब कुछ लुट जाए। एक सीता रहे.......तो भी उसे मंजूर था। ऐसी कामविडंबना से पीड़ित होते रावण ने मंत्रीमंडल की परिषद् बुलाकर उनकी बुद्धि से अपने मनोरथ सिद्ध करने का विचार किया।

एक के बाद एक महामंत्री लंका की राजसभा में आने लगे, परन्तु उन्हें आज लंका का यह स्वर्ण-प्रासाद कांति विहीन लगा। प्रासाद की सोपान पंक्तियाँ निस्तेज लगी। रत्नजटित भूमि भाग पर रक्त विन्दु छिड़के हुए हो, ऐसा आभास हुआ। राज-महल के परिचारक, सुभट, दासदासीगण-सभी के मुख पर उदासीनता-घोर निराशा छाई हुई थी।

रत्नदीपकों से जगमगाती हुई राजसभा में अपने २ आसन पर आकर मंत्रीगण बैठने लगे। सभी आ गए थे और राक्षसेश्वर के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे। अर्ध घटिका पर्यंत प्रतीक्षा की.......सभी मौन थे। इतने में राक्षसेश्वर के आगमन की सूचना दी गई लंकापति अपने पूर्ण ऐश्वर्य के साथ राजसभा में प्रविष्ट हुआ। मंत्रीमंडल ने खड़े होकर अभिवादन किया। रत्न-सुवर्ण और मणि-मुक्ता से खचित राजसिंहासन पर आरूढ़ होकर लंकापति ने अपने मंत्रीमंडल पर एक वेधक दृष्टि फेंक कर देखा अपूर्व बुद्धि वैभवशाली मंत्रीगण लंकापति की मुखमुद्रा का अध्ययन करते हुए मौन बैठे थे।

लंकापति ने आज अपने ऐश्वर्य को धारण करने में कोई त्रुटि नहीं रक्खी थी परन्तु आज वह मुक्त हास्य करता, शत्रुओं की हँसी उड़ाता और अपने भुजबल पर विश्वास रखता रावण दिखाई नहीं देता था। आज उसके मुख पर गंभीरता थी। उसके सिर पर मानो हिमाद्रि का बोझ था। आज मानो शत्रु उसकी हँसी उड़ाते हों ऐसा हतप्रभ-फिर भी बनावटी प्रभाव पैदा करता हुआ वह दिखाई देता था। आज उसे अपने बाहुबल पर विश्वास न हो और किसी की सहायता की अपेक्षा रखता हो, ऐसा होते हुए भी बाह्य लापरवाही दिखाता वह दृष्टिगोचर

होता था। उसकी दृष्टि में विकार द्वारा सृजित विनाश का दर्शन होता था।

राजसभा का मौन भंग करता हुआ राक्षसेश्वर बोला :—

'लंका के वफादार मंत्रीश्वरो ! आज मुझे आपकी विचक्षण वुद्धि का प्रकाश चाहिये।'

'हमारा सर्वस्व राक्षसेश्वर का ही है' महामंत्री ने खड़े होकर नमन किया और समर्पण की भावना अभिव्यक्त की।

अभिनंदन ! अभिनंदन ! प्रिय मंत्रीश्वरो ! आपकी सूक्ष्म प्रज्ञा और विचक्षण राजनीति ने लंका के राज्य में सार्वभौम राज्य सत्ता स्थापित की है। आपने अनेक वार आपत्ति में मार्ग दर्शन देकर आपत्ति को संपत्ति में वदल डाली है। घोर निराशा में आशा के रत्नदीप प्रकटित कर प्रकाश फैलाया है। लंका की राज्यसत्ता के आप स्वयं आधार स्तंभ हैं।'

रावण दो क्षण मौन रहे, मूल वात पर आते हुए उन्होंने कहा :—

आप सव तीन दिन के युद्ध की फलश्रुति से परिचित हैं कि हमने क्या खोया है और शत्रु पक्ष में कितनी हानि हुई है। खैर, युद्ध में दोनों पक्षों में हानि होती रहती है, इसकी मुझे ग्लानि नहीं, परन्तु मुझे घोर ग्लानि है भाई कुंभकर्ण के खोने की। शत्रु उसे नागपाश से वांधकर उठा लेगया है। प्रिय इन्द्र-जीत् और मेरी आत्मा से अभिन्न मेघवाहन को भी दुष्ट राम ने वन्धन ग्रस्त वनाया है—अव इन्हें मैं किस प्रकार मुक्त करूँ ? हाँ, कल जव मेरी 'अमोघविजया' महाशक्ति ने लक्ष्मण की छाती चीर डाली, उसे युद्धक्षेत्र में पछाड़ दिया तव मैंने निश्चित् रूप से मान लिया था कि आज प्रातः होते ही लक्ष्मण मृत्यु की

गोद में समा जाएगा। लक्ष्मण के विरह को सहन करने में असमर्थ राम भी उसी के पीछे स्वर्ग जाएगा। इन दो की मृत्यु होते ही वानरद्वीप की सेना और अन्य विद्याधर राजा तो तुरन्त भाग छूटेंगे और मेरे भाई, पुत्र आदि मुक्त होकर यहाँ आ जाएँगे।

परन्तु हाय दुर्भाग्य······लक्ष्मणजी उठा······ये समाचार मुझे प्रातः ही प्राप्त हो चुके हैं। अब क्या करना ? कुंभकर्णादि को किस प्रकार मुक्त करवाना ? मार्ग बताएँ मेरे प्रिय मंत्रीश्वर······'

राजसभा विचार मग्न हो गई। इतने में महामंत्री ने खड़े होकर कहा :—

'राक्षसेश्वर द्वारा खड़े किए गए प्रश्न का एक ही समाधान हमें सूझता है, कुंभकरण आदि को श्रीराम के पास से मुक्त करवाने के लिये सर्व प्रथम आपको रामप्रिया सीता को मुक्त करना चाहिये यद्यपि आपकी इच्छा से विपरीत यह सलाह है, परन्तु राक्षसकुल को सर्वनाश में से बचाने के लिये अप्रिय सलाह भी देना हम अपना कर्तव्य समझते हैं।

हे विश्वविजयी सम्राट ! आपने कितनी अधिक हानि उठाई है ? जो वीर युद्ध की अग्नि में होम दिये गए वे तो वापिस मिलने वाले नहीं······हस्त-प्रहस्त और महोदर जैसे सेनापति मारे गए, कई राजकुमार मारे गए, लाखों सुभटों की मृत देहों से लंका के सीमा प्रदेश गंधित हो उठे। अरे ! इसकी भी चिन्ता नहीं, सत्य की रक्षा हेतु, संस्कृति की रक्षा हेतु यह सब करना पड़े तो करना चाहिये······परन्तु राजेश्वर आप ही सोचें कि क्या सत्य हमारे पक्ष में है ? संस्कृति की रक्षा है ?

नहीं ! जरा भी नहीं.........अतः घोर संहार को रोकना चाहिये, राक्षसकुल की भव्य संस्कृति के इतिहास को कलंकित होने से बचाना चाहिये.........उसके लिये सीता को सम्मान पूर्वक राम को समर्पित कर देना ही एक मात्र उपाय मुझे सूझता है—अन्य मंत्रीगण अपना २ अभिप्राय व्यक्त कर सकते हैं।'

महामंत्री की वृद्ध देह कांप रही थी। वे बोलते २ थक जाते थे। वे बैठ गए। राजसभा पुनः शांत हो गई। रावण भूमि की ओर दृष्टि करके पुनः विचार मग्न हो गया धीरे २ उसने राजसभा पर दृष्टि फिराई.........वह बोला :—

'महामंत्री द्वारा सूचित उपाय तो मुझे विभीषण ने युद्ध के पूर्व में ही जब हनुमान आ चुका था तब सूचित कर दिया था। परन्तु यह उपाय शक्य उपाय नहीं है। मुझे शक्य उपाय की आवश्यकता है। यदि सीता को ही लौटाना होता तो मैं यह घोर संग्राम क्यों खेलता ? और हां, यदि मुझे अपने पराजय की शंका हो तो अब भी आपके निर्देशित् मार्ग को अपनाऊँ.........परन्तु मुझे मेरी पराजय की तनिक भी शंका नहीं.........मुझे चिन्ता है एक कुंभकरण आदि की ! इन्हें मुक्त करने का कोई उपाय.........'

'ऐसा उपाय मेरे पास नहीं। सीता को मुक्त किये बिना कुंभकरण आदि कोई मुक्त हो सकते।

राम और लक्ष्मण अब क्या हाथ आए हुए शत्रुओं को ऐसे ही छोड़ देंगे। वे भी राजनीति में निपुण राजकुमार हैं.........और सत्य की रक्षा हेतु वे लड़ रहे हैं.........'

रावण बोल उठा :—

'एक स्त्री के खातिर ऐसा घोर युद्धकर हिंसा के तांडव नृत्य करना यह भी सत्य ! यह भी संस्कृति !'

इतने ही तेज स्वर से दृढ़ता पूर्वक महामंत्री वोले :—

'एक परस्त्री के खातिर ऐसा घोर युद्ध कर हिंसा का तांडव नृत्य करना क्या सत्य है ? संस्कृति है । ओ मेरे लंका के नाथ ! आज आप यह क्या कहते हैं ? यह युद्ध सीता के लिये राम-लक्ष्मण नहीं लड़ते परन्तु एक स्त्री के शील की रक्षा हेतु युद्ध लड़ रहे हैं ।

'परस्त्री का शील न लुटे' यह संस्कृति है·······आप इस संस्कृति का ध्वंस करने के लिये तैयार हुए हैं, इसके विरुद्ध यह युद्ध है । संस्कृति की रक्षा के आगे हिंसा गौण बन जाती है, परन्तु आज आपकी बुद्धि विपरीत हो गई है·······आप राक्षस वंश का संहार करने के लिए तैयार हो गए हैं·······'

वयोवृद्ध मंत्री की वाणी ने लंका की राजसभा में उत्तेजना फैला दी । राक्षसेश्वर महामंत्री के तीक्ष्ण शव्दों से क्रुद्ध हो उठा :—

'महामंत्री ! राजनीति में संस्कृति का कितना स्थान है ? संस्कृति मानव हेतु है । मानव संस्कृति हेतु नहीं ? मैं सीता को चाहताहूँ—राम को सीता का मोह छोड़ देना चाहिये—उसके वदले में·······

'बिल्कुल अशोभनीय वोलते हैं राजेश्वर ! क्या राजनीति है और क्या संस्कृति है, इसकी शिक्षा मैंने आपके अग्रजों को दी है । जो राजनीति संस्कृति की रक्षा न करे, वह राजनीति फेक देने योग्य होती है । जिस संस्कृति के माध्यम से मनुष्य अपने

सदाचारों का पालन सरलता से कर सके और अपनी आत्मा का ऊर्ध्वीकरण कर सके वह संस्कृति राजनीति के आधीन नहीं होती।

राम पत्नी पर मोहित होकर उसका अपहरण करने का आपको क्या अधिकार था? मैं लंका के महामंत्री के रूप में आज घोषित करता हूँ कि आपने लंका की भव्य संस्कृति को भग किया है।'

रावण के कलेजे में तीक्ष्ण तीर चूभा.......वह कुछ भी न बोला। यदि वह महामंत्री के विरुद्ध कुछ भी असभ्य बोल जाए तो समग्र लंका की जनता उसके विमुख हो जाए और गृहक्लेश में ही उसका विनाश हो जाए—उसने क्रोध को पी लिया। अपने चित्त को जब थोड़ी चैन हुई तब वह बोला :—

'मंत्रीश्वरो! मुझे एक योजना सूझती है; वह मैं आपके सामने रखता हूँ।

'मैं एक चतुर दूत को राम के पास भेजता हूँ। मेरा संदेश लेकर वह जायें.......'

'क्या संदेश भेजेंगे? किसके साथ भेजेंगे?' मंत्रीगण बोल उठे।

'मैं सामन्त को दूत के रूप में भेजना पसंद करता हूँ।'

'बिल्कुल ठीक है।'

'मैं उसके द्वारा अपना संदेश राम को भेजूँगा। साम, दाम, दंड, और भेद से सामन्त मेरा संदेश कहेगा।'

'क्या इसमें अन्त में सीता को सौंप देने का प्रस्ताव भी है?' मंत्रीश्वर ने पूछा।

'नही ! यह बात असंभव है। सीता का प्रत्यर्पण मैं करने वाला नही।'

'तो आपके संदेश का कोई सुखद परिणाम नही आएगा.........'

'भले ही.........'

रावण ने तुरन्त सामन्त को बुलाया। राम को देने का संदेश उसे समझाकर रवाना किया। सामन्त के जाने के पश्चात् रावण ने सभा से कहा :—

'सामन्त क्या प्रत्युत्तर लेकर आता है उससे ज्ञात होकर आप जाएँ।'

मंत्रीगण वहीं बैठे। राक्षसेश्वर भी वहीं बैठा।

सामन्त तुरन्त श्रीराम की छावनी की ओर रवाना हुआ। सामन्त का व्यक्तित्व बहुत ही आकर्षक था। उसने लंकापति के अनेक महत्त्वपूर्ण संदेश भारत के राज-राजेश्वरों को पहुँचाए थे; और वह अपेक्षित प्रत्युत्तर लेकर आता था। उसकी वाणी में जैसी मधुरता थी, वैसी ही धीरता थी और वैसा ही संयम था। देश-काल की उसे गहरी सूझ थी। आज उसके सिर पर ही संदेशवाहक का कार्य आ पड़ा था। वह उसके लिये बड़ी व्याकुलतापूर्ण था इतना ही नहीं परन्तु खतरे से भी खाली न था। राक्षसेश्वर की आज्ञा को शिरोधार्य किये विना उसके लिये कोई अन्य मार्ग ही न था।

उसने श्रीराम और लक्ष्मण के लिए कई बातें सुन रक्खी थी। वह अन्तःकरण से उनका अनुरागी भी बना था। आज उनके दर्शन लाभ का अवसर मिलने से उसे आनन्द था, परन्तु जो संदेश पहुँचाना था, उससे वह बेचैन भी था।

वह छावनी के मुख्य द्वार पर आ पहुँचा; उसने-द्वार रक्षक को अपनी मुद्रिका दी और श्रीराम के पास जाने की इच्छा व्यक्त की। सामन्त को वही खड़ा रखकर द्वाररक्षक श्रीराम के पास पहुँचा; प्रणाम कर उसने मुद्रिका श्रीराम को वताई और आगंतुक की इच्छा व्यक्त की।

'भले ही उसे आने दो।' द्वार रक्षक प्रणाम करके चला गया।

श्रीराम ने लक्ष्मणजी की ओर देखकर कहा :—

'रावण का संदेश लेकर दूत आ रहा है'''''''लक्ष्मणजी ने श्रीराम को ओर देखा और मौन रहे'''''''द्वाररक्षक ने सामन्त के साथ प्रवेश किया। श्रीराम को प्रणाम करके उसने कहा :—

'राक्षसेश्वर ने आपको संदेश पहुँचाने के लिये मुझे भेजा है :—

'तू संदेश दे सकता है।'

सामन्त ने गला साफ किया और उसकी लाक्षणिक शैली में संदेश की प्रस्तावना की।

,राक्षसेश्वर इस भीषण संग्राम से विराम चाहते हैं। यदि आप मान जाएँ तो यह घोर हिंसा बन्द हो जाए। लंकापति ने दो इच्छाएँ व्यक्त की हैं।'

'राक्षसेश्वर की इच्छा नहीं महेच्छा होगी !' श्रीराम हँसते-हँसते सुग्रीव की ओर देखकर बोले।

'राक्षसेश्वर ने कहलवाया है कि कुंभकर्ण, इन्द्रजीत् मेघवाहन आदि उनके बन्धुओं, पुत्रों को मुक्त किये जाएँ''''''

'दूसरी महेच्छा ?' सुग्रीव बोल उठा।

'दूसरी इच्छा—सीता लंकापति को सौंप दी जाए।'

सामन्त के दूसरे प्रस्ताव ने श्रीराम को छेड़ दिया। लक्ष्मणजी क्रोध से तमतमा उठे, सुग्रीव सामन्त की ओर आगे बढ़ आया कि सामन्त ने तुरन्त बात आगे बढाई।

'लंकापति इसके बदले में अपना आधा राज्य देने का वचन देते हैं……तीन हजार विद्याधर कन्याएँ देने के लिये तैयार हैं… …इन्हें स्वीकार कर संतुष्ट हो।'

'अरे दूत! तेरे राजा से कहना कि उसका आधा राज्य ही लेकर राम संतुष्ट नहीं होंगे! तेरा वध करके संपूर्ण राज्य लेंगे! तीन हजार कन्याओं की श्रीराम को आवश्यकता नहीं, इसे तो मात्र सीता ही चाहिये।'

'हे दशरथनंदन! लंकापति की बात मान लें…… आपका जीवन भी……'

'वाचाल दूत! तेरे लंकापति से कहना कि राम को राज्य नहीं चाहिये……उसे विशाल अंतःपुर से प्रयोजन नहीं……यदि वह परस्त्री लंपट अपने भाईयों और पुत्रों को वापिस चाहता हो तो जानकी को सम्मानपूर्वक मेरे पास लौटा दे……अन्य वाणीविलास करने की आवश्यकता नहीं। किसका सर्वनाश होगा—इसका तो जब रावण युद्ध में उतरेगा उसी-दिन निर्णय होगा……'

'हे राम! एक स्त्री की खातिर अपने प्राणों की बाजी लगाना तुम्हारे लिये उचित नहीं। ठीक है, रावण के प्रहार से मृत प्रायः बना हुआ लक्ष्मण एक बार जी उठा—परन्तु अब वह कैसे जीएगा! तुम और ये वन्दर अपने प्राणों की रक्षा कैसे

कर सकोगे ? एक रावण ही स्वयं सकल विश्व का नाश करने में समर्थ है·······अतः इनके प्रभाव पर आप गंभीरता पूर्वक सोचो।'

लक्ष्मणजी का पुण्य प्रकोप प्रकट हुआ :—

'अरे दुष्ट दूत ! अब भी स्वशक्ति-परशक्ति को नहीं जानता। तीन दिन के युद्ध में तुझे हमारी शक्ति का अनुभव नहीं हुआ ? भाईयों का वध हुआ और पकड़े गए······पुत्रों का वध हुआ और बन्दी बने—एक अंतःपुर की स्त्रियों के सिवाय इसके परिवार में कौन बचा है ? फिर भी अपने पराक्रम की बिरुदावली गाता फिरता है ? धिक्कार है उसे और तुझे – ऐसे अधमराजा का संदेश लेकर तू आया है······ यह तेरी दुष्टता है·······फल, फूल और डाल-पात रहित वृक्ष जैसा रावण अकेला रह गया है, वह हमारे सामने अब कितना संघर्ष करता है जो देख लेना । जा, शीघ्र जा, मेरी भुजाएं उसका वध करने के लिये सज्ज हैं·······'

लक्ष्मणजी के प्रत्युत्तर का उत्तर देने के लिये तैयार होते सामन्त को अंगद ने गर्दन पकड़कर बाहर ढकेल दिया—निकाल दिया।

सामन्त हतप्रभ होकर लंका की मंत्री-परिषद् में आ पहुँचा। उसे देखते ही रावण राम का प्रत्युत्तर समझ गया। सामन्त ने श्रीराम और लक्ष्मण द्वारा कथित बातें अक्षरशः कह सुनाई। रावण उद्विग्न चित्त से सुन रहा था। अब क्या किया जाए ?' उसे कुछ भी सूझा नहीं। मंत्रीओं से उसने पूछा :—

'कहिए ! अब क्या करें ?'

जीवन में कभी भी न देखी गई दीनता आज लंकापति के मुख पर दिखाई दी। मंत्रियों के हृदय ग्लानि से भर गए।

'राक्षसेश्वर ! शांत हो। शांति का मार्ग सोचे। युद्ध के मार्ग में शांति नहीं। राक्षसकुल का इतना संहार होने के पश्चात् भी आप न सोचेंगे ?'

सीता का प्रत्यर्पण करने के सिवाय इस सर्व विनाश में से बचने का अन्य कोई उपाय नहीं है इसे अस्वीकार न करेंगे ! सीता का प्रत्यर्पण करने का निषेध सोच कर जो २ कदम उठाया उसका भीषण परिणाम देखा-अनुभव किया। अब अन्वय का फल देखे। सब कार्यों की अन्वय-व्यतिरेक दोनों से परीक्षा करनी चाहिये। एकांगी बनकर नहीं। बस ! एक प्रस्ताव रखकर देखो : सीता के प्रत्यर्पण का देखो ! इसका क्या परिणाम निकलता है। अभी तो इन्द्रजीत् और मेघवाहन जीवित हैं·······दूसरे अनेक राजकुमार भले ही कैद हुए हों, परन्तु उनका वध नहीं हुआ। देखो ! वे सब आपको पुनः भेंट होते हैं या नहीं ? लंका की अवशिष्ट संपत्ति का विनाश करने पर क्यों तुले हैं ? सम्मानपूर्वक सीता को श्रीराम के पास भेजकर आपत्ति के बादलों को बिखेर डालो।'

वृद्धमंत्री की मंगलवाणी हतबुद्धि लंकापति सुनता रहा, परन्तु उसके अमंगल भावी ने उसे प्रतिकूल मार्ग पर मोड़ रक्खा था। उस पर कोई प्रभाव न पड़ा। हाँ, सीता को पुनः सौंपने की बात उसे तीक्ष्ण तीर के घाव जैसी लगी। उसने परिषद् विसर्जन की और वह एकांत मंत्रणागृह में जाकर चक्कर काटने लगा। लंका का अधिनायक विनाश की ओर दौड़ रहा था।

१०
बहुरूपिनी विद्या

'सीता का प्रत्यर्पण कर कुम्भकर्णादि को मुक्त करवाऊं? ये इन्द्रजीत् और मेघवाहन मेरी दो भुजाएं""मुझे इन्हें किसी भी मूल्य पर मुक्त करवाना चाहिये। और किसी उपाय से राम मानने वाला नहीं। उसे तो सीता ही चाहिये""और मुझे? मुझे भी सीता ही चाहिये""। सीता के विना अब मुझे जीवन में कोई आनन्द नहीं लगता–सीता को प्राप्त करने के लिए युद्ध के विना कोई मार्ग नहीं। अब मुझे स्वयं को ही युद्ध लड़ना है। मेरी सेना में अब उनका मुकाबला कर सके ऐसा कौन रहा है? सर्वनाश""

रावण अपने शयनखंड में स्वगत बोलता है""

खंड में कभी चक्कर काटता है तो कभी पलंग में करवट बदलता है।

'राम के सैन्य में अभी तक लगभग सभी जीवित हैं। ये राम-लक्ष्मण जीवित हैं, वे हनुमान, सुग्रीव और अंगद आदि जीवित हैं""भामंडल, प्रसन्नकीर्ति, और चन्द्ररश्मि भी जीवित हैं""हां, भले ही ये जीवित रहे, अब ये जी न सकेंगे। परन्तु मेरी समझ में नहीं आता कि 'अमोघ विजया' जैसी महाशक्ति का प्रहार होने पर भी लक्ष्मण कैसे जीवित रहा। अन्यथा राम-लक्ष्मण मरे कि वे वानर और विद्याधर तो भाग गए समझें"" नहीं भागेंगे तो यहां जमीन में ही उनके मृत देह दफन होंगे और

मेरे पास अन्तिम शस्त्र सुदर्शन चक्र तो है ही ! यह चक्र छोड़ूं कि लक्ष्मण का शिरच्छेद ! परन्तु मात्र इस चक्र पर विश्वास रखकर अब युद्ध नहीं किया जा सकता। 'बहुरूपिनी विद्या' की साधना करनी पड़ेगी। उस विद्या से एक रावण के असंख्य रावणों का सृजन होगा। जहां शत्रु देखेंगे उधर ही रावण दिखाई देंगे ! और 'सच्चा रावण कौन ?' इसका निर्णय न कर सकेंगे""बस, तब तक मैं लक्ष्मण का वध कर डालूंगा।'

वह प्रसन्न होकर नाच उठा। तुरन्त वह मंदोदरी के महल की ओर दौड़ा।

अब सुख दुःख की साथी एक मात्र मंदोदरी थी। परन्तु युद्ध में एक के पश्चात् एक लंका के वीरों के वध, बंधन आदि सुनती गई वैसे-वैसे वह चितातुर होती गई थी। उसमें भी जिस दिन कुम्भकर्ण, इन्द्रजीत् आदि कैद हुए थे, उस दिन तो उसने भोजन का भी त्याग कर दिया था। मंदोदरी वास्तव में एक विचक्षण स्त्री थी। एक ओर उसने अपने व्यक्तिगत चरित्र का उच्चतम निर्माण किया था""दूसरी ओर रावण के लिये सीता को समझाने गई थी ! कभी भी उसने सीता के त्याग के लिये रावण से कहा न था। इसके अतिरिक्त यदि सीता मान जाए और रावण के अंतःपुर की शोभा बढ़ाए तो अपना पटरानी पद सीता को दे देने की तैयारी बताती थी ! अपनी ओर देखने की दृष्टि और पति को देखने की दृष्टि दोनों भिन्न थी।

मंदोदरी ने भी अपने मन में रावण के सिवाय किसी पुरुष की अभिलाषा न की थी। उसने अपना सर्वस्व रावण को समर्पित कर दिया था। वह रावण में ही तृप्त थी। जबकि रावण मात्र मंदोदरी से तृप्त न था। हजारों स्त्रियों को उसने

अन्तःपुर में रक्खा था। उनसे भी उसे तृप्ति न हुई थी"""और वह सीता का अपहरण कर लाया। फिर भी मंदोदरी को रावण से शिकायत न थी। आंतरिक संताप भी न था। कैसी गजब की वह स्त्री थी! रावण मंदोदरी को समझता था, अतः वह बार-बार उसके पास दौड़ कर जाता था। आज भी उसी तरह रावण मंदोदरी के पास दौड़ा आया था"""परन्तु मंदोदरी का मुख म्लान था। उसकी देह में मानों चेतना न थी। उसने रावण का स्वागत किया—परन्तु रावण की ओर न देखा। वह तीव्र अंतर्व्यथा का अनुभव कर रही थी। रावण उस व्यथा का कारण समझता था। पुत्र विरह से पीड़ित माता की व्यथा को न समझ सके, ऐसा बुद्धिहीन वह न था।

'मंदा"""' रावण ने मंदोदरी का ध्यान आकर्षित करने का प्रयत्न किया। मंदोदरी ने रावण की ओर देखा"""

'मैं तेरी वेदना समझता हूं"""इन्द्रजीत्, मेघवाहन को मुक्त करने के लिये मैं आकाश-पाताल एक कर दूंगा""'

रावण मंदोदरी को आश्वासन देने लगा, परन्तु मंदोदरी पर उसका कोई प्रभाव दिखाई न दिया। वह पति के सामने देखती रही।

'मैं बहुरूपिनी विद्या साधना चाहता हूं। यह विद्या सिद्ध होते ही मैं लक्ष्मण का वध करूंगा और मेरे पुत्रों, बन्धुओं, स्नेहीजनों को मुक्त करूंगा और सीता"""

रावण मंदोदरी को प्रसन्न करने के लिये बोलता जा रहा था, परन्तु मंदोदरी के मुख पर स्मित की रेखा भी उभरी न थी। मानो उस सती स्त्री ने लंका का, लंकापति का और राक्षसवंश का भविष्य देख लिया हो।

'मैं साधना करने के लिये गृहचैत्य में बैठूंगा''''तुझे उत्तर साधक का कार्य करना होगा ! बोल ! करेगी न ?'

'जैसी आपकी आज्ञा ।' मंदोदरी ने संक्षिप्त उत्तर दिया ।

'यह साधना गुप्त रीति से करनी है । शत्रु को पता न चले इस प्रकार अतः तुझे बड़ी सावधानी रखनी है ।'

'इसी प्रकार होगा ।'

मंदोदरी ने लंकापति के साथ भोजन किया । लंकापति ने मंदोदरी को आवश्यक निर्देश दे दिये और स्नानादि से निवृत्त होकर पूजन के वस्त्र पहन कर रावण श्री शान्तिनाथ भगवान् के गृहचैत्य की ओर चला । मंदोदरी भी पूजन की सामग्री थाल में लेकर पति का अनुसरण करती हुई गृहचैत्य में आई ।

भगवन् के दर्शन करते ही रावण के तन-मन प्रफुल्लित हो गए । भक्ति से उसके मुख पर हर्ष छा गया । गोशीर्षचन्दन और दिव्य सुगंधित पुष्पों से रावण ने श्री शांतिनाथ भगवान की पूजा की । द्रव्य पूजा करने के पश्चात् उसने भाव पूजा शुरू की । रत्नशीला पर उसने पद्मासन लगाया । आँखे बंद करके कल्पना सृष्टि में से एक शान्ति नाथ भगवान के सिवाय समग्र सृष्टि को बाहर निकाल फेंकी !

एक शांतिनाथ भगवान में ही उसने एकाग्रता साधी । योगी रावण परमयोगी में लीनता का अनुभव कर रहा था । उसके अंग २ रोमांचित हो उठे । उसने भावपूर्ण स्वर से स्तुति का आरम्भ किया ।

जय जग रक्षक शांति जिनेश्वर !,
तुम चरणों में हो वंदन ।
जय देवाधिदेव जगत के
दर्शन से शुभ संवेदन ।

शांतिनाथ ! भवसागर तारक !
भगवान् ! उर का यह मंथन,
सर्व अर्थ सिद्ध मंत्र नाम तुम
'नमोनमः' का हो गूंजन.........।१।

हे परमेश्वर ! अष्ट प्रकारी
पूजा जो तेरी करते
अणिमादि सिद्धि को वे तो
अविलंब वरण करते ।
धन्य हुए नयन वे तो
तेरे दर्शन नित २ करते
धन्य २ वे हृदय कमल हैं
जहां जिन ! आप विचरण करते..... ...२

हे जिनेश्वर, तुझ पाद स्पर्श से
मानव निर्मल बनता
पारस स्पर्श से लोह सुवर्ण
चमत्कार जैसे बनता
हे प्रभु ! तुझ चरण कमल में
प्रणाम नित करने से
मम भाल पर शृंगार तिलक हो,
भव २ में हो जीवन साथी..... ...३

चन्दन, पुष्प-अक्षत फल चढ़ाये.
तुम चरणों में हे जिनराय !
राज्य संपदा की वृद्धि हो,
सदैव तुम दर्शन मन भाए ।

जगद्विभो हे भगवान् मेरी
यही प्रार्थना पुनः पुनः
भव २ मिले तुम्हारी भक्ति
करूँ विनती पुनः पुनः ।४

लंकापति ने अक्षमाला हाथ में ली और विद्या साधना शुरू की। मंदोदरी ने गृहचैत्य के द्वार पर खड़े सेनापति यमदंड से कहा :—

'लंका में ढिंढोरा पिटवा दो कि सभी लंका वासी आज से आठ दिन तक जिन धर्म की आराधना में लीन रहें। कोई हिंसा न करे, चोरी न करे, अब्रह्म का सेवन न करे, व्यापार या आरम्भ-समारंभ न करे। जो कोई भी आज्ञा का उलंघन करेगा उसे राजदंड दिया जायेगा, उसका वध होगा।'

यमदंड ने मंदोदरी की आज्ञा शिरोधार्य की और लंका में घोषणा करवा दी। नगरवासी अचानक ऐसी घोषणा सुनकर आश्चर्य चकित हो गए। भय-पीड़ा और विनाश से उकताई हुई प्रजा को इस घोषणा से आनंद हुआ। विनाश में से बच निकलने की आशा बनी। सभी धर्म कार्य में लीन हुए। जिन मंदिरों में महोत्सव आयोजित हुए। मानो समग्र वातावरण ही बदल गया हो।

श्रीराम के चरपुरुष जो लंका में गुप्त जानकारी प्राप्त करने के लिये फिर रहे थे, उन्होंने जब यह घोषणा सुनी, तब उनके आश्चर्य की सीमा न रही। 'ऐसी घोषणा ऐसे युद्ध के समय कैसे? क्या रावण हताश होकर धर्म की शरण में गया?' उन्होंने इस घोषणा का कारण ढूंढना शुरू किया और कारण का पता भी लग गया। वे फौरन अपने स्कंधावार में पहुँच गए

श्रौर सुग्रीव को गुप्त जानकारी दी । सुग्रीव चौंक उठा । चर-पुरुषों को रवाना कर सुग्रीव तुरन्त श्रीराम के शिविर में पहुँचा । श्रीराम, लक्ष्मणजी, विभीषण, भामंडल अंगद आदि के साथ विचार विनिमय कर रहे थे । सुग्रीव का सत्कार करते हुए श्री राम ने अपने पास बिठा कर पूछा :—

'कहो वानेश्वर ! क्या नवीनता है ?'

'देव ! लंका में हुई घोषणा सुनी ?'

'नहीं ! क्या घोषणा करवाई गई ?'

'सभी नगरवासियों को आठ दिन तक जैन धर्म परायण बनकर हिंसादि पापों से बचना । जो कोई भी आज्ञा का उलंघन करेगा उसका वध होगा ·······'

'प्रयोजन ?'

'प्रयोजन बड़ा ही चौंका देने वाला है । प्रजा का उत्साह बना रहे और दूसरी ओर लंकापति 'बहुरूपिनी विद्या' सिद्ध कर ले ।'

'तो क्या लंकापति विद्यासाधन करने बैठा है ?'

'जी हाँ ।'

'श्रीराम मौन रहे और विचार मग्न हो गए । फिर बोले :—

'तो अब आठ दिन तक युद्ध बन्द रहेगा·······'

'फिर भीषण युद्ध होगा ! बहुरुपिनी विद्या यदि लंकापति ने सिद्ध कर ली तो हमारी विजय संशय में है ।'

सुग्रीव ने चिंतातुर मुख से कहा :—

'तो फिर ?'

'वह वहुरुपिनी विद्या' सिद्ध करे उसके पूर्व ही उसका निग्रह करना चाहिये।' सुग्रीव ने मार्ग वताया। श्रीराम के मुख पर स्मित छा गया। वे वोले :—

'वानरेश्वर! विद्या-साधना के लिये वैठे हुए शान्त और धर्म परायण दशानन का कैसे निग्रह किया जाए? मैं उसके जैसा छल-कपट करने वाला नहीं...... चिन्ता न करें। भले ही वह वहुरुपिनी विद्या सिद्ध कर ले अथवा अन्य विद्याएँ सिद्ध कर ले—अव जिस दिन वह मैदान में आएगा—लौट नहीं सकेगा।'

सुग्रीव मौन रहे।

परन्तु इस मंत्रणाखंड में से वैठा हुआ अंगद सेनापति वाहर चला आया। उसे सुग्रीव की वात वहुत गंभीर लगी। श्रीराम की वात नीति की दृष्टि से उसे सुयोग्य लगी, परन्तु महामायावी रावण के सामने नीति से ही आचरण करना उसे उचित न लगा। उसने अपने वफादार पाँच-पच्चीस चुने हुए सिपाहियों को साथ लिया और रात्रि के अँधकार में वह अदृश्य हो गया। श्रीराम-लक्ष्मण या सुग्रीव आदि किसी को भी कल्पना तक न थी कि अंगद एक महान् साहास का काम करने हेतु लंका में घुसा है।

चर पुरुषों द्वारा अंगद को पता चल गया था कि रावण ने गृह चैत्य के आसपास सैनिकों को नियुक्त नहीं किया था, अतः वह अपने साथियों सहित आकाश मार्ग से सीधा गृह चैत्य के प्रांगण में आ पहुँचा। गृह चैत्य में गर्दन डाल कर देखने पर अंगद ने रावण को ध्यानस्थ देखा। श्री शांतिनाथ भगवान की नयन रम्य प्रतिमा के सामने एक रत्नशिला पर वैठकर रावण विद्यासिद्धि कर रहा था। अंगद को सुग्रीव द्वारा कही गई वात

याद आ गई। 'यदि यह विद्यासिद्धि कर ले तो हमारी विजय संशय में·······'वह कांप उठा। मन ही मन उसने निश्चय किया कि 'किसी भी मूल्य पर रावण को ध्यान भ्रष्ट करना और विद्या सिद्धि न होने देनो।'

अगद और उसके सिपाहियों ने विविध उपसर्ग करना शुरू किया, परन्तु ध्यान लीन रावण जरा भी विचलित न हुआ। वह अपने जाप में अस्खलित गति से आगे बढ़ रहा था।

नित्य रात को इस प्रकार उपसर्ग करने का काम अंगद ने जारी रक्खा, परन्तु उसमें अंगद को सफलता न मिली। सातवीं रात को अंगद ने एक भयंयकर विचार किया। नाना उपसर्ग करने पर भी जब रावण जरा भी विचलित न हुआ तब अंगद ने रावण से कहा:

'हे रावण! तूने यह क्या पाखंड मचा रक्खा है? जब पराजय से बचाने वाला·······राम लक्ष्मण के तीक्ष्ण बाणों से बचाने वाला कोई न मिला—तब तू यह ढोंग करके बैठा है! तूने मेरे स्वामी श्रीराम की पत्नी सती सीता का अपहरण श्री राम की अनुपस्थिति में किया था जब कि आज मैं तेरी पत्नी मंदोदरी का अपहरण तेरे देखते-देखते ही करता हूं·····'

क्रोध से धमधमाता हुआ अंगद मंदोदरी को रोती चीखती करुण स्वर से विलाप करती—बालों की चोटी से घसीटता हुआ ले आया। मंदोदरी अचानक आई हुई आपत्ति से स्तब्ध तो हुई ही थी, लंका के लाखों सुभट जिस राजमहल की दिन-रात रक्षा करें, उस राजमहल में से लंका की पटरानी को उठा लाना—उसकी चोटी पकड़ घसीट लेना—कैसा घोर साहस!

गृह चैत्य में आकर अंगद ने मंदोदरी को रावण के सामने पटक दी····'देख ! तेरे देखते-देखते तेरी पत्नी का अपहरण कर ले जा रहा हूँ।'

फिर भी ध्यान में एकाग्र बना हुआ रावण मानो न कुछ देखता हो, न कुछ सुनता हो, वह तो जाप में लीन है ! रावण के धैर्य ने भी हद कर दी !

रावण की सत्त्वशीलता ने विद्यादेवी को अवकाश में उपस्थित कर दी। आकाश प्रकाशित हुआ। विद्यादेवी ने मधुर ध्वनि की। वह बोली—हे रावण ! मैं तुझे सिद्ध हुई हूं, अब मैं क्या करूँ—मुझे बता। सकल विश्व को तेरे वश कर दूँ—इन राम-लक्ष्मण की क्या बिसात है ?'

रावण ने कहा : 'हे विद्यादेवी ! तू सब कुछ करने में समर्थ है····मैं जब याद करूँ तब तू उपस्थित होना। अभी तू अपने स्थान पर जा सकती है।'

विद्यादेवी अन्तर्धान हो गई। अंगद आदि सुभट भी पवन वेग से अपनी छावनी में भाग गए। उधर रावण ने गृह चैत्य के एक भाग में पड़ी हुई मंदोदरी को देखी—उसने मंदोदरी की दुर्दशा देखी—पूछा :

'प्रिये ! ऐसी कदर्थना किसने की ?' मंदोदरी ने अंगद के आगमन की बात कही। रावण आगबबूला हो उठा। उसने भयंकर गर्जना की और वैर का बदला लेने की प्रतिज्ञा की। मंदोदरी ने कहा :

'स्वामी नाथ ! आपको विद्या सिद्धि हो चुकी है। अब आपके मनोरथ सफल होंगे। अब आप स्नान-भोजन कर स्वस्थ बनें।'

मंदोदरी रावण को लेकर राजमहल में आई। रावण ने स्नान किया। मंदोदरी ने भोजन तैयार करवाया। दोनों ने भोजन किया। भोजन करते-करते रावण ने मंदोदरी से कहा :

'प्रिये ! इस दुष्ट अंगद ने तेरा केशकलाप पकड़ कर तुझे घसीटी है। मैं उसका बदला लूंगा। इसके स्वामी राम-लक्ष्मण का वध कर इस सीता को यदि न माने तो उसकी चोटी पकड़ कर इस महल में घसीट लाऊँगा। बलात्कार पूर्वक उसका संभोग करूंगा—'मंदोदरी स्तब्ध हो गई। रावण हाथ-मुंह धोकर सीधा ही देवरमण उद्यान की ओर रवाना हुआ। उसी अशोक वृक्ष की छाया में सीता जी बैठी थी। आठ दिन तक युद्ध बन्द है, इसका इन्हें पता था। रावण कोई साधना करने बैठा है, यह बात भी कर्णोपकर्ण उन्होंने सुनी थी, परन्तु वे निश्चित पता लगा न सकी थी। 'मैं कब बन्धन मुक्त होऊँगी ?' यह विचार अब उन्हें अधिक सताता था। वे विचारतन्द्रा में थी कि रावण के आगमन की आगाही हुई। परिचारिकाएँ दौड़-धूप करने लगी।

'सीता"""!' रावण का सत्ताजनक स्वर कानों से टकराया।

'सुन, मैं तुझे आज अन्तिम बार समझाने के लिये आया हूँ। आज तक मैंने आजिजी बिनती करने में कोई कसर रक्खी नहीं"""तेरे चरणों की धूल में मैं लोटा हूं फिर भी तू मेरी बात मानती नहीं, परन्तु अब मेरी मानने के सिवाय तेरे लिये कोई चारा नहीं। कल राम-लक्ष्मण के साथ अन्तिम युद्ध होगा। कल चक्ररत्न से मैं लक्ष्मण का वध करूंगा। राम लक्ष्मण की याद में ही मर जाएगा। युद्ध से निवृत्त होते ही मैं सीधा यहां आऊँगा। तेरे भोग की प्रार्थना करूंगा। यदि तू स्वेच्छा पूर्वक

समर्पित हो गई तब तो कोई प्रश्न ही नहीं रहता। यदि स्वेच्छा से मेरी बात न मानेगी तो फिर भले ही मेरी प्रतिज्ञा भंग हो. उसके पाप की चिंता या उसका भय रक्खे विना वलात्कार पूर्वक भी मैं तेरी लावण्यमयी काया को अपनी भुजाओं में बाँध लूंगा और मेरी भोग की भूख की तृप्ति करूँगा।'

रावण की हलाहल विष जैसी वाणी सुनते ही सीताजी मूर्छित होकर जमीन पर ढल पड़ी। परिचारिकाएँ मूर्तिवत् खड़ी-खड़ी देखती रहीं। रावण की आँखों से क्रोध के अंगारे वरस रहे थे।

नैसर्गिक शीतल वायु ने और पक्षियों ने पंखों में भर-भर कर लाए हुए शीतल पानी से सीताजी की मूर्छा दूर की। वे करुण स्वर में रो पड़ी।

परन्तु एक सिंहनी की भाँति गर्जन कर वे वोली:

'हे दुष्ट रावण! तू भी सुन ले, यदि राम-लक्ष्मण का वध होगा तो मैं भी अनशन करूँगी-यह मेरी प्रतिज्ञा है। जव तक देह में आत्मा है, तू इसे स्पर्श कर छूत न लगा सकेगा। हां, आत्मा रहित सीता के इस कलेवर को भले ही गिद्ध की भाँति गीजना।'

रावण दिग्मूढ हो गया···

'राम के प्रति ऐसा राग? सचमुच ही राम के प्रति सीता का राग अविहड़ है··· स्वाभाविक है। इस सीता पर मेरा प्रेम पत्थर पर पंकज उगाने जैसा मिथ्या है···मैंने गंभीर भूल की। इस राग के परवश वनकर मैंने लंका को दाव पर लगा दी। भाई विभीषण की वात ठुकरा दी, उसका तिरस्कार किया।

मैंने उचित नहीं किया''''परन्तु अब विषाद करने से क्या ? हाँ, यदि अभी ही मैं सीता को राम के पास पहुँचाता हूँ तो मेरा अपयश होता है''''लोग कहेंगे 'राम से भयभीत होकर रावण ने सीता को लौटा दी ।' नहीं, मैं राम-लक्ष्मण को बाँध कर यहाँ लाऊँगा । यहां लाकर उनकी सीता उन्हें सौंपूंगा-यही उचित है और यश देने वाला है ।'

सीता को लौटाने का विचार आज प्रथम बार ही रावण के मन में पैदा हुआ था । सीता पर से राग तो सख ही गया था । देवरमण उद्यान में से लौटा । दूसरे दिन के युद्ध की तैयारियाँ करने के लिये सेनापति को आज्ञा दे दी और रावण मंदोदरी के शयनकक्ष में चला गया ।

मंदोदरी को उसने अपना मनोभाव कह दिया । सीता पर के स्नेह का विसर्जन कर डाला और सीता लौटाने का भी कह दिया । मंदोदरी को आनंद हुआ । आज लंकापति पर उसका स्नेह उल्लसित हुआ और लंका के उस श्रेष्ठ दम्पति ने अपनी अंतिम यामिनी का आनन्द मनाया ।

११

रावण वध

ब्रह्म मुहूर्त में रावण शयन त्याग कर, शयन गृह से बाहर आया। सुवर्ण खचित राजमहल के नगरावलोकन झरोखे में जा खड़ा हुआ। उसने विशाल, समृद्ध और सौन्दर्यशाली लंका का दर्शन किया। लंका के गगनचुंबी प्रासाद-नंदनवन तुल्य उद्यान, कामदेव की क्रीडा के लिये विलास गृह, मानव को अपना अंतिम ध्येय बताने वाले भव्य मंदिर इन सब का रावण ने अपना तन-मन-धन सींचकर सृजन किया था। रावण आज अपने सृजन का अंतिम दर्शन कर रहा था! परन्तु रावण को पता न था कि आज का उसका नगरावलोकन अंतिम था। उसे अपने वध की, अपने पराजय की कल्पना तक न थी। एक हजार विद्याओं की और बहुरूपिनी विद्या की सिद्धि ने मृत्यु की कल्पना को अवकाश ही नहीं दिया था। इन सब से बढकर 'प्रतिवासुदेव' का सुदर्शन चक्र उसके पास था। उसकी कल्पना थी। राम-लक्ष्मण के वध की, परन्तु वह कल्पना भी कल देव-रमण उद्यान में उसने साफ कर दी थी। उसने राम लक्ष्मण को जीवित पकड़ कर, लंका में लाकर, उन्हें सीता को लौटाने की कल्पना की थी। अपने ऊपर सर्वथा विरक्त सीता पर से उसका स्नेह बिलकुल मिट गया था।

स्नान-भोजनादि से निवृत्त होकर उसने युद्ध के शस्त्र सजना शुरू किया। लंका में आज भारी युद्ध की तैयारियाँ हो रही

थीं। सैन्य युद्ध के मोर्चे पर व्यवस्थित हो रहा था। लंका की सारी शक्ति को रावण ने आज दांव पर लगाई थी। आज उसे अंतिम निर्णय करना था।

सैंकड़ों रणांकुरे सुभटों से वेष्ठित होकर रावण ने प्रयाण की तैयारी की। मंदोदरी ने लंकापति की ललाट पर कुंकुम का तिलक किया.........अक्षत और मोतियों से सत्कार किया—कि थाल में से कुंकुमपात्र पृथ्वी पर गिर पड़ा, परन्तु रावण ने उस ओर कोई लक्ष्य नहीं दिया। वह रथारूढ हुआ—रथ को हांकने की आज्ञा दी—कि इसी बीच पुरोहितजी बोले :—

'राजेश्वर! त्वरा न करें। अभी शुभशकुन होते नहीं—बल्कि अशुभ शकुन हो रहे हैं।'

'पुरोहितजी! शकुन अपशकुन की मैं परवाह करता नहीं। पराक्रमी के लिये शकुन-अपशकुन का क्या? रथ आगे बढाओ।'

'लंकापति! दिशाएँ धुंधली हैं, पक्षी विरस स्वर कर रहे हैं—मानव स्त्रियों के रुदन स्वर सुनाई दे रहे हैं। ऐसे वातावरण में प्रयाण करना उचित नहीं।'

'मैं यह सब शकुन शास्त्र नहीं सुनना चाहता। रथ आगे बढाओ' लंकापति ने क्रोध पूर्वक कहा। सारथी ने रथ दौड़ा दिया। राजपुरोहित ने मंदोदरी के सामने देखकर दीर्घ निश्वास छोड़ा। मंदोदरी के हृदय में धड़कन बढ़ गई। उसकी दाहिनी आंख फड़कने लगी—वह कांप उठी। राजपुरोहित ने कहा :—

'महादेवी! अब दूसरा विचार न करें। भवितव्यता ही भान भुलवाती है। आज के युद्ध का परिणाम अच्छा नहीं आएगा, पर क्या हो? आप धर्म ध्यान में मन स्थिर करें। लंकापति का शुभ चिन्तन करें।'

दूसरी रानियों के साथ मंदोदरी राजमहल में चली गई। स्नान से शरीर शुद्धि कर वह गृहचैत्य में भगवान श्री शांतिनाथ के पूजनार्थ चली गई ।

अरुणोदय हो चुका था।

दोनों ओर सैनाएँ शस्त्र सज्ज होकर खड़ी हो चुकी थी। रावण का रथ युद्ध के मैदान पर आ पहुँचते ही राक्षस सेना ने गगनभेदी आनन्द-ध्वनि की।

राम की सैना में आज गजब का उत्साह और उमंग दिखाई देता था। सैन्य के अग्रभाग में क्रोध से तमतमाते हुए लक्ष्मणजी खड़े थे। उनके पास ही श्रीराम 'हल' शस्त्र लेकर खड़े थे। सैन्य के एक भाग में हनुमान, भामंडल और अंगद थे। दूसरे छोर पर सुग्रीव, नल-नील और प्रसन्न कीर्ति थे। विभीषण ने लक्ष्मणजी के निकट ही स्थान लिया था। सभी सूर्योदय की प्रतीक्षा कर रहे थे कि इतने में पूर्व दिशा लाल-लाल हो गई और सहस्त्र-रश्मि क्षितिज से बाहर आए।

सूर्योदय हुआ।

घोर युद्ध छिड़ा !

लक्ष्मणजी ने पहिला ही तीर रावण की ओर छोड़ा। और वह रावण के कुंडल में होकर पार निकल गया। लक्ष्मणजी ने तीरों की वर्षा करके रावण को ढक दिया। रावण लक्ष्मणजी का पराक्रम देखकर दिग्मूढ हो गया। उसने लक्ष्मणजी के सामने कमर कसकर युद्ध करना शुरू कर दिया।

दूसरी ओर यमदंड सेनापति वीर बनकर झूम रहा था। सुग्रीव, नल-नील और प्रसन्न कीर्ति के सामने आकर भिड़ा था।

देखते ही देखते वह नल-नील को घायलकर प्रसन्न कीर्ति को हंफाने लगा। सुग्रीव ने प्रसन्न कीर्ति को इशारा किया। प्रसन्न कीर्ति नल-नील को रथ में डालकर छावनी में ले गया।

सुग्रीव ने यमदंड को ललकारा। देवों के लिये भी दर्शनीय युद्ध करना शुरू किया। क्षण में इन्द्रजित् के पराक्रम की स्मृति ताजी करवा दे तो क्षण में कुंभकर्ण की याद ताजी करवा दे' ऐसा युद्ध यमदंड खेल रहा था। सुग्रीव आश्चर्य चकित हो गया, परन्तु सुग्रीव ने यमदंड के साथ अधिक समय तक युद्ध न लड़ा। गदायुद्ध में सुग्रीव ने यमदंड को यमलोक पहुँचा दिया।

युद्ध के मध्य भाग में एक लक्ष्मणजी और रावण का ही युद्ध जमा था। बाकी सब द्रष्टा बन गए थे, मानो जय-पराजय का निर्णय ये दोही करने वाले हों। रावण ने 'बहुरूपिनी' विद्या का स्मरण किया। तुरन्त असंख्य रावण प्रगट हुए! भीषण रूपधारी असंख्य रावणों को ऊपर नीचे, दाएं-बाएँ, उभरे हुए देखकर लक्ष्मणजी चिन्ता मग्न हो गए। रावण ने अपने असंख्य रूपों से लक्ष्मणजी के सामने लड़ना शुरू किया। 'मूल रावण कौन?' यह पहिचानना कठिन था। लक्ष्मणजी ने चारों ओर बाणों की वर्षा करके कई रूपों को नष्ट कर दिया।

लक्ष्मणजी ने आज अपना पौरुष दिखाना शुरू किया था। असंख्य रावणों के विरुद्ध अकेले लक्ष्मणजी जूझ रहे थे, और एक २ तीर से एक २ रावण को भूशरण करते थे।

रावण ने लक्ष्मणजी का ताण्डव नृत्य देखा और वह दिग्मूढ़ हो गया। लक्ष्मणजी के ऐसे पराक्रम की रावण ने कभी भी कल्पना न की थी। 'बहुरूपिनी विद्या' की शक्ति भी जब

लक्ष्मणजी का पराभव न कर सकी, तब रावण ने अंत में अंतिम शस्त्र याद किया। वह था चक्ररत्न।

तेजोमय चक्ररत्न !

शत्रु का अचूक वध करने वाला अपूर्व शस्त्र !

रावण ने आज तक कभी भी इस शस्त्र का उपयोग न किया था। इसका उपयोग करने का अवसर ही न आया था। आज लक्ष्मणजी को पराजय करने के प्रयत्न में जब इसके सभी अस्त्र-शस्त्र, विद्या-मंत्र, आदि सब निरर्थक सिद्ध हुए, तब चक्ररत्न को याद किया और याद करते ही ज्वाजल्यमान चक्र रावण के दाहिने हाथ में आ लगा। रावण ने चक्र को आकाश में खूब घुमाकर लक्ष्मणजी पर छोड़ा।

परन्तु, रावण की कल्पना धुल में मिल गई। चक्र ने लक्ष्मणजी के चारों ओर प्रदक्षिणा लगाई और लक्ष्मणजी के दाहिने हाथ में आकर स्थिर हो गया।

रावण के मुख पर विषाद छा गया।

वह सोचता है :—

'मुनि की भविष्यवाणी सत्य निकली। विभीषण आदि के वचन सत्य सिद्ध हुए ...... कैसी भवितव्यता !'

विषाद में डूबे हुए लंकापति को संबोधित कर विभीषण बोला :—

'हे भाई ! मैं पुनः कहता हूँ : अब भी यदि जीने की इच्छा हो तो वैदेही को सौंप दो। दुराग्रह का त्याग कर दो—अन्यथा विनाश.......'

विभीषण के वचनों ने रावण के क्रोध को और अधिक बढ़ा दिया।

'अरे दुष्टमति ! चक्र गया उससे क्या ? चक्र सहित शत्रु को मेरे एक ही मुष्टि प्रहार से मारूँगा।'

रावण आगे कुछ कहे इसके पूर्व ही लक्ष्मणजी ने चक्र घुमाकर लंकापति पर छोड़ा—चक्र ने राक्षसेश्वर की छाती चीर डाली और राक्षसेश्वर की देह भूमि पर गिर पड़ी।

वैशाख कृष्णा एकादशी का यह दिन था।

सूर्य अस्ताचल में पहुँच चुका था।

राक्षसेश्वर का वध हुआ। उसकी आत्मा चौथी नरक में चली गई।

देवों ने लक्ष्मणजी पर पुष्प वृष्टि की 'जयजय' की दिव्य ध्वनि हुई.......राम सैन्य ने हर्षोन्माद से तांडव नृत्य किया........ हर्ष की किलकारियों ने आकाश को गूँजारित कर दिया।

राक्षस सैन्य में हाहाकार मच गया। सुभट खड़े रह गए.......उनकी आँखें आँसुओं से भीग गईं।

इतने में सुवर्णमय उत्तंग रथ पर खड़े होकर विभीषण ने रावण सैन्य को संबोधित किया :—

'हे लंका के वीर सुभटों ! आप निःशंक होकर श्रीराम-लक्ष्मण की शरण स्वीकार करें। अब ये ही अपने शरण्य हैं। अतः अविलंब इनके कृपा पात्र बनो........'

लाखों सुभट श्रीराम-लक्ष्मण की ओर मुड़े.......मस्तक झुकाकर उनके चरणों में शस्त्र रख दिये.......

लक्ष्मणजी विभीषण के पास खड़े रहकर बोले :—

'मेरे प्रिय सुभटो ! आज युद्ध का अंत आया है। आप लोगों ने वफादारी पूर्वक युद्ध किया है, शूरवीरता से आप जूझे हैं.......आपकी मैं कुशलता चाहता हूँ।'

सुभटों ने श्रीराम-लक्ष्मण की जय बोली।

विभीषण राक्षसेश्वर की मृत देह की ओर देख रहा था। उसकी आँखें सजल हो गई थी। उसका हृदय भ्रातृ विरह से व्याकुल हो गया.......वह रथ पर से नीचे उतर पड़ा और जहाँ राक्षसेश्वर की देह पड़ी थी वहाँ दौड़कर गया। 'हे भ्राता—हे भ्राता.......' करता हुआ विभीषण रावण की देह के पास बैठ गया और करुण विलाप करने लगा।

लंकामें रावण वध के समाचार वायुवेग से फैल चुके थे। अंतःपुर में वह दुःखद समाचार पहुँचते ही करुण क्रन्दन शुरू हुआ। मंदोदरी आदि रानियाँ त्वरित गति से युद्ध के मैदान पर आईं। प्राणविहीन प्राणनाथ के रक्त से सने हुए देह को देखकर मंदोदरी 'हाय प्राणनाथ ! करती हुई ढल पड़ी.......अनेक रानियाँ और परिचारिकाएँ मूर्च्छित् हो गईं.......लंका के लाखों नर-नारी लंकापति का वध जानकर दुःख से गद्गद् हो गए और दौड़ते हुए अपने लोकप्रिय राजा के दर्शन करने के लिए मैदान में दौड़े आए।

युद्ध का कठोर मैंदान शोक-विलाप और आक्रन्द से करुण हो गया। श्रीराम-लक्ष्मण, सुग्रीव, भामंडल, हनुमान, नल-नील, अंगद आदि लाखों सुभट शोकमग्न होकर खड़े थे.......मौन रूप से वे विभीषण—मंदोदरी आदि के दुःख में सहानुभूति व्यक्त कर रहे थे।

विभीषण सिसकियाँ भर-भर कर रो रहा था—वह अपनी कमर से छुरी निकाल कर अपनी छाती चीरने के लिये तैयार हुआ। तुरन्त श्रीराम ने विभीषण का हाथ पकड़ा। छुरी छीन ली और उसके सिर पर स्नेह भरा हाथ रखकर आश्वासन दिया।

श्रीराम ने लंका के राजपरिवार को संबोधित कर कहा :—

'यह वह दशमुख राक्षसेश्वर है कि जिसके पराक्रम की देवलोक में प्रशंसा हुई है। इसने वीर गति प्राप्त की है अतः यह कीर्ति-पात्र बना है। इसका युद्ध कौशल. प्रजाप्रियता, आदि अनेक गुण वर्षों तक प्रजा के मुख से गाये जाते रहेंगे. अतः इसके पीछे शोक न करें, कल्पान्त न करें, इसका उत्तर कार्य करके निवृत्त हो।'

सुग्रीव की ओर देखकर श्रीराम ने आज्ञा दी :—

'वानरेश्वर ! जाओ कुम्भकर्ण, इन्द्रजित्, मेघवाहन आदि युद्ध बन्दिओं को सम्मानपूर्वक मुक्त करो और यहाँ ले आओ।'

'जैसी आज्ञा।' सुग्रीव ने प्रणाम किया और कारावास की ओर आगे बढ़ा।

लंका के मंत्रीवर्ग ने रावण के अग्नि दाह हेतु तैयारियाँ की। गोशीर्षचन्दन की चिता बनाई, कर्पूर, अगरु आदि सुगन्धित द्रव्य एकत्रित किए।

इतने में सुग्रीव कुम्भकर्ण आदि को मुक्त कर आ पहुँचा। कुम्भकर्ण रावण की मृत देह को देखकर फूट पड़ा। इन्द्रजित् और मेघवाहन रावण के मृत देह से चिपक पड़े और करुण क्रन्दन करने लगे। श्रीराम ने कुम्भकर्ण के कंधों पर हाथ रखकर कहा :—

'हे वीर पुरुष ! एक पराक्रमी को शोभा दे ऐसी वीर मृत्यु पाने वाले राक्षसेश्वर के पीछे शोक न करो, उत्तरकार्य की तैयारी करो।'

इन्द्रजीत्-मेघवाहन को श्रीराम ने खड़े किये और अपने बाहुपाश में लेकर-वात्सल्य से भिगो दिये—उन्हें कहा :—

'हे वत्सों ! शोक न करो, आक्रन्द न करो। राक्षसेश्वर रावण ने पराक्रम से स्वर्ग को पृथ्वी पर उतार दिया है। इस स्वर्ग को छोड़कर वे चले गए हैं……यह स्वर्ग तुम्हारा है……पिता के पराक्रम को तुम वर चुके हो……तुम्हारे जीवन में सुख शांति और समृद्धि तुम प्राप्त करोगे।'

श्रीराम ने अपने उत्तरीय वस्त्र से इन्द्रजित्-मेघवाहन के आँसू पोंछे। चिता तैयार हो चुकी थी। रावण की देह को सुगंधित जल से स्नान करवाकर, श्रेष्ठ वस्त्र पहिना कर…… चिता पर लिटाया गया। पुरोहित ने पवित्र श्लोकों का उच्चारण करना शुरू किया। इन्द्रजीत् ने चिता में अग्नि सुलगाई।

मंदोदरी ने करुण चीख छोड़ी; वह पृथ्वी पर गिर पड़ी। चारों ओर रुदन की हृदय को कंपित करने वाली ध्वनि उठी। लाखों सुभटों, लाखों प्रजाजनों, हजारों स्नेहीजनों और अंतःपुर की हजारों रानियों—सबकी आँखों से अश्रु धारा-सब के मुख पर दुःख, आक्रन्द और ग्लानि……

अग्नि की ज्वालाएँ ऊँची उठने लगी। त्रिभुवन को आक्रान्त करने वाले, बाहुबल, मंत्रबल-विद्याबल से विश्व पर आधिपत्य स्थापित करने वाले, राक्षसवंश की संस्कृति को लंका से लगाकर तीनों खंडों में विस्तृत करने वाले उस ऐतिहासिक युग पुरुष की देह आज ज्वालाओं में भस्म हो गई।

श्रीराम परिवार सहित पद्मसरोवर में स्नान करने चले—स्नान कर पद्मसरोवर के जल में अश्रुजल का संमिश्रण कर रावण को जलांजलि दी। कुम्भकर्ण, विभीषण, इन्द्रजीत, मेघवाहन, मंदोदरी आदि ने भी पद्मसरोवर में स्नान किया और श्रीराम के पास सब एकत्रित हुए।

श्रीराम ने लंका के राजपरिवार को सौम्यदृष्टि से और सुधारसमयी वाणी से उद्बोधित किया :—

'हे वीर पुरुषों! आप पूर्ववत् अपना राज्य सम्हालें प्रजा का कल्याण करें। हमें आपकी संपत्ति से कोई प्रयोजन नहीं""मैं आपकी कुशलता चाहता हूँ।'

श्रीराम के सहानुभूति भरे वचन सुनकर कुम्भकर्णादि की आँखों में आँसू उभर आए। लंका के राज्य-परिवार और मंत्रियों ने श्रीराम के उद्बोधन से आश्चर्य का अनुभव किया। सभी गद्गद हो गए। इन्द्रजीत बोला :—

'हे पराक्रमी पवित्र पुरुष! अब हमें विशाल राज्य से क्या प्रयोजन है? अब राज्य, सत्ता वैभव और इन्द्रियों के सुख से हो चुका—कुछ भी प्रयोजन नहीं, इन सबसे-पिताजी का वध और लंका का पतन इन्होंने हमें सम्यग् दृष्टि प्रदान की है""""अब तक जो विनाशी था उसे अविनाशी माना था—जो क्षणिक था उसे शाश्वत् माना था, जो विश्वासघातक था उसे विश्वास पात्र माना था, परन्तु अब ये मान्यताएं असत्य सिद्ध हो गई हैं—शेषजीवन अब इन विनाशशील- क्षणिक और अविश्वसनीय सांसारिक सुखों के उपभोग में व्यतीत नहीं करना है, मोक्षमार्ग की आराधना में व्यतीत करूंगा""""

कार कर आत्मनिष्ठ बनकर, कर्मों का क्षय करने में पुरुषार्थ करूँगा।'

श्रीराम और लक्ष्मण इन्द्रजीत् के विवेकपूर्ण वचन सुनकर आश्चर्य चकित हो गए। उनके हृदय में इन्द्रजीत् के प्रति अपूर्व वात्सल्यभाव प्रकट हुआ।

'इन्द्रजीत्, तू क्या कहता है? संसार त्याग करेगा तू? क्यों? लंका का राज्य हमें नहीं चाहिये। तुम सब राज्य करो और प्रसन्न रहो।' श्रीराम ने गद्‌गद् स्वर से कहा:—

'हे पूज्य! आप लंका के राज्य पर से अपना अधिकार उठा रहे हैं यह आपकी उत्तमता है—परन्तु जिस लंका के साम्राज्य ने पिता के वध का पारितोपिक दिया, वह साम्राज्य अब निष्कलंक नहीं रहा। अब तो जो निष्कलंक है, शाश्वत् है, उस मोक्ष साम्राज्य को ही प्राप्त करने का प्रयत्न करना उचित लगता है।'

'परन्तु क्या उससे तुम्हारा अपयश नहीं होगा? लोग कहेंगे कि 'युद्ध में पराजित हुए अतः साधु बन गए!' यदि तुम्हें चारित्र्य ही अंगीकार करना हो तो जीवन की उत्तरावस्था में करना, परन्तु इस समय तो.......'

हे महावीर! अब हम अपयश से क्यों डरें? परस्त्री के अपहरण से हमारा अपयश नहीं हुआ क्या? साधु बनने से उसकी अपेक्षा अधिक अपयश होगा क्या? मै तो ऐसा समझता हूँ कि पिताजी ने परस्त्री के अपहरण का जो पाप किया है उसका प्रायश्चित् करने के लिये हमें चारित्र्य अंगीकार करना ही चाहिये।'

श्रीराम मौन रहे। इन्द्रजीत् के कथन पर वे गहन विचार में डूब गए।

दूसरी ओर कुम्भकर्ण, इन्द्रजीत्, मेघवाहन और मंदोदरी आदि परस्पर विचार-विमर्श में लीन हुए—जबकि लंका की प्रजा राक्षसेश्वर के वध से व्याकुल हो गई थी।

१२

सीता–मिलन

लंका के रणक्षेत्र में अभी तक लंकापति रावण की देह की राख ठंडी भी न हुई थी, मंदोदरी आदि के आँसू अभी सूखे भी न थे, नगरजनों का करुण-क्रन्दन अभी शांत भी न हुआ था कि लंका के कुसुमायुध उद्यान में देव लोक के हजारों देव उतर आए थे और महोत्सव के नगाड़े बजा रहे थे……!

महामुनि अप्रमेयबल को केवल ज्ञान प्राप्त हुआ था; उसका महोत्सव मनाने के लिये देवता आये थे। लंका की गलियों में उस ज्ञानोत्सव की ध्वनि सुनाई दी थी। प्रातः श्रीराम को ये समाचार मिले। राम-लक्ष्मण कुंभकर्णादि राक्षसपरिवार के साथ कुसुमायुध उद्यान की ओर चले। सब के हृदय उद्विग्न थे, संतप्त थे। जब वे पहुँचे तब महामुनि स्वर्णकमल पर आरुढ होकर धर्मोपदेश दे रहे थे। वंदन कर श्रीराम आदि बैठ गए। केवलज्ञानी के प्रशमरस प्रवाहित करते धर्मोपदेश ने देवों के हृदय प्रफुल्लित कर दिये। मानवों के मन प्रसन्न कर दिये।

धर्मोपदेश पूर्ण हुआ। इन्द्रजीत् और मेघवाहन खड़े हुए। महामुनि को वंदन कर उन्होंने कहा :—

'हे विभो! हम इस संसारवास से विरक्त हुए हैं। परन्तु हमारे पूर्व भव जानने की हमें जिज्ञासा है। आप त्रिकालज्ञ हैं। सर्वजीवों के सर्वभाव आपको प्रत्यक्ष हैं। आप कृपाकर हमारे पूर्वभवों का वर्णन करेंगे तो हमारे वैराग्य में वृद्धि होगी।'

सभा में शांति छा गई। देव भी लंकापति के प्राणप्रिय पुत्रों के प्रश्नों का प्रत्युत्तर सुनने के लिये आतुर बने। महामुनि ने कहा :—

'कौशाम्बी नगरी थी। उसमें दो भाई रहते थे। दरिद्रता ने उन्हें दबोच रक्खा था। एक का नाम था प्रथम और दूसरे का नाम था पश्चिम। एक दिन कौशाम्बी में भवदत्त महामुनि पधारे। सभी नगरजन धर्मोपदेश सुनने के लिये गए। धर्मोपदेश सुनने से उन्हें धनकी दरिद्रता का भान हो गया। विषयों की तृष्णा शांत हो गई। उन्होंने महामुनि के चरणों में संसार का त्याग किया और वे साधु बन गए।'

'साधु बनकर दोनों भाई पृथ्वीतल पर विहार करने लगे। तप, त्याग और ज्ञान-ध्यान से आत्मा को उज्ज्वल बनाने लगे। एक दिन वे कौशाम्बी में पधारे। कौशाम्बी उस समय वसंत-महोत्सव के आनंद में मग्न थी। रंग-राग और विलास में प्रजा डूब गई थी। बंधु मुनि उद्यान की कुटिर में विराजमान थे।'

'राजा नंदिघोष महारानी इन्दुमुखी के साथ उसी उद्यान में आया। राजा-रानी भी वसंतोत्सव के आनंद में मग्न बने थे। उनकी क्रीडा मुनि पश्चिम के दृष्टिपथ में आई। पश्चिम मुनि के मन को इस क्रीडा ने आकर्षित किया। 'ऐसी क्रीडा करने का सौभाग्य मुझे भी मिले तो?' मुनि का मन उथल पुथल मचाने लगा।

पश्चिम मुनि ने सोचा : मुनिजीवन में तो ऐसा सुख भोग नहीं सकता। मुनि जीवन का त्याग कर गृहस्थ बन जाऊं तो भी मुझे ऐसा राज वैभव कहां से मिले ? ऐसी रानी कहां से मिले ? हां, शास्त्रों में मुझे जानने को मिला है कि तपश्चर्या के

बल से दूसरे भव में ऐसा सुख मिलता है ! परन्तु उसके लिये संकल्प करना पड़ता है। तपश्चर्या का सौदा करना पड़ता है। कोई बात नहीं। मैं अपनी सारी तपस्या के फलस्वरूप ऐसा करता हूँ कि मर कर इसी राजा-रानी का पुत्र बनूँ ! बस, फिर भोग-विलास और आनंद-प्रमोद की कोई सीमा ही न रहेगी।'

पश्चिम मुनि को यह विचार जँच गया। एक दिन उसने अपने भाई मुनि प्रथम के समक्ष अपनी इच्छा व्यक्त कर दी। तीव्र इच्छा प्रकट हुए बिना रहती नहीं। प्रथम मुनि ने पश्चिम मुनि से कहा :—

'हे मुनिवर ! यह तुम क्या बात करते हो ? संसार के इस भोग विलास हेतु तुम साधु जीवन की महान् साधना को बाजी पर लगाना चाहते हो ? कर्मक्षय करने की साधना को तुम भोग विलास प्राप्त करने का साधन बनाते हो ? भाई······ भाई······यह तुम्हें कहाँ से सूझा ? ज्ञानी भगवंत ने जिस भोग-विलास को भवभ्रमण का कारण बताया है, उसकी स्पृहा तुम में कैसे पैदा हुई ?'

पश्चिम मुनि की दृष्टि जमीन पर स्थिर थी। उनके मुख पर उनके संकल्प की दृढ़ता थी। प्रथम मुनि ने भी बड़े ही वात्सल्यपूर्ण शब्दों में कहा '—

'तुम यदि भोगविलास की ओर आकर्षित हुए हो, तो उस भोगविलास का सुख तुम्हें तुम्हारी तपस्या के फलस्वरूप प्राप्त भी हो जाएगा, परन्तु वह तुम्हारे पास कितने समय तक टिकेगा ? क्या वह सुख सदैव तुम्हारे पास रहेगा ? नहीं, संसार

के तमाम सुख क्षणिक हैं, अनित्य हैं, क्लेशयुक्त हैं। इन सुखों के भोग का परिणाम दुर्गति है—तुम क्यों जान बूझकर धधकती भोग की आग में कूदने के लिए तैयार हुए हो ? मेरी बात सुनो, तुम मेरे बंधु हो। महान् पवित्र साधु जीवन जी रहे हो, यह तुम्हारा त्याग, तुम्हारी तपश्चर्या, इस पर पानी न फेरो।'

पश्चिम मुनि ने कहा : 'आप कहते हैं जो सत्य है, परन्तु मेरी समझ में नहीं आता कि मैं इन सुखों की ओर क्यों आकर्पित हो रहा हूँ ? जब से मैंने राजा-रानी की क्रीडा देखी है, तब से इसका आकर्पण जगा है।'

'प्रथम मुनि ने कहा : भले ही इस निमित्त ने तुम्हारे मन में विक्षोभ पैदा कर दिया। परन्तु हम ज्ञान बल से इस विक्षोभ को दूर कर सकते हैं। विपय-कपाय का तो अपना जीवन है। चंचलचित्त-वृत्तिओं का दमन करने पर ही छुटकारा है, अनादि कालीन विपय-कपाय की वृत्तिओं पर हमें विजय प्राप्त करनी है। उसी के लिये हम साधु बने हैं। साधु जीवन -अर्थात् दुष्ट वृत्तिओं के विरुद्ध लड़ने का जीवन। हाँ, कभी दुष्टवृत्तियाँ हम पर प्रहार कर जाएँ, परन्तु उतने मात्र से हमें उनकी शरणागति स्वीकार न कर लेनी चाहिये। पुनः २ इन वृत्तियों पर आक्रमण कर उन्हें जर्जरित कर डालनी चाहियें। भाई ! तुम डरो नहीं, मैं तुम्हारे साथ हूँ।'

पश्चिम मुनि के मुख पर कुछ लज्जा, विक्षोभ और उद्वेग की रेखाएँ खिच गई। उनकी दृष्टि में चंचलता थी। मोक्षसुख और भोग सुख के बीच उनका मन डगमगा रहा था। प्रथम मुनि के वचन उनके अन्तःकरण तक पहुँच न सकते थे। मोक्ष-

सुख की कल्पना लुप्त हो गई थी। संसार के सुखों ने उन्हें जकड़ लिया था।

प्रथम मुनि ने अन्य मुनिओं को पश्चिम मुनि के संकल्प की जानकारी दी। मुनि समुदाय में खलबली मच गई। पश्चिम मुनि के चारों ओर मुनि आकर बैठ गए। पश्चिम मुनि के संकल्प को दूर करने के लिये वे उन्हें समझाने लगे। पश्चिममुनि मौन रूप से सबकी बातें सुनते रहे। जब सब समझाकर मौन रहे तब पश्चिम मुनि ने कहा :—

हे मुनिवरो ! आप मुझे संसार सुख का संकल्प करने से इन्कार करते हैं। आपकी बात मैं समझ सकता हूँ। संसार को असार समझकर मैं साधु बना हूँ, परन्तु जीव के अध्यवसाय परिवर्तनशील हैं। मेरे मन में जो संसार सुख की आकांक्षा जाग्रत हुई है, उसका शमन करने में मैं असमर्थ हूँ। मेरा संकल्प अविचल है। आप मुझे क्षमा करें।'

पश्चिम मुनि वहाँ से चले गए।

आयुष्य पूर्ण हुआ। मर कर उसी राजा-रानी के घर पुत्र के रूप में उत्पन्न हुए। नाम रतिवर्धन रक्खा गया।

रतिवर्धन यौवनवय में जब आया तब माता-पिता ने उसकी शादी की। अनेक रूपरमणियों के साथ भोगसुख का आनन्द लेता वह जीवन व्यतीत करने लगा।

प्रथम मुनि काल धर्म प्राप्त कर पाँचवे देवलोक में देव बने। देवताओं को जन्म से ही अवधिज्ञान होता है। प्रथम मुनि के जीव ने अवधिज्ञान में अपने पूर्व जन्म के भाई पश्चिम मुनि को रतिवर्धन राजा के रूप में देखा।

प्रथम मुनि के हृदय में पश्चिम मुनि के प्रति भ्रातृस्नेह अखंड था। यद्यपि पश्चिम मुनि ने प्रथम मुनि की सलाह की उपेक्षा कर संकल्प किया था, फिर भी प्रथम मुनि का स्नेह भग्न न हुआ था। उस स्नेह ने देव भव में तुरन्त पता लगवाया कि 'भाई पश्चिम मुनि कहाँ है ?'

जब रतिवर्धन को संसार सुख में डूबा हुआ देखा तब देव ने सोचा : 'यदि इसी प्रकार भोग सुख में रत रहता हुआ मरेगा तो अवश्य दुर्गति में जाएगा। इसे आत्म ज्ञान करवाऊं।'

यद्यपि देव भी भोग सुख में लीन होते हैं, परन्तु जो मनुष्य जीवन में संयम-जीवन जी कर देव बनता है, उसकी आत्मा देवलोक के दिव्य सुखों के बीच भी जाग्रत रहती है और दिव्य सुखों के उपभोग में वह अपने आप को खो नहीं बैठता।

देव ने मुनि का रूप बनाया। आए रतिवर्धन राजा की सभा में। राजा ने खड़े होकर मुनि का सत्कार किया और उचित आसन पर विराजमान कर स्वयं मुनि के चरणों में बैठ गया।

मुनिरूप धारी देव ने रतिवर्धन को धर्मोपदेश दिया। साथ ही उसका पश्चिम मुनि का पूर्व भव भी बताया। प्रथम मुनि के रूप में अपना परिचय दिया। यह सब सुनते-सुनते रतिवर्धन को अपने पूर्वभव का स्मरण हो गया। देव के आनन्द की सीमा न रही। उसने कहा :

'हे बंधु ! अब भी कुछ नहीं बिगड़ा। जागें तभी से प्रभात ! इस मनुष्य लोक के गंदे, विभत्स और क्षणिक सुखों से बहुत हो चुका—अब इन सुखों का त्याग कर संयम स्वीकार करो और अपने भवों की परम्परा सुधारो।'

रतिवर्धन का मन भोग सुखों से निवृत्त हुआ। उसने अपनी माता इन्दुमति से बात की। इन्दुमति पुत्र की बात सुनकर आश्चर्य चकित हुई। रतिवर्धन ने जब चारित्र्य ग्रहण करने की बात कही, तब इन्दुमति उद्विग्न हो गई, परन्तु रतिवर्धन ने जब अपने पूर्वभव की बात कही तब इन्दुमति ने प्रसन्नता से अनुमति दी।

रतिवर्धन ने चारित्र्य ग्रहण किया।

कालधर्म प्राप्त कर पाँचवे देवलोक में गया।

दोनों भाई पाँचवें देवलोक का आयुष्य पूर्ण कर महाविदेह क्षेत्र में विबुद्ध नगर में अवतरित हुए। दोनों राजकुमार युवान बने। युवावस्था में चारित्र्य स्वीकार कर, काल धर्म प्राप्त कर बारहवें देवलोक में गए।

बारहवें देवलोक का आयुष्य पूर्ण कर वे दोनों भाई लंका में प्रतिवासुदेव रावण के महल में पुत्र के रूप में अवतरित हुए, उनमें एक का नाम इन्द्रजी-तू और दूसरे का नाम मेघवाहन।'

इन्द्रजीत् और मेघवाहन अपने पूर्वभवों का वृतान्त सुनकर विरक्त हो गए। साथ ही यह भी मालूम हुआ कि रतिवर्धन के भव में जो माता इन्दुमति थी, वही मंदोदरी थी, तब तो राक्षस परिवार में और भी आश्चर्य हुआ।

इन्द्रजीत् और मेघवाहन ने चारित्र्य ग्रहण करने का अपना संकल्प घोषित किया। कुम्भकर्ण ने भी चारित्र्य लेने की घोषणा की। मंदोदरी आदि लंका की रानियों ने भी चारित्र्य ग्रहण करने का संकल्प व्यक्त किया। राक्षस परिवार की इस घोषणा ने लंका में आनन्द और शोक के मिश्रित भाव फैलाए।

लोकप्रिय लंकापति रावण के अवसान से लंका की प्रजा व्यथित थी, तब कुम्भकर्ण और इन्द्रजीत् मेघवाहन उस प्रजा के लिये एक महान् आश्वासन थे।

अप्रमेय बल-महामुनि की पर्षद में उपस्थित हजारों स्त्री पुरुषों ने कुम्भकर्ण आदि को आंसू भरी आंखों से प्रार्थना की और उन्हें चारित्र्य न लेने के लिये समझाया; परन्तु वे दृढ़ संकल्प करने वाले थे। उनका हृदय अब ससार के किसी भी सुख के लिये तड़फता न था। संसार के किसी भी सुख के लिये कामना न थी, फिर वे क्यों संसार में रहें?

कुछ ही समय पूर्व बाह्य शत्रुओं के विरुद्ध जूझते हुए राक्षस वंश के पराक्रमी राजकुमार थोड़े समय के पश्चात् आंतरिक शत्रुओं के सामने जूझने वाले मुनिवर वन गए। कल तक लंका के अप्रतिम राजमहालयों के अन्तःपुर में रंग-राग में लीन वनकर रावण को रिझाने वाली सन्नारियां आज त्याग-विराग में लीन वनकर परमात्मा को रिझाने वाली आर्याएँ वन गईं।

हृदय का परिवर्तन किन प्रसंगों और कैसी परिस्थितियों में हो जाता है यह छद्मस्थ ही समझ सकते हैं। कल का पापी आज धर्मात्मा वन सकता है-आज का धर्मात्मा कल का पापी वन सकता है।

श्री राम ने नूतन मुनिवरों के चरणों में वंदना की। श्री लक्ष्मण, सुग्रीव, विभीषण इत्यादि ने भी वंदना की। विभीषण ने श्री राम से प्रणाम कर कहा:

'हे पुरुष श्रेष्ठ! अब आप लंका में प्रवेश कर देवी सीता के मन को प्रसन्न करें।'

विभीषण ने लंका के राजमार्गों को सजवाया। लंका की प्रजा श्री राम-लक्ष्मण के दर्शनार्थ राजमार्गों पर एकत्रित होगई। 'भुवनालंकार' हाथी पर श्री राम-लक्ष्मण आरूढ़ हुए। उनके पीछे विभीषण और सुग्रीव के दो हाथी व्यवस्थित हुए। तत्पश्चात् हनुमान, प्रसन्नकीर्ति, नल और नील के चार रथों की पंक्ति व्यवस्थित हुई। उनके पीछे अन्य अनेक वानर वीर रथारूढ़ होकर व्यवस्थित हो गए।

लंका की प्रजा के नैत्र राम-लक्ष्मण और लाखों वानर वीरों को देखने के लिये उत्सुक थे, परन्तु उस प्रजा के हृदय संतप्त थे। आज उनका प्रिय राजा दशानन या पटरानी मंदोदरी.... युवराज इन्द्रजीत् और पराक्रमी मेघवाहन कोई न था। राज महालय सुनसान था। हर्ष-शोक के मिश्रित मनोभाव लिये लंका की जनता राजमार्गों पर उभर आई थी।

विद्याधरों ने दिव्य वाद्य-यंत्रों के नाद से लंका के शोकाकुल वातावरण को बदलना शुरू किया। किन्नारियों के समूह-नृत्य होने लगे और श्री राम का लंका-प्रवेश प्रारम्भ हुआ।

श्री राम को लंका के राजमहालय में न जाना था, उन्हें जाना था महासती सीता के पास। जो रात-दिन 'राम-राम' का जाप जपती रही थी। जिसने मन में भी श्री राम के सिवाय किसी अन्य पुरुष की अभिलाषा न की थी और जिस महासती के सतीत्व की रक्षा हेतु श्री राम ने भीषण संग्राम भी लड़ा था।

सीताजी 'पुष्पगिरि' के शिखर पर एक रमणीय उद्यान में रही हुई श्री राम की प्रतीक्षा कर रही थीं। श्री राम हनुमान द्वारा वर्णित सीता को देखने के लिये उत्सुक थे।

जब श्री राम पुष्पगिरि के पास आए, वे हाथी पर से नीचे उतर गए। लक्ष्मणादि सभी ने श्री राम का अनुसरण किया। सभी पुष्पगिरि पर चढ़ने लगे। पुष्पगिरि के शिखर पर उद्यान के द्वार पर सीताजी आकर खड़ी थीं। श्री राम ने सीताजी को दूर से देखा। एक क्षण रुक गए। 'जैसा वर्णन हनुमान ने किया था वैसी ही सीता दृष्टिपथ में आ रही हैं—और श्री राम वेग पूर्वक सीताजी की ओर दौड़े।

इस दम्पति के मिलन का वर्णन किसी महाकवि ने किया होता तो? श्री हेमचन्द्र सूरीश्वर जी महाराजा ने इस प्रसग का मात्र एक ही श्लोक में वर्णन किया है—

तामुत्क्षिप्य निजोत्संगे, द्वितीयमिव जीवितम्।
तदैव जीवितम्मन्यो, धारयामास राघवः॥

'सीता को उठाकर श्री राम ने अपनी उत्संग में धारण की, मानों अपना दूसरा जीवन ही हो ऐसा मानकर'।

चिरकालीन वियोग के पश्चात् हो तो संयोग का संवेदन यद्यपि अवर्णनीय होता है फिर भी उस संवेदन को वचनों का विषय बनाने में कवियों ने कहाँ प्रयत्न नहीं किया? उस समय महासती सीता के मनोभाव कैसे होंगे। श्री राम के मन की कैसी स्थिति होगी। वहां उपस्थित दर्शकों के मन के भाव कैसे होंगे।

सिद्ध गंधर्वादि ने आकाशवाणी की:
'इयं महासती सीता जयतु'
'यह महासती सीता विजय प्राप्त करो।'

लक्ष्मणजी की आँखों से अश्रुधारा वह रही थी। सीताजी के चरणों में लक्ष्मण जी ने अपना मस्तक रखकर आँसुओं से सीताजी के चरणों का प्रक्षालन करना शुरू किया।

'हे तात, चिरंजीव, चिरनन्द मेरी तुझे सदैव आशीष है।' ऐसा कहते हुए सीताजी ने लक्ष्मण जी के सिर पर स्नेह वृष्टि की।

भामंडल ने सीताजी को नमस्कार किया। सीताजी ने प्रसन्नतापूर्वक भामंडल को आशीर्वाद दिया—मानो मुनिवचन।

तत्पश्चात् कपिराज सुग्रीव ने मस्तक झुका कर कहा :

'मैं सुग्रीव महासती को प्रणाम करता हूँ।'

विभीषण ने नतमस्तक होकर कहा : 'मैं रावण अनुज विभीषण देवी सीता को वंदन करता हूं।'

सीताजी मधुर ध्वनि से प्रत्येक को आशीर्वाद देती जाती हैं। हनुमान, अंगद, नल-नील, प्रसन्नकीर्ति आदि आते गए और अपना नाम बताते हुए वंदन करते गए।

पूर्णिमा के शशांक के साथ जैसे कुमुदिनी शोभित होती है वैसे श्री राम के साथ सीता शोभायमान होने लगी।

विभीषण ने श्री राम को प्रणाम कर कहा :

'कृपानाथ ! लंका के राजमहालय को देवी सीता के साथ पावन करें।'

श्री राम सीता के साथ भुवनालंकार हाथी पर आरूढ हुए। विद्याधरों ने श्री राम का जयनाद किया। हर्षनादों से लंका गूंज उठी। भुवनालंकार हाथी के आगे रथारूढ़ होकर विभीषण प्रथम दर्शन कर रहे थे जबकि सुग्रीवादि वानर वीर श्री राम के पीछे आ रहे थे। ★

१३

लंका में छः वर्ष

सीताजी के साथ श्री राम ने लंकापति के दिव्य आवास में प्रवेश किया।

सीधे ही वे आवास के अन्तर्गत श्री शांतिनाथ भगवान् के चैत्य में गए।

शांति चैत्य विशाल था। एक हजार मणि मंडित स्तंभों पर चैत्य खड़ा था। शिल्पकला का यह अद्भुत नमूना था। श्रीराम लक्ष्मण जी और सीताजी प्रसन्न हो गए।

सीताजी ने प्रभुपूजन की भावना व्यक्त की।

विभीषण ने तुरन्त पूजन सामग्री मंगवा ली।

दूसरी ओर श्री राम आदि स्नानादि से निवृत्त होकर, विशुद्ध कीमती वस्त्रों से सज्ज होकर आ गए।

अत्यन्त भक्ति पूर्वक हृदय से तीनों ने पूजा की।

विभीषण ने कहा :

कृपानाथ ! सेवक के आवास में भी जिन चैत्य है। वहां भी जिन पूजन करने से आपका मन आह्लादित होगा।'

सुग्रीव आदि राजाओं, सेनापतिओं, राजकुमारों आदि सहित श्री राम विभीषण के महल में पधारें।

विभीषण का महल भी रावण के महल की स्पर्धा करे ऐसा सुशोभित और विशाल था। श्री राम ने सपरिवार जिन

चैत्य में पूजन किया और तत्पश्चात् भोजनादि से निवृत्त हुए। श्री राम सैन्य के प्रत्येक राजा, राजकुमार और सेनापति आज विभीषण के अतिथि थे।

सभी भोजनादि से निवृत्त हुए, शरीर की थकान दूर हुई, तब विभीषण ने अपने विशाल सभा भवन में सब को एकत्रित किया।

रत्नसिंहासन पर श्रीराम को आसीन कर विभीषण श्रीराम के चरणों के पास एक आसन पर बैठे। सबके आ जाने के पश्चात् विभीषण ने श्रीराम से करबद्ध प्रार्थना की।

'हे उत्तम पुरुष ! यह अर्ध-भारत का वैभव रत्नों के ढेर, सोने का विशाल भंडार, लाखों हाथी और घोड़े और यह संपूर्ण राक्षस द्वीप आप स्वीकार करें। सर्वस्व के स्वामी आप हैं, मैं तो आपका एक सेवक हूँ। आप आज्ञा प्रदान करें। इसी समय आपका लंका के सिंहासन पर राज्याभिषेक करें। आप लंका को पावन कर, मुझ पर कृपा करें, और मेरी इच्छा पूर्ण कर मुझे कृतार्थ करें।'

श्रीराम बोले :

'हे महात्मन् ! क्या आप भूल गए हैं कि मैंने आपको लंका का राज्य पहिले ही दे दिया है। आपकी मेरे प्रति अपार भक्ति और आपका अविहड़ स्नेह आपको यह भुला दे, परन्तु मैं दिया हुआ वचन कैसे भूल सकता हूँ ?'

श्रीराम ने सुग्रीव को संकेत किया। राज्याभिषेक की सामग्री तत्काल सुग्रीव ने उपस्थित की और तत्काल लंका के राज्य पर श्रीराम ने विभीषण का अभिषेक किया। सभा ने लंकापति विभीषण की जय ध्वनि की।

लंका की प्रजा को तब विश्वास हुआ कि श्रीराम लक्ष्मण राज्य के लोभ से नहीं लड़े, परन्तु सीता के खातिर लड़े हैं। श्रीराम-लक्ष्मण की राज्य के प्रति निःस्पृहता ने लंका की प्रजा को मोहित कर डाला।

श्रीराम ने परिवार सहित रावण के आवास में निवास किया।

विभीषण ने राज्य की धुरा धारण कर शासन व्यवस्था सम्हाल ली।

श्रीराम ने सुग्रीव से कहा :

हम अयोध्या से वनवास में रवाना होने के पश्चात् अनेक स्थानों पर अनेक राजकुमारियों के साथ पाणिग्रहण करने का वचन देते आए हैं। मैं चाहता हूँ कि उन विद्याधरों को दूत द्वारा ज्ञापन कर राजकुमारियों को यहाँ बुलवा कर उनके साथ पाणिग्रहण कर वचन का पालन करना चाहिये।

श्रीराम की आज्ञा से सुग्रीव ने विद्याधर दूतों को श्रीराम का संदेश देकर आकाश-यान में रवाना किये। सिंहोदर आदि राजाओं के नाम उन्होंने सूचित किये थे। विद्याधर दूत तदनुसार राजाओं और राजकन्याओं को लेकर लंका आ गए। श्रीराम लक्ष्मण ने विधिपूर्वक उन राज कन्याओं के साथ पाणिग्रहण किया। लंका के नरनारियों ने महोत्सव मनाया।

यथेच्छ भोग सुख का आनन्द लेते-लेते श्रीराम लक्ष्मण ने लंका में छः वर्ष विताए। सुख के दिन बीतते देर नहीं लगती। लंका श्रीराम के लिये अयोध्या बन चुकी थी। उन्हें अयोध्या की याद भी न आती थी। परन्तु अयोध्या को श्रीराम-लक्ष्मण और सीता की याद क्षण-क्षण में आती थी।

विभीषण, सुग्रीव आदि श्रीराम की सेवा में तत्पर थे।

इन्द्रजीत् और मेघवाहन चारित्र्य लेकर कर्मों के साथ युद्ध लड़ रहे थे। भले ही वे श्रीराम-लक्ष्मण के हाथों पराजित हुए थे, परन्तु कर्मों के सामने वे पराजित न हुए थे। अनंत २ कर्मों का क्षय करके वे वीतराग सर्वज्ञ बने। विन्ध्य प्रदेश में उन्होंने निर्वाण प्राप्त किया, तब से वह प्रदेश 'मेघरथ' तीर्थ के रूप में प्रसिद्ध हुआ। इस तपोभूमि के स्पर्श से अनेक पतितों का उद्धार हुआ।

नारद जी !

पृथ्वी पर निरन्तर परिभ्रमण करने वाले आजन्म ब्रह्मचारी देवर्षि एक दिन अयोध्या पधारे।

वे सीधे ही राजमहल में पहुँचे। उन्हें अयोध्या और अयोध्यावासी प्रफुल्लित न लगे। राजमहल गमगीन लगा। जब वे कौशल्या और सुमित्रा के पास पहुँचे तब नारदजी का मन दुःखी हो गया, क्योंकि कौशल्या और सुमित्रा शोकाकुल थी। उनकी आँखें अश्रुभीगी थीं और उनके शरीर सूखे हुए थे।

नारदजी का उचित सत्कार कर उन्हें बैठने के लिये आसन दिया।

नारदजी ने प्रश्न किया ;

'हे भक्तिशालिनी ! आप विमनस्क क्यों हैं ?

कौशल्या ने कहा :

हे देवर्षि ! मेरे पुत्र राम-लक्ष्मण पुत्र वधु सीता के साथ वन में गए थे। वहाँ सीता का अपहरण हुआ। रावण सीता को लंका ले गया। राम-लक्ष्मण लंका गए। रावण के साथ

युद्ध हुग्रा। रावरण ने लक्ष्मरण पर शक्ति प्रहार किया। उसका निवारण करने के लिये 'विशल्या' वहां ले जाई गई—बस, यहां तक पता चला है—मेरा पुत्र लक्ष्मरण जीवित है या नहीं? सीता का क्या हुग्रा?' कहती-कहती 'हे वत्स लक्ष्मरण'-करती हुई कौशल्या फूट-फूट कर रोने लगी। सुमित्रा भी सिसकियां भरने लगी। नारदजी की ग्रांखें भी भीग गईं। राजमाताग्रों का दुःख उनसे देखा न गया। उन्होंने कहा, 'हे सुशीले! ग्राप धैर्य धारण करें, शांति से यहां रहें। मैं जाकर ग्रापके पुत्रों को यहां ले ग्राता हूँ।'

नारदजी ने ग्रविलंब ग्राकाश मार्ग से प्रयारण किया। लोगों से मालूम कर लिया कि राम-लक्ष्मरण लंका में बसते हैं, वे ग्रल्प समय में लंका द्वार पर ग्रा पहुंचे।

श्रीराम नारदजी को देखते ही खड़े हो गए ग्रौर ग्रागे बढ़कर उचित सत्कार कर पूछा, 'देवर्षि! यहां कैसे ग्रागमन हुग्रा?'

नारदजी कुछ भी न बोले। वे श्रीराम-लक्ष्मरण ग्रौर सीता की ग्रोर देखते रहे। उनके मन में क्रोध उभर ग्राया, फिर वे क्रोध को मुँह पर ग्राने न देते थे। उन्हें विचार ग्राया-'इनकी जननी' मेरे पुत्र—मेरे पुत्र करती हुई ग्रांसू बहा रही है। न तो सुख से भोजन करती, न शांतिपूर्वक निद्रा लेती है। जब कि इन पुत्रों के मुख पर मातृ विरह के दुःख का निशान तक नहीं। कैसा यह संसार है!

श्रीराम ने पुनः प्रश्न किया, 'किसके विचार में डूब गए देवर्षि! मेरे योग्य.....'नारदजी ने कहा-'मैं ग्रयोध्या से ग्रा रहा हूं दुःखी ग्रयोध्या का वर्णन नहीं कर सकता परन्तु दुःख, शोक,

और आक्रन्द से मृत्यु के समीप हुई तुम्हारी माताओं कौशल्या और सुमित्रा को जब मैं मिला, मेरे जीवन में कभी भी जिसका अनुभव न हुआ, ऐसी वेदना का मैंने वहां अनुभव किया। तुम प्रतिवासुदेव की लंका में—विभीषण-सुग्रीव जैसे सम्राटों की भक्ति में माताओं की भूल जाओ—यह स्वाभाविक है—

नारदजी अस्खलित गति से बोलते जा रहे थे—श्री राम, लक्ष्मण अवाक् होकर सुनते जाते थे—सीताजी की आँखों से अश्रु धाराएँ बह चली थीं……।

'तुम यहाँ सुख भोग में ऐसे डूब गए हो कि कहाँ दिन निकलता है और कहाँ अस्त होता है इसका तुम्हें पता नहीं। जबकि उस कौशल्या और सुमित्रा का एक-एक क्षण वर्ष समान बीत रहा है। 'हा वत्स राम……हा वत्स लक्ष्मण……हा वत्से सीता कहती हुई करुण रुदन करती इन माताओं को जब मैंने देखी, तब मेरा हृदय द्रवित हो उठा और भागता मैं यहाँ आ पहुँचा।

श्रीराम मन ही मन दुःखी हो गए। गद्गद् स्वर में—आँसू भरी आंखो से वे बोले—हे देवर्षि ! बस करें—सुना जाता नहीं इन माताओं का दुःख……एक दिन का भी विलंब किये बिना हम अयोध्या प्रयाण करते हैं।'

'लक्ष्मण ! विभीषण को बुलाओ !

विभीषण आ पहुँचे। नत मस्तक होकर विभीषण ने पूछा :

'सेवक के योग्य आदेश प्रदान करें।'

राजन् ! जीवन में न होने योग्य भूल हो चुकी है। माताओं का दुःख भूल कर तुम्हारी भक्ति में मोहित होकर हमने

यहां छ:-छः वर्ष विता दिये……आज प्रयाण करना चाहिये।'

विभीषण की आंखों में आंसू आ गए, 'राम रहित लंका' की कल्पना भी विभीषण को रुला रही थी।

'कृपानाथ!' विभीषण बोल न सके।

'राजेश्वर! हमारे विरह दुःख से हमारी माताएं मृत्यु सन्मुख न हो जाएं तब तक हमें वहां पहुंच जाना चाहिये। हमें अनुमति प्रदान करे।' विभीषण विचार मग्न हो गए।

'हे नाथ! आप अब मात्र सोलह दिन और रुक जाएं। सोलह दिनों में मैं लंका के शिल्पकारों को अयोध्या भेजकर उसे अनुपम नगरी बनवा दूं। मेरी इतनी प्रार्थना स्वीकार करें।'

श्रीराम ने नारदजी की ओर देखा। नारदजी ने कहा:

'भले ही आप आज से सोलहवें दिन अयोध्या पधारें। मैं आज ही अयोध्या जाकर आपके आगमन रूपी महोत्सव के समाचार आपकी माताओं और अयोध्यापति भरत को दूंगा। उनका शोक दूर होगा।'

नारदजी का विभीषण ने भाव भक्तिपूर्ण आतिथ्य किया और नारदजी अयोध्या की ओर चले। साथ ही हजारों शिल्पकारों को आकाशयान में विभीषण ने अयोध्या रवाना किये।

लंका में वायु वेग से बात फैल गई कि 'आज से सोलहवें दिन श्री राम सपरिवार अयोध्या चले जाएंगे।

लंका का एक-एक स्त्री-पुरुष इस समाचार से व्याकुल हो गया। दल के दल विभीषण के राजमहलों में आने लगे। रोती आंखों से सब कहने लगे—'हे लंकापति! श्री राम को अयोध्या न जाने दे। आप हम सब की ओर से श्री राम को निवेदन करे।'

प्रजा का निवेदन अश्रुभीगी आंखों और भारी हृदय से सुनकर वे उसे कुछ भी प्रत्युत्तर न दे सके। प्रजा ने श्री राम के महालय के आगे जाकर प्रार्थना की, श्री राम ने प्रजा की ओर देखा। सभी अविरल अश्रुधारा बहा रहे थे। 'लंका छोड़कर न जाएँ........अयोध्या न जाएँ।'

श्री राम ने कहा 'प्यारे लंकावासिओं! हम यहां छः वर्ष रहे, हमे छः ही क्षण लग रहे हैं। जबकि हमारी माताओं के लिये छः क्षण छः वर्ष जितने बन गए हैं—ये उपकारी जननियां और लघुभ्राता भरत—हमारे विरह से व्याकुल हो गए हैं—अतः हमें आप सब अनुमति प्रदान करे। लंका, लंकापति विभीषण और लंका के प्यारे प्रजाजन कभी भी नही भुलाए जाएँगे।

सोलह दिन बीतते कितना समय लगे? अयोध्या से शिल्पकार लौट आए। विभीषण ने 'पुष्पक विमान को सजाने की आज्ञा प्रदान की। पुष्पक में अनेक रत्न और कीमती वस्तुएँ विभीषण ने गुप्त रूप से रख दी थी।

१४

अयोध्या के राजमहल में

जब से लंका के शिल्पकार, कलाकार और चित्रकार अयोध्या में आए थे और अयोध्या के राजमहलों, राजमार्गों, उद्यानों में नई रौनक आ रही थी, तबसे अयोध्या की प्रजा को पता लग गया था कि उनके प्राण प्रिय राम, लक्ष्मण और सीता अयोध्या लौट रहे थे। प्रजा जानती थी कि लंकापति रावण सीता को उड़ा गया था और श्री राम-लक्ष्मण ने भीषण युद्ध कर, रावण का वध कर सीता को प्राप्त की थी। अतः प्रजा का उल्लास और हर्ष असीम था।

लोगों को श्री राम के दर्शन करने थे इतना ही नहीं, परन्तु श्री राम के मुख से वनवास की रोमांचक बातें भी सुननी थी, लंका के विपुल वैभव का आँखों देखा हाल जानना था। दशानन रावण के साथ हुए घोर युद्ध की रसभरी बातें सुननी थीं। 'श्री राम पुष्पक विमान में आने वाले हैं' ऐसे समाचार ने भी अयोध्यावासियों में भारी कुतुहल पैदा कर दिया था। पुष्पक विमान की अद्‌भुत् बातें तो लोगों ने सुन रक्खी थी—अब उन्हें यह पुष्पक विमान प्रत्यक्ष देखने को मिलना था—इसका आनन्द उन्हें बहुत था।

नगर की स्त्रियाँ सीता को मिलने के लिये कितनी आतुर थीं ! इस कमलकोमल पतिव्रता सन्नारी का हृदय के प्रेम से

'भरत ! अच्छा हुआ कि लक्ष्मण साथ गया था-अन्यथा वह रावण मेरी सीता को उड़ा ले गया था तब राम का क्या होता ? वह अकेला........'

शत्रुघ्न आ पहुँचा। शत्रुघ्न को अपने पास बैठा कर भरत ने कहा :

'भाई, कल आर्य पुत्र पधारेंगे.......आवास गृह तैयार हो गये क्या ?'

'मैं आवास गृहों की सजावट करके ही आया हूँ !'

'नगर में आर्य पुत्र के आगमन का पटह बजवाने के लिये महा मंत्री को निर्देश........'

'और मां, रावण का युद्ध के मैदान पर वध भी लक्ष्मण जी ने ही किया था न !'

'अरे मेरा लक्ष्मण तो रावण का क्या परन्तु इन्द्र का भी वध करे ऐसा वीर है। मैं तो इसे जन्म से ही जानती हूँ न !'

तीनों महारानियों के मुख पर आनंद छा गया। शत्रुघ्न की माता बाहर गयी थी। वह भी आ गई। उसके पीछे ही।

महा मंत्री निर्देश देकर परह बजवाना शुरु कर दिया है। नगर जनों का हर्ष हिलोरें ले रहा है। सारा नगर शृंगारित हो चुका है। एक घर रंग दिया गया है और राज मार्ग, गलियां सभी स्वच्छ हो गये है।'

भरत शत्रुघ्न की बात सुनकर प्रसन्नता व्यक्त की।, और कुछ याद आया।

'यह काम मैंने महा मंत्री को सौंप दिया है और लंका के शिल्पकारों ने जो नये राज भवन बनाये हैं वहां अतिथिगणों का आतिथ्य होगा।'

'यह विभीषण कौन है ?' कौशल्या ने पूछा।

'रावण का छोटा भाई""परन्तु मां ! वास्तव में वह महात्मा है। जब रावण देवी सीता को उड़ा ले गया था तब विभीषण ने ही सर्व प्रथम विरोध किया था और रावण के न मानने पर अपनी सेना के साथ वह श्रीराम के पक्ष में आ गया था'

'बड़ा भला व्यक्ति कहेंगे'—कौशल्या ने कहा।

'और दूसरे जो सुग्रीव साथ आ रहे है उन्होंने तो आर्य पुत्र को जो सेवा-भक्ति की है—उसकी जितनी हम प्रशंसा करें उतनी ही कम है। सीताजी की शोध भी उन्होंने ही की थी।'

'और पुत्र ! तू उस हनुमान की बात करता था न""अंजना का पुत्र—वह आएगा क्या ?' कैकेयी ने वार्तालाप में भाग लेते हुए पूछा।

'हनुमान तो हनुमान है मां ! अधिक संभावना तो उनके अपने आने की है। उनके अद्वितीय पराक्रम ने रावण को थर्रा दिया था।'

ये सब बातें तो राम-लक्ष्मण और सीता के मुख से सुनने में आया !' सुमित्रा बोली।

'नहीं ! राम सब बातें नहीं कहेंगे। बातें तो लक्ष्मण के मुख से सुनेंगे।' कौशल्या ने कहा।

'और एक बात कहूं मां ? भरत ने कौशल्या के सामने देखकर पूछा ।

'कह न जल्दी ।'

'सीता के अतिरिक्त हमारी अन्य भाभियां भी कल आ रही है ।'

'क्या ?' चारों माताऐं हर्ष और आश्चर्य से बोल उठी ।

'जी हां ! वनवास में जहां-जहां आर्य पुत्र पधारे, अनेक राजकन्याओं के साथ लक्ष्मण जी ने पाणिग्रहण किया और आर्य पुत्र को भी करना पड़ा ।'

'यह बात तो तुमने कभी भी नही कही ? सुमित्रा ने कहा ।

'यह नहीं करेगा ! इसे तो स्त्रियां नागिन ही दिखती हैं न ! वैरागी है मेरा पुत्र ! कौशल्या ने भरत के सिर पर हल्की सी चपत लगाते हुए कहा । भरत मौन रहे, परन्तु कैकेयी से न रहा गया ।

'जब से महाराजा ने चारित्र्य ग्रहण किया है—भरत को बस, चारित्र्य की ही रट लगी है । भोगविलास को यह तुच्छ गिनता है । रंग-राग पास तक फटकने देता नहीं । जब-जब समय मिलता है—बस परमात्मा के ध्यान में लीन ! कभी तो महल के झरोखे में खड़ा-खड़ा नील गगन की ओर देखता हुआ विचारों में मशगूल ! कभी मध्यरात्रि को देखती हूं तो पलंग खाली होता है और भूमि पर पद्मासन लगाकर

ध्यान में लीन होता है....यद्यपि मैं इसे कुछ भी कहती नहीं—इसके दिल को दुःखी करना चाहती नहीं, परन्तु मुझे ऐसा लगता है कि यह इसके पिता के मार्ग पर—कैकेयी का कंठ भर गया आँखें अश्रु भीनी हो गई, परन्तु बेटा ! अब मैं तेरे मार्ग में विघ्न नहीं बनूँगी । मैं तेरे व्याकुल—चारित्र्य विन। तड़फते हृदय की वाणी सुन सकती हूँ—' कैकेयी ने साड़ी के छोर से अपना मुख ढंक लिया । कौशल्या भरत की पीठ पर अपना स्नेह पूर्ण हाथ फेरती हुई बोली :

'बेटा भरत ! जाओ और कल की तैयारी करो ।' भरत के साथ शत्रुघ्न भी वहां से गए ।

कैकेयी रो रही थी । कौशल्या ने कैकेयी को प्रेमार्द्र शब्दों में कहा :

'कैकेयी । क्यों रोती हो ? भरत की बातों से रोती है ? बहिन ! भरत की भव्यता ही भिन्न है । यह महल में रहता हुआ भी योगी ही है । इस पर हमें राग है परन्तु इसे हम पर राग नहीं । हम जिन भौतिक पदार्थो में सुख मानती हैं इसे उन पदार्थों में सुख ही नहीं दिखाई देता । यह तो इनमें दुःख के ही दर्शन करता है । हमें मोक्ष प्राप्त करने की तीव्र इच्छा नहीं और इसे मोक्ष के बिना शांति नहीं, स्वस्थता नहीं—फिर भी अपने पिता के वचनों के खातिर यह इतने समय रुका—राज्य सम्हाला ।'

कैकेयी पृथ्वी पर दृष्टि जमा कर कौशल्या की बातें सुन रही थी । भरत के आंतर-बाह्य व्यक्तित्व पर उसने कई बार सोचा था । उसके साथ कई बार बातें भी की थी । संसार और

संसार त्याग की चर्चाएँ की थी । आज कौशल्या के मुख से भरत के मन की बातें उसने पहली बार ही सुनी थी। कैकेयी को कौशल्या के शब्दों में भरत के प्रति वात्सल्य दिखायी दिया। भरत के मन को पहिचानने की प्रेरणा दिखाई दी। भरत के मार्ग में अब विघ्न न करने की परोक्ष सूचना दिखाई दी। उसने कौशल्या के मुख की ओर देखा। कौशल्या वातायन के बाहर छाए हुए नीले आकाश की ओर देख रही थी। कैकेयी कौशल्या के कुम्हलाए हुए और शृंगार विहीन मुख की ओर देख रही थी । वर्षों से पति बिना, पुत्र बिना पुत्रवधू बिना जीवन जीने वाली कौशल्या ने अपने मन को कैसे मनाया होगा ? किस प्रकार अपने पुत्र स्नेह को संगुहित कर रक्खा होगा। कैकेयी विचारों में आगे बढ़ी कि कौशल्या ने कैकेयी से कहा:—

'मैंने भरत में राम के दर्शन किए हैं ! भरत में मैंने रामवत्स को देखा है। मैंने भरत में ही मेरे स्नेह की तृप्ति का अनुभव किया है । अतः भरत मुझे कितना प्रिय है—यह तू समझ सकती है।'

कैकेयी को मानो अपने विचारों-प्रश्नों का समाधान मिल गया। कौशल्या मेरे भरत में राम को देख सकती है वैसे ही मैं राम में भरत को देख सकूँ !' भरत अब रोकने से रुकेगा नहीं चारित्र्य मार्ग पर चला जाएगा-यह बात कैकेयी समझ सकी थी। श्रीराम अयोध्या आएं - इतनी ही प्रतीक्षा भरत कर रहा था।

परन्तु····इतने वर्षों के बाद आ रहे राम में मेरे प्रति आदर रहा होगा क्या ? क्यों कि वनवास जाने में निमित्त तो मैं ही बनी थी न ? हाँ, राम ऐसी कोई गाँठ बाँधे ऐसे व्यक्ति

नहीं हैं परन्तु लक्ष्मण का क्रोध अर्थात् :—केकयी कांप उठी।

'लक्ष्मण ने मेरे लिये बात राम से नहीं की होगी क्या? और यदि राम मेरे प्रति अनादर वाले बने हों तो मैं राम में भरत के दर्शन कैसे कर सकूँगी? मेरे भरत में तो कौशल्या पर कितना भक्ति भाव है? और सीता? उस कोमलांगी पुत्रवधू को मेरे निमित्त ही वन २ भटकना पड़ा न? उसके मन में मेरे प्रति सद्भाव कैसे टिका होगा?'

कैकयी विचारों के भँवर में उलझ गई, परन्तु इतने में तो नगर से राजमान्य परिवारों की स्त्रियां आ पहुँची और कौशल्या को नमस्कार किया। कौशल्या ने उनका उचित स्वागत किया।

'महादेवी! कल श्री रामचन्द्रजी, लक्ष्मणजी और देवी सीता के साथ पधार रहे हैं। सारे नगर में हर्ष उभर आया है। अयोध्या का एक एक घर सजाया गया है और लाखों स्त्री-पुरुष प्राण प्यारे राम का स्वागत करने के लिये उत्सुक हो रहे हैं।'

कौशल्या हर्ष में पुलकित हो गईं। नगर श्रेष्ठि की पत्नी ने कहा 'महादेवी! कितने वर्षों के पश्चात् मैं श्री राम के दर्शन करूँगी? मैं तो जब आपके दर्शन करती हूँ, आपके संबंध में सोचती हूँ कि श्री राम की स्मृति आ ही जाती है।'

'परन्तु मुझे तो क्षण २ पर राम की स्मृति हो आती है''''' कौशल्या की आँखें भीग गईं।

अब तो कल ही पुत्र दर्शन से आप धन्य हो जायेंगी! बहिन, कितने वर्षों का दीर्घ काल बीत गया। मेरी सीता को कैसे कष्ट सहन करने पड़े? संसार में सुख है तो कहां? देखो न, मैं महल में रहती हुई भी सुखी कहां हूँ?'

कौशल्या ने दीर्घश्वास लिया।

'महादेवी ! कल श्रीराम, लक्ष्मण और सीता देखेंगी तब सारा दुःख विस्मृत हो जाएगा।''

'सच्ची बात है तुम्हारी !'

इतने में परिचारिकाओं ने आकर भोजन के लिये निमंत्रण दिया। अयोध्या की रानियां भोजन के लिये चलीं और मिलने के लिये आई हुई नगरस्त्रियों ने विदा ली।

कौशल्या और सुमित्रा आज हर्ष विभोर हैं। सुप्रभा भी बहुत प्रसन्न है—जब कि कैकेयी की स्थिति विचित्र है। उसकी एक आंख में आनन्द है, दूसरी आंख में विषाद है। श्री राम को वह अंतर के स्नेह से चाहती है। उसे राम के प्रति घृणा नहीं, तिरस्कार नहीं। राम के प्रति उसमें वात्सल्य है, परन्तु भरत-विरह की कल्पना उसे अस्वस्थ बना रही है। भरत के प्रति अपार स्नेह भरत के प्रति अति वात्सल्य उसे दुःखी कर रहा है। भरत को……उसके व्यक्तित्व को वे पहचानती हैं। वह संसार में रहेगा ही नहीं, यह बात भी जानती है। श्री राम अयोध्या में पांव रक्खेंगे कि भरत अयोध्या का त्याग करेगा ! यह विचार कैकेयी को कम्पित कर देता है। अब भरत को संसार में पकड़ रखने के लिये कैकेयी के पास कोई उपाय नहीं। हां, श्री राम के कहने पर भरत रुक जाये और जल्दी संसार का त्याग न करे यह हो सकता है। कैकेयी को कुछ राहत मिली। उसकी मुख मुद्रा पर चमक आई। मैं राम से कहूँगी, वे भरत को अवश्य रोकेंगे। और भरत राम को पिता तुल्य मानता है। इतना ही नहीं पिता से अधिक मानता है। अतः राम का वचन वह अवश्य स्वीकार करेगा। कैकेयी को उपाय की सफलता लगी। वह भोजन से निवृत्त होकर सीधी भरत के पास पहुँच गई।

'बेटा ! सभी तैयारियां हो गई ? लंका के इन शिल्पकारों ने तो अयोध्या की काया पलट ही कर डालो !"

'हां, माताजी, स्वागत की सभी तैयारियां हो चुकी हैं। बाकी आर्य पुत्र के स्वागत हेतु मैं क्या तैयारियां कर सकता हूं ? जितना करूं उतना ही अपूर्ण लगता है। कल आर्य पुत्र के दर्शन कर कृतार्थ होऊंगा—" भरत दूर २ लंका की दिशा में दृष्टि दौड़ाते हुए बोले।

'भरत मेरे निमित्त मेरे राम को कितना कष्ट उठाना पड़ा ? क्या राम मुझे क्षमा करेंगे ? राम के गुण तो अगणित हैं ? मैं क्षमा मांगूंगी·······।"

भरत कैकेयी की बात सुनते रहे। कुछ न बोले। उनके मन में इन बातों का कोई महत्व न था।

'प्रातः किस समय विमान आयगा ?' कैकेयी ने बात बदली।

"लगभग एक प्रहर बीतने के पश्चात्"

'विमान कहा उतरेगा ?'

'पूर्व दिशा के दरवाजे के बाहर। वहा विमान को उतारने की सभी सुविधायें जुटा दी गई हैं।"

महामंत्री भरत को मिलने के लिए खंड में प्रविष्ट हुए। कैकेयी को प्रणाम करने के पश्चात् भरत को प्रणाम किया और अपना आसन ग्रहण किया।

'महाराजा ! अयोध्या और अयोध्या के आसपास के गांवों के आनंद की सीमा नहीं। मानो हर्ष की बाढ़ आई हो ! मैं अभी २ पूर्व दिशा के द्वार से आ रहा हूं·······प्रजाजन आर्य पुत्र के प्रति अपार स्नेह भिन्न २ प्रकार से अभिव्यक्त कर रहे हैं। उनका स्वागत करने के भिन्न २ प्रकार अपना रहे हैं।"

महामंत्री की वृद्ध देह थकी हुई थी। शेष क्षण विश्राम लेकर उन्होंने कहा :

कल का दिन अयोध्या के इतिहास में अमर रहेगा...... महाराजा..................आज बस एक ही महापुरुष की अनुपस्थिति सता रही है......यदि आज महाराजा दशरथ होते तो......!'

महामंत्री की आँखें सजल हो गई।

'महामंत्रीजी ! कल आर्य पुत्र के साथ लंकापति महात्मा विभीषण, हनुमानजी, सुग्रीव आदि महापुरुष भी यहाँ पधारेंगे उनका यथोचित स्वागत और अतिथ्य करने का प्रबंध—''

'राजेश्वर ! प्रबंध हो चुका है। हमारे ये महमान अयोध्या के आतिथ्य पर प्रसन्न होंगे।'

अन्य कई महत्व की विचारणा कर महामंत्री विदा हुए। कैकेयी भी अपने महल में गई। कौशल्या श्री राम और लक्ष्मण जी के अंतःपुर की व्यवस्था, शृंगार, सुविधाएँ आदि अपनी स्वयं की देखरेख में तैयार करवा रही थी। भिन्न २ देशों की राजकन्यायें अयोध्या की रानियाँ बन कर आ रही थी। कौशल्या और सुमित्रा 'राजमातायें बननने वाली थी इसका उन्हें हर्ष भी था।

मध्य रात्रि तक किसी को नींद आई न थी। अयोध्या आनंदोत्सव में मस्त हो रही थी।

१६

लंका में अंतिम रात

'आर्यपुत्र ! कल प्रातः हम अयोध्या पहुँच जायेंगे न ?' हाँ, देवी कल माता अपराजिता के पुण्यदर्शन होंगे। 'अयोध्या की प्रजा आपके दर्शनार्थ कितनी उत्सुक होगी ! चारों माताएँ और भरत—?'

सीताजी का स्वर भावभीगा हो गया।

'भरत ! हाय ! उसकी स्थिति तो जल विना मछली जैसी हो गई है। भरत वास्तव में उत्तम पुरुष है।' श्रीराम ने लंका पर दृष्टि दौड़ाई। लंका सो गई थी। मात्र राजमहल और अट्टालिकाएँ दीपकों की रोशनी में जगमगा रहे थे। पहरेदारों के पदख और कभी २ श्वानों की आवाज—के सिवाय सम्पूर्ण शांति थी।

मध्य रात्रि का समय है। देवी सीता को निंद्रा नही आती। श्रीराम भी अल्प निद्रा में हैं। सीताजी ने दीपक की ज्योति तेज की। वे श्रीराम के शयनकक्ष में प्रविष्ट हुई कि राम जाग उठते हैं। लंका में यह अंतिम रात है। कल लंका को छोड़कर अयोध्या पहुँच जाना है ! सीताजी के सामने अयोध्या के भिन्न २ चित्र आ रहे हैं, भूतकाल के अनेक प्रसंगों की स्मृति उभर रही है। वे श्रीराम के पास आकर बैठ गई।

नारदजी कहते थे कि माता अपराजिता, सुमित्रा……अच्छे कपड़े पहिनती नही, हँसती नही और न किसी से मिलती है। दिन रात……सीताजी का कोमल हृदय रो पड़ा।

'माता कैकेयी के विषय में भी नारदजी ऐसा ही कहते थे। कैकेयी को भी हम पर बड़ा वात्सल्य है। उन्हें ख्याल भी न था कि भरत राज्य नही स्वीकार करेंगे और उसके लिये हम अयोध्या का त्याग करेंगे। यदि ऐसी कल्पना होती तो वे भरत के लिये राज्य माँगती ही नहीं! खैर, अब तो यह सब भूतकाल का स्वप्न हो गया…कल पुनः उन स्वजनों का मिलन होगा।'

श्रीराम ने सीताजी के सामने देखा। सीताजी के मुख पर प्रसन्नता थी। श्रीराम ने कहा:

'देवी! चारों माताएँ और भरत, शत्रुघ्न अभी अयोध्या के राजमहलों में जागते होंगे। वे भी हमारे विचारों में खोए हुए होंगे।'

'हाँ! हमारी वनवास की बातें जानने की भी जिज्ञासा होगी न!'

'इससे भी अधिक हमारे मिलन की उत्कंठा!'

'सत्य है आर्यपुत्र!'

जब से महात्मा विभीषण ने शिल्पकारों को अयोध्या भेजे हैं और नारदजी ने जाकर हमारे समाचार दिये हैं तबसे अपनी ही बातें चल रही होगी।'

'प्रजा का आनंद……हर्ष कितना होगा!'

साथ ही विभीषण सुग्रीव, भामंडल आदि को देखने का भी प्रजा में उत्साह होगा।'

सीताजी का मन अयोध्या की यात्रा पर चल पड़ा। भूतकाल की स्मृतियाँ मनुष्य को आकर्षित करती हैं......मनुष्य को उनमें आकर्षित होना भी प्रिय लगता है। व्यक्ति अपने दुःखमय भूतकाल को भी याद करने लगता है...यह भूतकाल जब वर्तमान काल था, तब वह दुःख और कष्ट से पीड़ित रहता था। आज उसे याद करने में कुछ मधुरता का अनुभव होता है। इसी प्रकार सुखदायी भूतकाल की स्मृति दुःखमय वर्तमान काल में करता मनुष्य—इस स्मृति में से कुछ आश्वासन प्राप्त करने लगता है, परन्तु यह आश्वासन क्षणिक होता है। दीर्घकालीन तो होती है निराशा और दीनता।

'नारदजी ने अयोध्या जाकर माताओं से भी बात की होगी कि वनवास में तुम्हारी पुत्र वधुओं में भी वृद्धि हुई है।' सीताजी के मुख पर लालिमा छा गई। राम के मुख पर स्मित खिल उठा।

'सचमुच ही अपराजित और सुमित्रा विशल्या आदि को देखकर प्रसन्न हो जाएँगी।' सीताजी ने कहा।

श्रीराम मौन रहे। मौन सहमति प्रकट की।

'परन्तु देवी! तुम्हें माताएँरावण तुम्हारा अपहरण कर गया—यह बात भी पूछेंगी! लंका का वर्णन पूछेंगी। वनवास के दुःख पूछेंगी।'

'रावण को युद्ध में किस प्रकार मारा—यह बात आपको भी माताजी पूछेंगी।'

मुझे तो प्रायः नहीं पूछेंगी, परन्तु लक्ष्मण को अवश्य पूछेंगी। इतना ही क्यों, वनवास की एक २ बात जानने की उनकी उत्कंठा होगी।

सीताजी ने वातायन से बाहर दृष्टि डाली। श्रीराम आँख बंद कर विचारों में मग्न हो गये। सीताजी के मन में एक प्रश्न घुल रहा था। 'पूछूँ या न पूछूँ।' इस दुविधा में पूछ नहीं सकती थी।

जिस समय सीताजी का श्रीराम के साथ पाणिग्रहण हुआ था तब वे जानती थीं कि मैं अयोध्या की भावी महारानी बनने जा रही हूँ, परन्तु वे राम पत्नी ही बनके रहीं—महारानी बनने की आशा तो बीच में ही अदृश्य हो गई थी, परन्तु रावण के वध के पश्चात्, लंका में अन्तिम कई दिनों से सीता को यह विचार भी कभी २ आ जाता था। "अयोध्या जाने के पश्चात् श्रीराम का राज्याभिषेक होगा? तो भरत राज्य छोड़ देंगे? हाँ, भरत को तो तब भी राज्य कहाँ चाहिये था? अरे, लंका-विजय के पश्चात् विभीषण कहाँ राजा होना चाहते थे। यह तो आर्य पुत्र ने ही उनका राज्याभिषेक करवाया। श्रीराम राजा होना चाहते ही नहीं क्या?

सीताजी को यह शंका है। श्रीराम ने आँखें खोलकर सीताजी के सामने देखा।

'पूछना है कुछ? पूछो।' श्रीराम बोले।

'मैं तो आपकी निस्पृहता का विचार करती थी।'

'अर्थात्'?

'आपको राजा बनने की कामना ही नहीं।'

'ऐसा किसने कहा?'

'कहे कौन? आपका जीवन ही बताता है न! भरत को राजा कहाँ बनना था? आपने ही राजा बनाया न! ये विभीषण भी आपको ही राजा बनाना न चाहते थे क्या? आपने ही उनकी बात अस्वीकार की और उनका राज्याभिषेक किया।

'सच्ची वात है देवी ! तुम्हें भी प्रिय है न ?'

'जैसी आर्य पुत्र की इच्छा—मुझे प्रिय न लगने का है क्या ? मुझे तो आपकी छाया चाहिये···मेरे पास स्वर्ग है ! परन्तु आप कैसे निस्पृह हैं।'

'देवी ! राजा वनने में क्या विशेपता है ? भले ही विभीषण या भरत राजा हैं, परन्तु हम उन्हें जैसा कहते हैं वैसा वे करने के लिये तैयार नहीं रहते क्या ? राजा बनकर करना तो है प्रजा का पालन ही न ? प्रजा के हितों का विचार करना है। यह काम राजा बने बिना भी हो सकता है। नारदजी कहते थे कि भरत ने अयोध्या राज्य की प्रजा संतुष्ट है। भरत प्रजा के हित के काम करता है। स्वयं निष्काम है—ऐसा राजा हो तो फिर हमें राजा होने की क्या आवश्यकता है ?'

सीताजी सुनती ही रही। उनकी शंका अब शंका न रही, परन्तु वास्तविकता बन गई। उन्हें पूर्ण विश्वास हो गया कि आर्य पुत्र अयोध्या जाने के पश्चात् राजा बनने वाले नहीं हैं।

परन्तु ये सीताजी थी उच्च आदर्शों की जीवित प्रतिमा ! महारानी पद की स्पृहा उन्हें सताती नहीं थी। श्री राम के उच्च आदर्शों को सुनकर उनका मन प्रसन्न हो गया।

'आपके उच्च आदर्श को मैं नमस्कार करती हूं, परन्तु क्या आपके अयोध्या लौटने के पश्चात् भी भरत राजा बने रहेंगे ? अरे ! उन्हें राजा बनाने के लिये तो आपने वनवास मांग लिया।'

'तुम्हारी शंका उचित है, परन्तु मैं भरत को समझा लूंगा। फिर जैसी भवितव्यता !

'सत्य है नाथ ! आपकी आज्ञा का भरत कभी भी उल्लंघन नहीं करेंगे। भरत को आपके प्रति अनन्य अनुराग है, परन्तु

अनुराग में से दो बातें पैदा होती है। इस अनुराग से प्रेरित होकर वे आपको राजा बनाना चाहें और इसी अनुराग से बिना इच्छा के भी आपकी आज्ञा शिरोधार्य करे।'

सीताजी ने आज हृदय खोल दिया था। आज खुले हृदय से बात करने का उन्हें अवसर भी मिला था। अयोध्या जाने के पश्चात् तो कई बंधन थे।

रात्रि काफी बीत चुकी थी। श्री राम का विनय कर सीताजी अपने खंड में गईं।

सीताजी के विचारों, उत्कंठाओं-अभिलाषाओं की अपेक्षा विशल्या के विचार, उत्कंठाएँ-अभिलाषाएँ भिन्न प्रकार की ही थी, परन्तु जैसे सीताजी की अन्तिम रात निद्राविहीन हो गई थी, उसी प्रकार विशल्या को भी नींद नहीं आती थी। लक्ष्मण जी भी जाग्रत अवस्था में ही सोए थे। विशल्या ने ज्योंही लक्ष्मण जी के शयन कक्ष में प्रवेश किया, लक्ष्मणजी उठ बैठे। विशल्या दीपक को तेज कर उचित आसन पर बैठी।

'आज मानो निद्रा ही नहीं आती। विशल्या ने यहाँ आने का प्रयोजन घुमा फिरा कर बताया। मुझे भी आज ऐसा ही है।'

'आपको तो आज अयोध्या के विचार आते होंगे न?'

'सच्ची बात है। माताओं के विचार, भरत का विचार, पिताजी का विचार-अनेक विचार।'

'मुझे भी ऐसी ही जिज्ञासाएँ हो रही हैं। यद्यपि कल ही अयोध्या पहुँचना है-फिर भी ऐसा हुआ कि आपके पास आकर जिज्ञासा की तुष्ठि करू।

'क्या माता सुमित्रा और अपराजिता देवी सीता जैसी ही प्रेम करने वाली और उदार हृदया हैं ?'

हां, इन माताओं का वात्सल्य, उदारता, स्नेह अवर्णनीय है। वैसे तो कैकेयी और सुप्रभा भी तुम्हें खूब चाहेगी।'

'स्त्री के लिये मात्र पति का ही प्रेम पर्याप्त नहीं होता। उसे जिस परिवार में रहना जीना होता है, उस परिवार के एक-एक सभ्य का स्नेह अपेक्षित होता है, उसमें भी सासुओं का प्रेम जिन पुत्रवधुओं को प्राप्त होता है, वे पुत्र वधुएं घर में स्वर्ग जैसे सुख का अनुभव करती हैं। यद्यपि पति का स्नेह और पति की वफादारी तो चाहिये ही। विशल्या को अब अयोध्या के विशाल परिवार में जाना था। सासुओं, जेठानियों, देवरानियों, देवरों—इन सबके साथ उसे मेल जोड़ना था। विशल्या की इस सम्बन्ध में जिज्ञासाएँ स्वाभाविक थी। देवी सीता की ओर से तो वे सम्पूर्ण रूप से संतुष्ट थी। सीता में उसने जेठानीपन का दर्शन कभी भी न किया था। लक्ष्मण जी के कहने से उसके मन को आश्वासन मिला था कि उसकी चारों सासुओं में भी ऐसा ही वात्सल्य है, और उसे संतोष हुआ।

दूसरी जिज्ञासा उसकी यह थी—क्या लक्ष्मण जी सदा राज्यपद से दूर ही रहेंगे ? अयोध्या के सिंहासन पर अभी भरत हैं। श्री राम के वहाँ लौटने के पश्चात् राजा श्री राम बनेंगे—लक्ष्मण जी का क्या ? परन्तु इस सम्बन्ध में लक्ष्मण जी को कैसे पूछना ? यह समस्या थी फिर भी विशल्या बुद्धिमान् थी।

'नाथ ! अभी तो अयोध्या का राज्य भरत सम्हाल रहे हैं न ?

'हाँ !'

'वहाँ हमारे पहुँचने के पश्चात् भरत एक क्षण भी राज्य सिंहासन पर न बैठेंगे—क्यों !' ठीक है न ?

'सच्ची बात है।'

'तो आर्यपुत्र ही राजा बनेंगे।'

'अभी से क्या कह सकता हूँ ? आर्यपुत्र भरत को ही आग्रह करेंगे।'

'फिर भी भरत न माने तो ?'

'तो आर्य पुत्र को ही राज्य सिंहासन सुशोभित करना पड़ेगा ?'

'तो—फिर आप ? विशल्या ने संकोच पूर्वक कहा।

'मैं ? मैं हमेशा आर्य पुत्र का चरण सेवक ही रहना चाहता हूँ। उनकी सेवा, उनकी आज्ञा का पालन, यही मेरा जीवन है।' लक्ष्मण जी ने विशल्या के सामने देखा। क्षण भर मौन रहकर, विशल्या के मनोभाव जानकर लक्ष्मण जी ने कहा :

'मेरे जीवन का मैंने अन्य कोई आदर्श बनाया नहीं। मेरी और अपनी सभी चिन्ता आर्य पुत्र करते हैं। फिर हम क्यों सोचने लगे ? मुझ में राजा बनने की इच्छा या विचार, अभी तक पैदा हुआ नहीं। मैं प्रसन्न हूँ। तुझे भी इसी प्रकार प्रसन्न रहना है। किसी प्रकार की अन्य आकांक्षा में आकर्षित होकर अशान्त न बनना।'

लक्ष्मण जी की प्रसन्नता का मूल इस निराकांक्ष दशा में था। इसीलिये वे श्री राम के आज्ञाकारी और विनयवान् बन सके थे। राज्य सत्ता की भूख यदि उनमें जगी होती तो श्री राम

लक्ष्मण की डोरी अखंड न रह पाती । व्यक्तिगत सुख की तमन्ना होती तो श्री राम और सीता के प्रति कर्तव्य वे निभा न सके होते । मनुष्य जब अपने ही सुख दुःख का विचारक बन जाता है, परिवार से निरपेक्ष बन जाता है, समाज से निरपेक्ष बन जाता है, धर्म और राष्ट्र से निरपेक्ष बनकर एकमात्र अपने ही स्वार्थ में लीन हो जाता है तब वह समाज, परिवार, धर्म, और राष्ट्र के लिये खतरनाक हो जाता है ।

लक्ष्मण जी ने अपने व्यक्तिगत सुखों या दुःखों के लिये कभी भी शिकायत न की थी, इसीलिये वे प्रसन्न थे । विशल्या को भी उन्होंने अपना आदर्श समझाया । दूसरों के सुख के लिये दुःख सहने का ज्ञान उन्होंने ऐसा पचा रखा था कि उन्हें इस दुःख में भी कभी अशांति न हुई थी । वनवास में या लंका में-सर्वत्र वे कर्तव्य परायण रहे थे ।

लक्ष्मण जी की इस प्रसन्नता और कर्तव्य निष्ठा में एक महान् तत्व कार्य कर रहा था : श्री राम और सीता का अनन्य वात्सल्य, परम विश्वास और अद्भुत प्रेम ।

जिस समय लक्ष्मण जी युद्ध में मूर्छित हुए थे, रावण की अमोघ विजया शक्ति से लक्ष्मण जी अशक्त बन गए थे तब श्री राम का विलाप, छटपटाहट और लक्ष्मण जी के साथ जल मरने का संकल्प-इन सब का लक्ष्मण जी को बाद में जब पता चला होगा तब श्री राम के प्रति उनके स्नेह में कैसी बाढ़ आई होगी ?

यह सब लक्ष्मण जी ने विशल्या को कहा नहीं होगा क्या ? तब विशल्या लक्ष्मण जी के विचारों से सहमत नहीं हुई होगी क्या ?

विशल्या के मन का समाधान हो गया। रात्रि का अन्तिम प्रहर था। प्रभात होते ही प्रयाण करना था। लंका के राजमहालय में चौथे प्रहर के घंटे बजे।

प्रयाण के दिन का प्रभात हुआ। सारी लंका अपने प्राण प्यारे अतिथि को विदा देने के लिये राज प्रासाद के आगे उमड़ पड़ी।

पुष्पक विमान तैयार था। परिवार सहित श्रीराम, लक्ष्मण और सीता पुष्पक विमान में आरूढ़ हुए।

श्रीराम, लक्ष्मण और सीताजी के जयनादों से गगन मंडल गूंज उठा और पुष्पक विमान ने अयोध्या का मार्ग पकड़ा।

सीताजी के मुख पर तब युद्ध के पश्चात् मुक्ति का कितना आनन्द, उल्लास, और उमंग उभर आया होगा—उसका वर्णन ग्रन्थों में नहीं मिलता। वह वर्णन का विषय ही नहीं न!



आजीवन सदस्य

१. श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ — जयपुर
२. श्री विश्व शांति प्रकाशन C/o
   श्री संपतराजजी लूंकड — शोलापुर
३. श्री भेरुबाग जैन संघ सरदारपुरा — जोधपुर
४. श्री शांतिलालजी बाफना C/o बाफना बुक डिपो जयपुर
५. श्री पूनमचंदजी हरीशचन्द्रजी वेडर — जयपुर
६. गुप्त एक सदगृहस्थ — जयपुर
७. श्री फोजमल कपुरचंद — दावणगीरी

मानद सदस्य

८. श्री गोडीदासजी ढड्ढा हल्दियों का रास्ता — जयपुर
९. श्री केसरी सिंह जी उमरावमलजी पालेचा — ,,
१०. श्री गुजराती बहनें C/o श्री मनसुख भाई लीलागरजी ,,
११. श्री एम० मिलापचंद — मद्रास
१२. श्री चांदसिंहजी फतेहसिंहजी कर्नावट — जयपुर
१३. श्री आचार्य चन्द्रकांति सागर (कमल नयन) — अलवर
१४. श्री धर्माजी लखमाजी डोड्डा पेट — दावणगीरी
१५. श्री पूनमचंद चम्पकलाल ,, — ,,
१६. श्री जे० कपुरचंद विजय लक्ष्मी रोड़ — ,,
१७. श्री पारसमलजी शर्राफ — बिलाडा
१८. श्री तेजराजजी भंसाली — पिपाड़
१९. श्री भैरूसिंहजी मेहता — बिलाड़ा
२०. श्री लक्ष्मणचंदजी चोपरा — मद्रास
२१. श्री मोहनराजजी [illegible] — बम्बई

२२. श्री कटारिया प्रोडक्ट्स जयपुर
२३. श्री बुद्ध सिंहजी हीराचन्दजी वैद ,,
२४. श्री कुन्दनमलजी पालीवाले भीवंडी
२५. श्री जादवजी लल्लुभाई सायन
२६. श्री अमरचंदजी सोवाचंदजी वम्वई १६
२७. श्री जी. वी. सिंघी एन्ड कं० वम्बई २
२८. श्री आर. सुरेश एन्ड कं० वम्वई २

पंचवर्षीय

२९. श्री सुघार चंदजी धीरजलालजी पारीख जयपुर
३०. ,, जीतमलजी शाह जयपुर
३१. ,, उगमराज गजराज एन्ड कं० पाली
३२. ,, वावूलालजी मनीलालजी मोदी जयपुर
३३. ,, हीराचंदजी रतनचंदजी कोचर ,,
३४. ,, रीषभचंदजी मेहता ,,
३५. ,, गोरधन चंदजी महावीर चंदजी भंडारी जोधपुर
३६. ,, अचल चंदजी चमनाजी जैन पिंडवाड़ा वाले जयपुर
३७. ,, मानक चंदजी सतीश कुमारजी पंजावी जालंधर
३८. ,, गुलाब चंदजी महेमवाल अजमेर
३९. ,, टोडरमलजी नाहर जोधपुर
४०. ,, तेजराजजी सुशीलचंदजी सिंघी जयपुर
४१. ,, डायाभाई अमृतलाल एन्ड कं० अहमदावाद
४२. ,, उदयचंदजी मेहता जयपुर
४३. ,, राजमलजी सिंघी ,,
४४. ,, कवरलालजी वाफना जयपुर
४५. ,, हस्तीमलजी गोलेछा एन्ड सन्स जोधपुर
४६. ,, पदमचंदजी हंसराजजी मुलतानवाले जयपुर

४७.	श्री रतीलाल मोहनलालशाह	मुजपुर
४८.	„ चन्द्रकला शाह	जयपुर
४९.	„ फूलचंदजी अमरचंदजी संचेती	कोला
५०.	„ पदमचंदजी कमलचंदजो जड़िया	जयपुर
५१.	„ भमरलालजी मोतीलालजी मेहता	„
५२.	„ मोतीचंदजी चोरडीया	„
५३.	„ जतनमलजी नुणावत	„
५४.	„ निरजन चंदजी भंडारी	„
५५.	„ संतोक चंदजी सोभाग्य चंदजी लोढा	„
५६.	„ सागर चंदजी पंजाबी	„
५७.	„ मांगीलालजी भंसाली	„
५८.	„ मोहनलालजी जैन	कोटा
५९.	„ भंवरलालजी श्री माल	ग्वालियर
६०.	„ अभयमलजो सिंघी	जयपुर
६१.	„ गुप्त हस्ते श्री हीराचंदजी वैद	„
६२.	„ गोपीरामजी मुन्नानवाले	„
६३.	„ कन्हैयालालजी सुराणा	„
६४.	„ हुकमचन्दजी नाहर	„
६५.	„ सुनीलकुमारजी मनोजकुमारजी	„
६६.	„ गुलाब चंदजी दुकलीया	„
६७.	„ शांतिलाल एन्ड ब्रदर्स	„
६८.	„ केशरीमलजी टेवाली वाले	पाली
६९.	„ फतेहचंदजी हरखचंदजी गोढा	जयपुर
७०.	„ फूलचन्दजी सिंघी	जोधपुर
७१.	„ कस्तूरचन्दजी मोतीलालजी भडकतिया	जयपुर
७२	„ कन्हैयालालजी शाह	„
७३.	„ प्रकाशचंदजी लक्ष्मीचंदजी ओरुरी	„

७४.	श्री	ठाकुरदासजी केवलरामजी	,,
७५.	,,	किशोरीलालजी मुलतानवाले जौहरी	,,
७६.	,,	सिदारामजी तीर्थदासजी मुलतान वाले	,,
७७.	,,	अमरचंदजी धर्मचंदजी नाहर	,,
७८.	,,	सोहनराजजी मेहता	,,
७९.	,,	किशोरीलालजी मेहता	ब्यावर
८०.	,,	पूनमचंदजी हीराचंदजी कोठारी	जयपुर
८१.	,,	जसवंतराजजी सांड़	,,
८२.	,,	चांदमलजी बच्छावत	,,
८३.	,,	जतनचंदजी मेहता	,,
८४.	,,	नोनदसिंहजी गुमानसिंहजी कर्नावट	,,
८५.	,,	फूलचंदजी नरेन्द्रकुमारजी पसारी	,,
८६.	,,	नानुलालजी बया	,,
८७.	,,	कपिलभाई केशवलालजी शाह	,,
८८.	,,	ज्ञानचंदजी सुभाषचंद छजलानी	,,
८९.	,,	मनोहरलालजी सुरेन्द्रकुमारजी झाबक	फलौदी
९०.	,,	बाबुलालजी तरसेम कुमारजी पंजाबी	जयपुर
९१.	,,	मदनराजजी खींवसरा	गोवींदगढ
९२.	,,	कनकमलजी नथमलजी मेहता	,,
९३.	,,	शान्तिचंदजी पारख	जोधपुर
९४.	,,	झन्डुरामजी चेलारामजी	जयपुर
९५.	,,	पूनमचंदजी नगीनदासजी जौहरी	,,
९६	,,	विमलकांत देसाई	,,
९७.	,,	गोपीचंदजी चोरडीया	,,
९८.	,,	सरदारमलजी भागचंदजी छाजेड	जयपुर
९९.	,,	कुशलराजजी सिंघी सोजतवाले	,,
१००.	,,	डायालाल नरोत्तम शाह	,,

१०१. श्री डा० मनुभाई सोमचंद शाह ,,
१०२. ,, केसरीमलजी सिंघी ,,
१०३. ,, नेमीचंदजी मेहता ,,
१०४. ,, लक्ष्मीचंदजी किरणचंदजी पालावत अलवर
१०५. ,, मिलापचंदजी रूपचंदजी मेहता जयपुर
१०६. ,, केवलचंदजी मेहता जलौरवाले ,,
१०७. ,, लक्ष्मीचन्दजी जोधपुर वाले अलवर
१०८. ,, ओसवाल जनरल स्टोर्स ,,
१०९. ,, प्रतापसिंहजी लोढा उदयपुरवाले जयपुर
११०. ,, शिखरचन्दजी पालावत ,,
१११. ,, आतमचन्दजी भंडारी ,,
११२. ,, शान्तीलालजी पदमाजी बागरा
११३. ,, माणेकचन्दजी देशलड़ा केकड़ी
११४. ,, नेमीचन्दजी कोठारी ,,
११५. ,, मांगीलालजी डांगी ,,
११६. ,, हेमचन्दजी तातेड ,,
११७. ,, दीपचन्दजी रूपावत ,,
११८. ,, ताराचन्दजी धुप्या ,,
११९. ,, सुरेशचन्द्र मेहता पाली
१२०. ,, चुन्नीलालजी देसाजी लोनावला
१२१. ,, गोपीनाथजी जैन जयपुर
१२२. ,, रिखबचन्द जैन (अध्यापक) जोधपुर
१२३. ,, जी. डी. सिंघवी बोम्बे
१२४. ,, भंवरलालजी एडवोकेट ब्यावर
१२५. ,, पारसमलजी चपलावत आगरा
१२६. ,, चेतनदासजी शीतलदासजी मुलतानवाले जयपुर
१२७. ,, डा. जवाहरलालजी चोरडीया ,,

१२८. श्री गोपालदासजी राजेन्द्र कुमारजी ,,
१२९. ,, सेसमलजी चांदमलजी गाँधी अहमदनगर
१३०. ,, पारसमलजी चुन्नीलालजी नोवो
१३१. ,, रिखबचन्दजी फूलचन्दजी दावणगीरी
१३२. ,, नोपचन्दजी मोतीजी ,,
१३३. ,, मगनलालजी फूलचन्दजी ,,
१३४. ,, अंबिका स्टोर्स ,,
१३५. ,, फोजमलजी कालूरामजी ,,
१३६. ,, बाबूलालजी कस्तूरजी ,,
१३७. ,, गेनमलजी सांकलचन्दजी ,,
१३८. ,, महावीर होल सेल क्लोथडोपो ,,
१३९. ,, पीतालालजी मणीलालजी ,,
१४०. ,, भवुतमलजी प्रेमचन्दजी ,,
१४१. ,, छगनलालजी मगनलालजी ,,
१४२. ,, जयंतिलालजी जेठमलजी ,,
१४३. ,, मानाजी भवुतमलजी ,,
१४४. ,, हीरालाल एन्ड ब्रदर्स ,,
१४५. ,, वेलचंदजी दोलाजी ,,
१४६. ,, चुन्नीलालजी तलकाजी ,,
१४७. ,, झवेरचन्दजी शंकरलालजी ,,
१४८. ,, एस. गुलाबचंद ,,
१४९. ,, भवुतमलजी ओंकारमलजी ,,
१५०. ,, जेताजी फूलचन्दजी ,,
१५१. ,, धरमचन्दजी भवुतमलजी ,,
१५२. ,, नथमलजी मंगलचन्दजी जयपुर
१५३. ,, चांदमलजी एडवोकेट जेतारण
१५४. ,, हजारीमलजी वरदानी बालदीया तखतगढ

१५५.	श्री कालुरामजी वाफना	वालाघाट
१५६.	„ जतनमलजी गोलेच्छा	कलकत्ता
१५७.	„ सुरपतसिहजी कर्नावट	बीकानेर
१५८.	„ चम्पालालजी संकलेचा	जोधपुर
१५९.	„ मेघराजजी मनाजी	दावणगीरी
१६०.	„ सरदारमलजी कस्तूरचन्दजी	„
१६१.	„ भुरमल C/o श्री दलोचन्द शांतिलाल पालडीवाले	„
१६२.	„ दलेलसिहजी विजयसिहजी पालावत	दिल्ली
१६३.	„ वासुपुज्य जैन पेढी	सुमेरपुर
१६४.	„ हस्तीमलजी नगराजजी वाफना	भीनमाल
१६५.	„ वालचन्दजी नेनमलजी जैन	वम्बई
१६६.	„ दानमलजी वस्तीमलजी	भीनमाल
१६७.	„ दोपी मेघराजजी संपतराजजी	„
१६८.	„ वेलचन्दजी जसाजी	
१६९.	„ एस. वी. सोलंकी	वोम्वे
१७०.	„ मोहनलाल जे. पोरवाल	„
१७१.	„ भीकाजी नवलाजी	तखतगढ
१७२.	„ घेवरचन्दजी जैन	राजामुंद्री
१७३.	„ वस्तीमलजी कहाजी	भीनमाल
१७४.	„ पारसमलजी हिम्मतमलजी पोरवाल	जालोर
१७५.	„ भंडारी सिलेराजजी पुखराजजी	„
१७६.	„ विश्वराज सिमरथराज जैन	सांगली
१७७.	„ केसरीमलजी पूनमचन्दजी	फिरोजाबाद
१७८.	„ तिलोकचन्द परतापजी	सरत
१७९.	„ आंध्रप्रदेश जैन महासभा	अमलापुरम
१८०.	„ आंध्रप्रदेश जैन महासभा	राजामुंद्री
१८१.	„ घेवरचन्द हजारीमलजी	आहोर

१८२.	श्री संतोकचन्दजी भंडारी	जयपुर
१८३.	,, फूलचन्दजी उदयचन्दजी वैद	फलोदी
१८४.	,, फतैहमलजी मोहनलालजी	उटकमंड
१८५.	,, मोहनलालजी आहोरवाले	वम्बई
१८६.	,, ओटरमलजी फोजमलजी	शीवगंज
१८७.	,, ओटाजी चुन्नीलाल	,,
१८८.	,, परमार क्लोथ स्टोर्स	लोनावला
१८९.	,, रायचन्द वैद	तिरूपतूर
१९०.	,, हीराजी तिलोकचन्द एन्ड कं०	चित्रादुर्ग
१९१.	,, फूलचन्दजी कस्तुरजी	,,
१९२.	,, प्रवीणकुमार हजारीमलजी	,,
१९३.	,, बाबुलालजी हुकमीचन्दजी	,,
१९४.	,, धींगडमलजी मीठालालजी	,,
१९५.	,, हीराचंद जी घेवरचंद जी	,,
१९६.	,, भवरलालजी सांकलचन्दजी	,,
१९७.	,, भूरमलजी मिश्रीमलजी	,,
१९८.	,, छगनराजजी सरेमलजी	,,
१९९.	,, खुशालचन्दजी	चित्रादुर्गा
२००.	,, कृष्णजी अमीचन्दजी	,,
२०१.	,, शंकरभाई दादाभाई पटेल एन्ड के	सिमाद्रा
२०२.	,, पुरुषोत्तम किशनगोपालजी विरला	पाली
२०३.	,, वाबुलालजी निमाणी	फलोदी
२०४.	,, वादलचन्दजी प्रकाशचन्दजी भण्डारी	अजमेर
२०५.	,, आणंदजी कल्याणजी की पेढी	मद्रास
२०६.	,, नाथुलालजी भागचन्दजी	माटूंगा (बम्बई)
२०७.	,, भंवरलावजी धरमचन्दजी कोठारी	रींछेड
२०८.	,, भंवरलालजी भेराजी	माटुंगा (वम्बई)

२०९. श्री भवुतमलजी हजारीमलजी माहीम
२१०. „ मोडीलालजी मीयाचन्दजी „
२११. „ भुरालालजी मोतीचन्दजी कुरला
२१२. „ पन्नादासजी गांधीरामजी सीसोदिया „
२१३. „ मेघराजजी मगनलालजी „
२१४. „ देवीलाल लक्ष्मीलाल मेहता शान्ताक्रुज
२१५. „ रंगलाल रामलाल कुरला
२१६. „ मांगीलालजी उदयचन्दजी कोठारी „
२१७. „ पुनमचन्दजी किसनाजी मेहता कुरला (बम्बई)
२१८. „ मगनलालजी किसनाजी मेहता „
२१९. „ शंकरलाल शान्तिलाल एन्ड कं० धारावी बम्बई १७
२२०. „ सोहनराज शान्तिलाल „
२२१. „ महावीर क्लाथ स्टोर्स धारावी (बम्बई)
२२२. „ मुथामुकनचन्द दयारामजी समदडी (राजस्थान)
२२३. „ मेहता चन्दनकरण राजकरणजी धारावी (बम्बई)
२२४. „ जिनदत्तसूरि पुस्तकालय दादावाडी अजमेर
२२५. „ गुलाबकंवर ओसवाल, उच्च प्राथमिक कन्याशाला „
२२६. „ धनलाल के. शाह उसमानगंज हैदराबाद
२२७. „ अमृतलाल सोहनलाल सिंघी (सीरोही वाले) जयपुर
२२८. „ घेवरचन्द मोहनलाल चित्रादुर्गा
२२९. „ डी० मीठालाल कोठारी दावणगीरी

२३०.	श्री श्रीमती सुरजबाई w/o श्री गुमानमलजी चोरडीया	जयपुर
२३१.	,, भवरलालजी वैद C/o S. B. B. J.	,,
२३२.	,, साध्वीजी शुभ श्री जी व सज्जन श्री जी म. सा. जैन उपाश्रय	ब्यावर
२३३.	,, खीमचन्दजी देवीचन्दजी ग्रोवगंजवाले	जयपुर
२३४.	,, आचार्य श्री विजय भद्र कर सूरिश्वरजी	मद्रास
२३५.	,, केसरीमलजी रूपाजी	डुंगरी बोम्बे ६
२३६.	,, नथमलजी मंगलचन्दजी शाह हस्ते अशोक भंडारी	जयपुर
२३७.	,, हीराचन्दजी फोजमलजी गोरीया	जोजावर
२३८.	,, जैन नवयुवक मण्डल	पटना सिटी
२३९.	,, चान्दमलजी श्री माल बड़तल्ला स्ट्रीट	कलकत्ता ७
२४०.	,, गुलाबचन्दजी टांक जोहरी बाजार	जयपुर
२४१.	,, श्राविका तपागच्छ संघ हस्ते मदनबाई	,,
२४२	,, देवीजी सजुजी एन्ड कं० बाजार पेट	भीवंडी
२४३.	,, पो. बाबुलाल जैन टाकीज	भीवडी
२४४.	,, कान्तीलालजी बाबुलालजी	,,
२४५.	,, रिखबचन्दजी कपुरचन्दजी धामणकर नाका	,,
२४६.	,, जीवराज दुलीचन्दजी मेहता सान्ताक्रुज	बम्बई
२४७.	,, बाबुलाल कुन्दनमल एन्ड कं०	माटुंगा बम्बई
२४८.	,, भवरलालजी भेराजी रोछोडवाला	माटुंगा बम्बई
२४९.	,, मेघजी जीवराज शाह	हैदराबाद

२५०.	श्री भवुतमलजीभवरलालजी एण्ड कं.	फीरोजाबाद
२५१.	,, शान्तिलालजी लुम्बजी कोठारी	गदग
२५२.	,, धनराजजी कटारीया C/o महावीर ट्रेडींग कं०	बेल्लारी
२५३.	,, ताराचन्दजी चोरडीया हीमायत नगरहैदराबाद २९	
२५४.	,, केवलचन्दजी पन्नालालजी	चन्नपट्टन
२५५.	,, सुगनचन्द चैनचन्द छल्लानी	सिकंद्राबाद
२५६.	,, समीरमलगोठी सराया बाजार	इटारसी
२५७.	,, सरदारमलजी लुणावत	जयपुर

उदयपुर शाखा के अन्तर्गत
आजीवन सदस्य

२५८.	श्री	विजयसिंहजी सिंघवी	उदयपुर
२५६.	,,	जैन श्वेताम्बर मूर्तिपूजक संघ	,,

मानद सदस्य (उदयपुर शाखा)

२६०.	,,	रोशनलालजी बोल्या	,,
२६१.	,,	दिवानसिंहजी बोतलालजी बाफना	,,
२६२.	,,	गरणपतसिंहजी कोठारी	,,
२६३.	,,	हरनाथसिंहजी मेहता	,,
२६४.	,,	ख्यालीलालजी सुन्दरलालजी सुराणा दलाल	,,
२६५.	,,	रोशनलालजी बोल्या	उदयपुर
२६६.	,,	दिवान सिंहजी बोतलालजी बाफना	,,

पंच वर्षीय सदस्य

२६७.	,,	भंवरलालजी रामपुरीया	पुरलीया
२६८.	,,	रोशनलालजी दशरडा	उदयपुर
२६६.	,,	सोहनलालजी दोलतरामजी सोनी	,,
२७०.	,,	करणसिंहजी कालुलालजी नाहर	,,
२७१.	,,	नानालालजी मनोहरलालजी	,,
२७२.	,,	प्रभुलालजी गोरधनलालजी दोशी	,,
२७३.	,,	भगवतीलालजी गहरीलालजी हुमड	,,
२७४.	,,	वर्धमानजैन ज्ञान मंदिर	,,
२७५.	,,	वीरचांदजी सिरोया	,,
२७६.	,,	अम्बालालजी तेज सिंहजी दोशी	,,
२७७.	,,	वसन्तीलालजी मोतीलालजी बाफना	,,
२७८.	,,	माणकचन्दजी पन्नालालजी जैन	,,
२७६.	,,	छगनलालजी कोठारी	,,

२८०. श्री शिवदानसिहजी चौपडा ,,
२८१. ,, किशोरीलालजी मोतीलालजी मेहता उदयपुर
२८२. ,, डा० मोहनसिहजी खाव्या ,,
२८३. ,, अजितनाथ जैन धर्मशाला ,,
२८४. ,, रामसिहजी चपलोत ,,
२८५. ,, कन्हैयालालजी मोगरा ,,
२८६. ,, मनोहरलालजी भण्डारी ,,
२८७. ,, रूपलालजी श्रीमाल ,,
२८८. ,, बलवन्तसिहजी उरजनलालजी बया ,,
२८९. ,, रूपलालजी कोठारी ,,
२९०. ,, चतरसिहजी गोरवाडा एडवोकेट ,,
२९१. ,, मनोहरसिहजी खाव्या ,,
२९२. ,, फतहलालजी मेहता ,,
२९३. ,, जैन श्वे० पेढो, केसरीयाजी ,,
२९४. श्रीमती चन्द्रकांता मेहता ,,
२९५. श्री उत्तमसिहजी बोतलालजी धुप्या ,,
२९६. ,, जीवनसिहजी भीमराजजी मेहता ,,
२९७. ,, बोतलालजी नाहर ,,
२९८. ,, रोशनलालजी लोढा ,,
२९९. ,, सुन्दरलालजी सिघटवाडीया ,,
३००. ,, संपतलालजी पुंजावत ,,
३०१. ,, राजेन्द्रकुमार रामसिह मेहता ,,
३०२. ,, जैन ब्रदर्स ,,
३०३. ,, कन्हैयालाल जैन लक्कडवासवाला ,,
३०४. ,, लक्ष्मीलालजी गोपाललालजी कर्णपुरोया ,,
३०५. ,, मीठालालजी जैन कलकत्ता स्टोर्स ,,
३०६. ,, उग्रसिहजी धर्मसिहजी मोरडीया ,,

३०७.	श्री शांतिलालजी गोटूलालजी दोषी	,,
३०८.	,, पद्मसिंहजी नवलसिंहजी सोनी	उदयपुर
३०९.	,, चतरभुजजी नारायणजी शराफ राजपूत	,,
३१०.	,, धनपतसिंहजी शोभालालजी मेहता	,,
३११.	,, धीमुलालजी कठारीया	पाली
३१२.	,, मनोहरसिंहजी गलुंडीया	उदयपुर
३१३.	,, जोधसिंहजी गलुंडीया	,,
३१४.	,, प्रकाशचन्द भण्डारी	,,
३१५.	,, कचरमलजी भवरलालजी पालेचा	,,
३१६.	,, बसन्तीलालजी माजमसिंहजी बाफना	,,
३१७.	,, रोशनलालजी सिंगटवाडीया	,,
३१८.	,, हिम्मतसिंहजी बाफना	,,
३१९.	,, लक्ष्मीलालजी माह	,,
३२०.	,, कन्हैयालालजी सिंघटवाडीया	,,
३२१.	,, फूलचन्दजी पारख	,,
३२२.	,, लक्ष्मीलालजी लोढा	,,
३२३.	,, बख्तावरमलजी चपलोत	,,
३२४.	,, पद्मचन्दजी बाफना	,,
३२५.	,, हीरालालजी डुंगरपुरीया	,,
३२६.	,, गोविन्दसिंहजी सिंघवी	,,
३२७.	,, सोहनलालजी सुराणा	,,
३२८.	,, रणजीतलालजी दोषी	,,
३२९.	,, पन्नालालजी बोलीया	,,
३३०.	,, उदयलालजी बालुलालजी गांधी	,,
३३१.	,, मनोहरलालजी सुगनलालजी मेहता	,,
३३२.	,, जगन्नाथसिंहजी मेहता	,,
३३३.	,, शांतीलालजी चेलावत	,,

३३४.	श्री फतेहलालजी सिंघवी	,,
३३५.	,, गोरधनलालजी पटवा	डूंगरपुर
३३६.	,, बाबुलालजी भंवरलालजी भटेवड़ा	विजयनगर
३३७.	,, बन्शीलालजी नारायणजी शोभावत	उदयपुर
३३८.	,, भवरलालजी चेलावत	,,
३३९.	,, करणसिंहजी चेलावत	,,
३४०.	,, हीरालालजी नाहर	,,
३४१.	,, हमेरमलजी मुरडीया	,,
३४२.	,, विजय सेनेट्री ट्रेडिंग कं०	,,
३४३.	,, कारूलालजी जैन	,,
३४४.	,, भंवरलालजी बलाई	पाली
३४५.	,, भुरीलालजी बसन्तीलालजी	उदयपुर
३४६.	,, हिम्मतसिंहजी पन्नालालजी दलाल	,,
३४७.	,, हस्तीमलजी घासीरामजी पोरवाल	,,
३४८.	,, मांगीलालजी लोढा	,,
३४९.	,, मोतीचन्दजी समदडीया	नागौर
३५०.	,, मोहनलालजी मारू	उदयपुर
३५१.	,, गीरजाबाई नागोरी	,,
३५२.	,, फतहलालजी बया	,,
३५३.	,, बी. सी. चौपड़ा	रतलाम
३५४.	,, खडगसिंहजी हिरन	उदयपुर
३५५.	,, कंचनबाई भेखीया	,,
३५६.	,, करणसिंहजी मुराणा	बारह चाकीया
३५७.	,, सज्जनसिंहजी मेहता	उदयपुर
३५८.	,, बसन्तीलालजी दलाल	,,
३५९.	,, प्राणलालजी कोठारी	,,
३६०.	,, मोहनलालजी रोशनलालजी भंसाली	,,

३६१. श्री खुबीलालजी बोल्या ,,
३६२ ,, जिनदासजी कोचर बीकानेर
३६३. ,, सिंघवी तेजमलजी चोथमलजी भीलवाड़ा
३६४. ,, वकील राजमलजी बोरदीया ,,
३६५. ,, चन्द्रसिंहजी माणेकलालजी मेहता उदयपुर
३६६. ,, रायमिश्रीमलजी गांधी हैदराबाद
३६७. ,, रामराजजी सिंघी जोधपुर
३६८. ,, सरवतचन्दजी प्रतापचन्दजी मेहता रावत भाटा कोटा
३६९. ,, नाहर ब्रदर्स भीलवाड़ा
३७०. ,, देवीलालजी लोढ़ा ,,
३७१. ,, जोरावरसिंहजी पोखाड ,,
३७२. ,, मंगलसिंहजी चपलोत (दिनेश) ,,
३७३. ,, महेन्द्रकुमारजी नीमडीया उदयपुर
३७४. ,, छोगालालजी सीरोया ,,
३७५. ,, केसरसिंहजी संग्रामसिंहजी चाकना ,,
३७६. ,, डालचन्दजी छाजेड़ ,,
३७७. ,, जीवनसिंहजी सुजानसिंहजी कोठारी ,,
३७८. ,, भोपालसिंहजी सिंघवी ,,
३७९. ,, मनोहरसिंहजी कोठारी ,,
३८०. ,, रतनचन्दजी पंचवटी वाले ,,
३८१. ,, लेहरसिंहजी फतेहलालजी खाब्या ,,
३८२. ,, मोहनलालजी छाजेड़ ,,
३८३. ,, अम्बालालजी हीरालालजीसोनी वेदला ,,
३८४. ,, कन्हैयालालजी पन्नालालजी तलेसरा ,,
३८५. ,, बी. एस. बागसी C/o मेवाड टेक्सटाइल भीलवाड़ा
३८६. ,, कंवरलालजी जैन ,,